आईएसओ 9001:2008 प्रमाणित संस्थान

13वां अंक

# मरु बागवाणी

## राजभाषा पत्रिका

## 2018–19

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर–334006 (राजस्थान)

भाकृअनुप
ICAR

CENTRAL INSTITUTE FOR ARID HORTICULTURE
के शु बा सं

# भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान

## शुष्क क्षेत्र बागवानी को समर्पित संस्थान

### मुख्य ध्येय

1 शुष्क एवं अर्धशुष्क बागवानी फसलों में टिकाऊ उत्पादकता और गुणवत्ता व उपयोग बढ़ाने के लिए आधारभूत, नीतिगत और व्यावहारिक अनुसंधान करना।

2 शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र की बागवानी फसलों का 'आनुवंशिक संसाधन एवं वैज्ञानिक जानकारी' का भण्डार।

3 प्रौद्योगिकियों के प्रभावों का आकलन, तकनीकी हस्तांतरण और क्षमता संधारण।

4 शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र की फल फसलों से संबंधित प्रौद्योगिकियों की पुष्टि और समन्वित अनुसंधान।

### संस्थान द्वारा शुष्क क्षेत्रीय फल व सब्जियों की विकसित उन्नत किस्में

| फल | |
|---|---|
| बेर | थार सेविका, थार भुभराज, गोमा कीर्ति, थार मालती |
| आंवला | गोमा ऐश्वर्या |
| बेल | गोमा यशी, थार दिव्या, थार नीलकंठ |
| अनार | गोमा खट्टा (अनारदाना) |
| जामुन | गोमा प्रियंका, थार क्रांति |
| इमली | गोमा प्रतीक |
| लसोड़ा | थार बोल्ड |
| चिरोंजी | थार प्रिया |
| खिरनी | थार रितुराज |
| करोंदा | थार कमल |
| शहतूत | थार लोहित, थार हरित |
| महुवा | थार मधु |
| फालसा | थार प्रगति |
| कैथ | थार गौरव (मुडणाल) |
| **सब्जियां** | |
| मतीरा | एएचडब्लू–19, एएचडब्लू–65, थार माणक |
| लौकी | थार समृद्धि |
| काचरी | एएचके–119, एएचके–200 |
| फूटककड़ी (स्नेपमेलोन) | एएचएस–10, एएचएस–82 |
| ककड़ी | एएचसी–2, एएचसी–13 |
| खेजड़ी | थार शोभा |
| ग्वारफली | गोमा मंजरी, थार भादवी (एएचजी–13) |
| स्वार्डबीन | थार माही |
| सेम फली | थार कार्तिकी, थार माघी |
| तोरई | थार करणी |
| बैंगन | थार रचित |
| तर ककड़ी | थार शीतल |
| सहजन | थार हर्षा |
| कद्दू | थार कवि |
| चिकनी तोरई | थार तपिश |
| कुंदरू | थार सुंदरी |
| पालक | थार हरिपर्णा |

**उन्नत प्रजातियों के बीज व पौधों हेतु सम्पर्क करें–**


**निदेशक**

**भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान**

बीछवाल, बीकानेर–334006

दूरभाष– 0151–2250960 फेक्स– 0151–2250145 ई–मेल ciah@nic.in, वेब ciah.ernet.in

13वां अंक

आईएसओ 9001:2008 प्रमाणित संस्थान

# मरु बागवाणी

## राजभाषा पत्रिका

(2018–19)

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर–334006 (राजस्थान)

## त्रयोदशम् अंक

वर्ष 2017–18

## प्रकाशक

**प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज**

निदेशक

**भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान**

बीकानेर–334006 (राज.)

दूरभाष: 0151–2250147, 2250960 फैक्स: 0151–2250145

ई–मेल: ciah@nic.in

वेबसाईट: www.ciah.icar.gov.in

## प्रधान सम्पादक

प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज

## कार्यकारी सम्पादक

प्रेम प्रकाश पारीक

## सह–सम्पादक

डॉ. पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह

डॉ. अनिता मीणा

## शब्द संधारण/परिकल्पना और छायांकन

श्री महावीर कुमार जैन

श्री संजय पाटिल

## प्रारुपण एवं मुद्रण

मै. रॉयल ऑफसेट प्रिन्टर्स, ए–89/1, नारायणा औद्योगिक क्षेत्र, फेस–1, नई दिल्ली–110028

---

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में विचार लेखकों के अपने हैं। इन विचारों के लिए प्रकाशक अथवा सम्पादक मण्डल किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं हैं।

# अनुक्रमणिका


| क्र सं. | विषय | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 1. | संस्थान में राजभाषा गतिविधियां –प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज एवं श्री प्रेम प्रकाश पारीक | 3 |
| 2 | कृषि अनुसंधान में भारतीय भाषाओं का महत्व<br>–डॉ. अंजेश कुमार एवं डॉ. एम. जेड. सिद्दीकी | 8 |
| 3 | बारिश की बूंद– कविता –प्रीतम सिंह | 11 |
| 4 | पिता का साया– कविता –श्रीमती सुनिता सोनगरा | 11 |
| 5 | बचपन – कविता –श्रीमती रूपा सिंह | 12 |
| 6 | मैं स्त्री हूँ और भारत भूमि का आत्मकथ्य –कविताएं –डॉ. कृष्णा आचार्य | 12 |
| 7 | केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान– एक सफल यात्रा<br>–प्रो. (डॉ.) पी.एल. सरोज एवं डॉ. अजय कुमार वर्मा | 13 |
| 8 | खजूर उत्पादन में परागण का महत्व –आर.एस.सिंह एवं रामकेश मीणा | 25 |
| 9 | राजस्थान के शुष्क पारिस्थितिकी क्षेत्र में अनार उत्पादन की विधि<br>–डॉ. रामकेश मीणा एवं डॉ. डी. के. सरोलिया | 28 |
| 10 | उन्नत तकनीक से सीताफल की खेती<br>–डॉ. पवन कुमार पारीक, डॉ. पी के यादव एवं श्री रोहताश कुमार | 32 |
| 11 | थार गौरव : कैंथ की नयी उच्च उत्पादन प्रजाति<br>–डॉ. एस. एस. हिवाले, डॉ. विकास यादव, डॉ. ए.के. सिंह, डॉ. वी. वी. अप्पाराव,<br>डॉ. संजय सिंह और प्रो. पी. एल. सरोज | 35 |
| 13 | नींबू वर्गीय फलों की व्यावसायिक खेती<br>श्री चेतक बिश्नोई, श्री जगन सिंह गोरा, श्री रमेश कुमार एवं श्री रूपचंद बलाई | 38 |
| 12 | पश्चिमी राजस्थान की शुष्क फल–फसलों में फटन के कारण एवं निवारण<br>–डॉ. रामकेश मीना, डॉ. दीपक सरोलिया, डॉ. विजय राकेश रेड्डी एवं<br>प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज | 41 |
| 14 | तर–ककड़ी उत्पादन की प्रौद्योगिकी –डॉ. बी.आर. चौधरी, डॉ. एस.एम. हलधर<br>एवं डॉ. एस.के. माहेश्वरी | 44 |
| 15 | अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में कुंदरू की खेती<br>–डॉ. लालू प्रसाद यादव डॉ. गंगाधर के., डॉ. संजय सिंह व डॉ. पी. एल. सरोज | 47 |
| 16 | फूट ककड़ी फसल एवं बीज उत्पादन तकनीकी<br>–डॉ. दिलीप कुमार समादिया एवं श्री पी.पी पारीक | 51 |
| 17 | चवलाफली (लोबिया) की उत्पादन प्रौद्योगिकी<br>–डॉ. अजय कुमार वर्मा एवं डॉ. डी. के. समादिया | 57 |
| 18 | शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्र में बैंगन की प्रमुख बीमारियाँ एवं उनका एकीकृत प्रबंधन<br>–डॉ. सुशील कुमार माहेश्वरी, सुश्री राम्याश्री देवी, डॉ. बी. आर. चौधरी,<br>डॉ. पी. पी. सिंह एवं प्रो. पी. एल. सरोज | 60 |

| क्र सं. | विषय | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 19 | वर्षाकाल में करेला उगाए –प्रज्ञा सिंह एवं ओमपाल सिंह | 64 |
| 20 | गोभी वर्गीय सब्जियों की जैविक खेती<br>–कुमारी लता एवं डॉ. प्रमोद कुमार यादव | 66 |
| 21 | वर्षा ऋतु में भिण्डी की खेती –डॉ. श्रवण कुमार यादव | 70 |
| 22 | शुष्क क्षेत्रों में बागवानी का सतत विकास एवं उसका महत्व<br>–डॉ. शिवराम मीना, श्री रूपचंद बलाई एवं श्री प्रेम प्रकाश पारीक | 72 |
| 23 | बारानी क्षत्रों में वैज्ञानिक विधि से सफल बाग लगाएं<br>–श्री चेतक बिश्नोई, श्री जगन सिंह गोरा, श्री रमेश कुमार एवं श्री रूपचंद बलाई | 76 |
| 24 | बदलते परिप्रेक्ष्य में बीजीय मसालों में खड़ी खेती की उपयोगिता<br>–डॉ. शिव लाल, डॉ. गोपाल लाल एवं डॉ. सुमेर सिंह मीना | 79 |
| 25 | मेहंदी की खेतीः कम और अनिश्चित वर्षा क्षेत्रों में आय का एक अच्छा स्रोत<br>–डॉ. दीपक कुमार गुप्ता, डॉ. ए. के. शुक्ल, डॉ. कीर्थिका ए., डॉ. एम बी नूर मुहम्मद एवं डॉ. बी. एल. जाँगिड | 82 |
| 26 | जल की रक्षा – कल की सुरक्षा –डॉ. कनक लता | 86 |
| 27 | कृषि का वर्तमान स्वरुप, नैसर्गिक खेती की आवश्यकता एवं जैविक खाद बनाने की देशी विधियां<br>–डॉ. आर.के. झाड़े, डॉ. ए.के. वर्मा, डॉ. पी.एल. अम्बुलकर, डॉ. डी.सी. श्रीवास्तव, डॉ. एस.डी. सावरकर एवं डॉ. सुरेंद्र पन्नासे | 89 |
| 28 | जैव–उर्वरकों के उपयोग का कृषि में महत्व<br>–डॉ. आर. सी. साँवल, डॉ. दयानन्द, कु. रेखा रैगर एवं श्री सी., एल. मीणा | 92 |
| 29 | बूंद–बूंद सिंचाई साधनों की देखरेख एवं रखरखाव<br>–सुश्री कोमल शेखावत, श्री अनिल कुमार, सुश्री स्वर्णलता कुमावत एवं सुश्री शीतल यादव | 94 |
| 30 | मृदा परीक्षण क्यों व कैसे करें<br>–बसु देवी यादव, कैलाश चन्द यादव, शीतल यादव | 96 |
| 31 | कम्पोस्ट खाद कैसे बनाएं<br>–श्री सी., एल. मीणा, डॉ. आर. सी. साँवल, डॉ. दयानन्द, कु.रेखा रैगर, | |
| 32 | किसानों की आय बढ़ोतरी में स्मार्टफोन का योगदान –डॉ. अनिता मीणा | 101 |

नरेन्द्र सिंह तोमर
**NARENDRA SINGH TOMAR**

सत्यमेव जयते

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री
भारत सरकार
**MINISTER OF AGRICULTURE**
**& FARMERS WELFARE**
**GOVERNMENT OF INDIA**

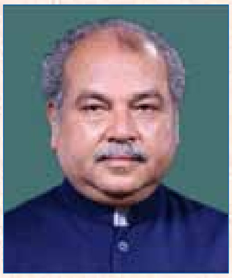

# संदेश

भारत सरकार के कृषि एवं किसान मंत्रालय के विभाग पूर्ण रूप से किसानों के विकास के लिए समर्पित हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् उनमें से एक विभाग है जो कृषि के क्षेत्र में देशभर में फैले अपने विभिन्न अनुसंधान संस्थानों के माध्यम से नई कृषि तकनीकियां विकसित कर उन्हें किसानों तक पहुँचाते हैं। परिषद् ने कृषि एवं कल्याण मंत्रालय के सहयोग से विभिन्न कार्यक्रमों जैसे– प्रयोगशाला से खेतों तक, मेरा गांव–मेरा गौरव, संकल्प से सिद्धि तक, सायल हैल्थ कार्ड स्कीम, आदि अन्य योजनाओं के माध्यम से किसानों को जोड़ा है और अनुसंधान से विकसित तकनीकियों का सीधा लाभ उन तक पहुँचाया है। कृषि में नित नए प्रयोगों की आवश्यकता दिनों–दिन बढ़ती जा रही है, इसमें विज्ञान व वैज्ञानिकों की भूमिका अहम् होती है। अनुसंधान कार्यों को खेतों व किसानों तक पहुँचाने में भाषा एवं साहित्य का भी अपना महत्व होता है। इस अनूठे मेल से अनुसंधान की सार्थकता चरितार्थ होती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संस्थानों द्वारा किए जा रहे अनुसंधान कार्यों को जन साधारण तक पहुँचाने में भाषा का स्थान भी प्रबल है। इसमें हिन्दी भाषा सर्वोपरि कही जा सकती है। भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने राजभाषा पत्रिका ''मरु बागवाणी'' के माध्यम से किसानों को बागवानी अनुसंधानों की लाभप्रद व रोचक भाषा में जानकारी देने का जो कार्य किया है वह सराहनीय है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि इस पत्रिका के माध्यम से शुष्क बागवानी के विकास में मदद मिलेगी तथा साथ ही राजभाषा के क्षेत्र में भी प्रगति के अवसर बढ़ेंगे।

पत्रिका के इस अंक के लिए सभी को मैं को बधाई देता हूँ ।

दिनांक :

**(नरेन्द्र सिंह तोमर)**

कैलाश चौधरी
KAILASH CHOUDHARY

सत्यमेव जयते

राज्य मंत्री
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
भारत सरकार
Minister of State For Agricultur
Farmers welfare
Government of India

# संदेश

कृषि में विज्ञान का महत्व है। विज्ञान और अनुसंधान एक दूसरे के पूरक हैं। कृषि में नित नए प्रयोगों की आवश्यकता दिनों–दिन बढ़ती जा रही है, इसमें विज्ञान व वैज्ञानिकों की भूमिका अहम् होती है। अनुसंधान कार्यों को खेतों व किसानों तक पहुँचाने में भाषा एवं साहित्य का भी अपना महत्व होता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संस्थानों द्वारा किए जा रहे अनुसंधान कार्यों को जन साधारण तक को पहुँचाने में भाषा का स्थान भी प्रबल है। इसमें हिन्दी भाषा सर्वोपरि कही जा सकती है।

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी'' के माध्यम से किसानों को बागवानी अनुसंधानों की लाभप्रद व रोचक भाषा में जानकारी देने का जो कार्य किया जा रहा है वह सराहनीय है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि इस पत्रिका के माध्यम से शुष्क बागवानी में हो रहे कार्यों की जानकारी सभी को प्राप्त होगी इससे शुष्क बागवानी के साथ –साथ राजभाषा की भी प्रगति होगी। पत्रिका के इस अंक के लिए सभी को मैं बधाई देता हूँ ।

दिनांक : 13 अगस्त, 2019

**(कैलाश चौधरी)**

त्रिलोचन महापात्र, पीएच.डी.
एफ एन ए, एफ एन ए एस सी, एफ एन ए ए एस
सचिव एवं महानिदेशक

**TRILOCHAN MOHAPATRA, Ph.D.**
FNA, FNASc, FNAAS
SECRETARY & DIRECTOR GENERAL

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली 110 001

**GOVERNMENT OF INDIA**
**DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION**
**AND**
**INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH**
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS WELFARE
KRISHI BHAVAN, NEW DELHI 110 001
Tel.: 23382629; 23386711 Fax: 91-11-23384773
E-mail: dg.icar@nic.in

# संदेश

मुझे यह जानकर अति प्रसन्नता हुई है कि भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा राजभाषा पत्रिका ''मरु बागवाणी'' का प्रकाशन किया जा रहा है। इस राजभाषा पत्रिका के माध्यम से हिन्दी भाषी प्रदेशों में कृषि विशेषकर बागवानी के नवीनतम तकनीकों से जुड़ी उपयोगी जानकारी को किसानों व बागवानी उत्पादकों तक सीधे पहुंचाने में मदद मिलेगी। इससे ''वर्ष 2022 तक किसानों की आय को दोगुना करना'' के संकल्प को साकार करने की दिशा में प्रगति होगी। विज्ञान तक किसानों की पहुंच को सुनिश्चित करने में इस प्रकार के प्रयास निःसंदेह सराहनीय हैं।

पत्रिका की सफलता के लिए हार्दिक शुभकामनाएं

त्रि. महापात्र

दिनांक : 06 अगस्त, 2019

(टी. महापात्र)

**डॉ. आनन्द कुमार सिंह**
उप महानिदेशक (बागवानी विज्ञान)
बागवानी विज्ञान संभाग

Dr. Anand Kumar Singh
Deputy Director General (Hort. Sci.)
Horticultural Science Division

**भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद**
कृषि अनुसंधान भवन–II
पूसा, नई दिल्ली –110 012

INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI ANUSANDHAN BHAWAN-II
PUSA, NEW DELHI-110 012
दूरभाष सं.: 91-11-25841976, फैक्स न.: 91-11-25841976
Ph.: 91-11-25842068(O), Fax: 91-11-25841976
E-mail: ddghort@gmail.com; aksingh36@yahoo.com

# संदेश

कार्य का निष्पादन और उसका प्रसारण दोनों किसी कार्य के परिणाम की महत्वपूर्ण कड़ियां होती हैं। अनुसंधान कार्य जितना जटिल है उतना ही जटिल इसे जन साधारण को सुलभ करवाना भी है। इसे प्रचारित करवाने में एक माध्यम वहां बोली जाने वाली भाषा भी होती है। भारत में बोली और भाषा का माध्यम सशक्त और विविधता लिए है। हमारी राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी है। राजभाषा को बढ़ावा देना हमारा संवैधानिक दायित्व है। भारतीय कृषि अनुसधान परिषद के संस्थान विभिन्न हिन्दी प्रकाशनों के माध्यम से भी इस दायित्व का निर्वाह करते हैं।

इसी को सार्थक करती हुई भाकृअनुप–केशुबासं, बीकानेर की राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' है जो नियमित रूप से नए कलेवर में प्रकाशित होती रहती है। पत्रिका के इस अंक के लेखों की विविधता अच्छी है और सभी प्रकार के विषयों को इसमें समाहित किया गया है जो प्रशंसनीय है। मैं संस्थान को इसके लिए बधाई देता हूँ।

अगस्त, 2019

**(आनन्द कुमार सिंह)**

**सीमा चोपड़ा**
**Seema Chopra**


निदेशक (राजभाषा)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि भवन, नई दिल्ली–110011

DIRECTOR (Official Language)
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI-110 011


# संदेश

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा प्रकाशित की जा रही राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' के इस नवीन अंक के प्रकाशन के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं। शुष्क बागवानी में विशिष्ट फल–सब्जियों की खेती होती है जिनके लिए जल की आवश्यकता कम से कम रहती है। जल की कमी सम्पूर्ण विश्व के लिए आज चिंता का विषय है। ऐसे में शुष्क बागवानी की महता और अधिक बढ़ जाती है। शुष्क बागवानी में हो रहे अनुसंधान कार्यों के परिणामों को राजभाषा हिन्दी के माध्यम से जानकारी में लाना 'मरु बागवाणी' पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है। इस अंक में चुने गए विषय अच्छे और उपयोगी है, जिसके लिए मैं लेखकों, संपादक मंडल एवं प्रकाशक को धन्यवाद देना चाहती हूँ। मुझे खुशी है कि यह पत्रिका उत्तरोत्तर अच्छे स्वरूप में प्रकाशित होती रही है और शुष्क बागवानी और राजभाषा दोनों की प्रगति में यह सहायक होगी, यही मेरी कामना है।

इस पत्रिका के उज्जवल भविष्य की कामना के साथ इसकी सफलता की भी आशा करती हूँ।

दिनांक : 8 अगस्त, 2019

**(सीमा चोपड़ा)**

**प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज**

**निदेशक**
**भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान**
बीछवाल, बीकानेर (राजस्थान)
ई मेलः ciah@nic.in
दूरभाषः 0151 2250147 फैक्सः 0151–2250145

# संदेश

संवैधानिक दायित्व के रूप में हिन्दी भाषा को बढ़ावा देने के लिए अनेकों प्रयास किए जाते हैं। हिन्दी में साहित्य प्रकाशन का कार्य भी इसी का रूप होता है। यह संस्थान भी हिन्दी की प्रगति में राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' का प्रकाशन कुछ वर्षों से कर रहा है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि संस्थान की राजभाषा पत्रिका में प्रकाशित लेखों का स्तर दिनों–दिन अधिक रूचिकर और ज्ञानवर्धक होता जा रहा है। हिन्दी भाषा में पूर्ण वैज्ञानिक व सुदृढ़ शब्द भण्डार होने से इसमें वैज्ञानिक साहित्य का सृजन सरलता से किया जाने लगा है। आरंभिक वर्षों में अनुवाद का सहारा अधिक लिया जाता था, परन्तु वर्तमान समय में मूल रूप से ही हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक साहित्य की रचनाएं प्रकाशित की जाती हैं।

संस्थान में राजभाषा पत्रिका ''मरु बागवाणी'' का प्रकाशन पिछले द्वादश वर्षों से लगातार किया जा रहा है और आपके सामने त्रयोदश अंक लेकर हम प्रस्तुत हैं। इस अंक में पिछले सभी अंकों के अनुभवों और पाठकों के समालोचनात्मक सुझावों को समाहित करते हुए लेखों की गुणवत्ता को उत्कृष्टता के शिखर की ओर ले जाने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत अंक में लेखों के विविध रगों को एक साथ लाने का प्रयास किया गया है। एक और जहां बागवानी के विकास का वर्णन है तो, दूसरी और हिंदी भाषा के विकास और साहित्यक रचनाएं संकलित की गयी हैं। बगीचों का स्थापन विस्तार से बताया गया है और साथ ही, फसलों की जैविक खेती के प्रयोग को बढ़ाने की बात की गयी है। शुष्क बागवानी की नव तकनीकियां और अर्धशुष्क क्षेत्रों में उगाए जाने वाले फलों को भी इस अंक में दिया जा रहा है। तकनीकी के आधुनिक युग में स्मार्ट फोन का महत्व अधिक है और प्रधानमंत्री के ''डिजिटल इण्डिया'' को खेती में भी प्रयोग किया जा रहा है।

एकात्मरूप में यह अंक वृहद् भावों को समेटे हुए हमारे दिन–प्रति दिन के सभी विषयों को एक साथ प्रस्तुत करने एक प्रयास मात्र है। मुझे आशा है कि इसके पूर्ववर्ती अंकों की भांति यह अंक भी आपको रूचिकर लगेगा। इस अंक को यह स्वरूप प्रदान करने में लगे सभी कार्मिकों का मैं हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

दिनांक : अगस्त, 2019

**(पी. एल. सरोज)**

# राजभाषा खण्ड

# संस्थान की प्रमुख राजभाषा गतिविधियां

## हिंदी चेतना पखवाड़ा आयोजन

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान में दिनांक 14 से 29 सितम्बर 2018 के दौरान हिंदी चेतना पखवाड़ा का आयोजन किया गया। इसका आरभं हिंदी दिवस के अवसर पर किया गया। हिंदी दिवस पर पर आयोजित समारोह में मुख्य अतिथि के आसन से बोलते हुए वरिष्ठ साहित्यकार श्री राजेन्द्र जोशी ने कहा कि भारत में हिंदी को जो स्थान प्राप्त होना चाहिए था वह नहीं हुआ है। हिंदी आज भी अनुवाद के स्तर तक ही सीमित है। संस्थान में हो रहे हिंदी कार्यों की सराहना करते हुए श्री जोशी ने कहा कि शोध के सारांश को हिंदी में प्रकाशित कर किसानों तक पहुंचाया जाना चाहिए। शोध परिणामों को किसानों तक पहुंचाने के लिए केवल हिंदी अथवा किसान की अपनी भाषा पर ही बल देना चाहिए। भाषाओं का संरक्षण किसी सरकार के भरोसे नहीं होना चाहिए। सम्माननीय अतिथि के रूप में बोलते हुए वरिष्ठ पत्रकार श्री हेम शर्मा ने कहा कि आरंभिक दिनों में हिंदी का उर्दू के साथ संघर्ष रहा था। हिंदी ने सभी भाषाओं के साथ सामंजस्य करते हुए उनके शब्दों को आत्मसात किया और अपने विराट स्वरूप को प्राप्त किया। हिंदी के विकास की बात करते हुए श्री शर्मा ने कहा कि हिंदी का विकास अहिंदी भाषी क्षेत्रों के लोगों ने अधिक किया है। इस अवसर पर सस्थान के निदेशक प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज ने संस्थान में हिंदी में की जा रहीं प्रमुख गतिविधियों की जानकारी दी।

दिनांक 29 सितम्बर 2018 को चेतना पखवाड़ा का समापन किया गया। इस अवसर पर पर आयोजित समारोह में मुख्य अतिथि के आसन से बोलते हुए वरिष्ठ साहित्यकार श्री अन्नाराम शर्मा ने कहा कि भारत में हिंदी को जो स्थान प्राप्त होना चाहिए था वह नहीं हुआ है। हिंदी आज भी अनुवाद के स्तर तक ही सीमित है। उचित संरक्षण नहीं मिलने से रोज एक भाषा विलुप्त होती जा रही है जिससे क्षेत्रीय सांस्कृतिक विरासत का विलोपन हो रहा है। विशिष्ट अतिथि के रूप में बोलते हुए वरिष्ठ पत्रकार और साहित्यकार श्री हरीश बी शर्मा ने कहा कि आरंभिक दिनों में हिंदी का उर्दू के साथ संघर्ष रहा था। सम्माननीय अथिति के रूप में बोलते हुए बीकानेर स्थित काजरी क्षेत्रीय केन्द्र के अध्यक्ष डॉ. नरेन्द्र देव यादव ने कहा कि हमें मातृभाषाओं का सम्मान करना चाहिए। अश्व अनुसंधान केन्द्र के अध्यक्ष डॉ. शरद्चंद्र मेहता ने कहा कि मातृभाषा में जो भाव आते हैं वह किसी अन्य भाषा में कभी नहीं आ सकते हैं। संस्थान के निदेशक प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज ने कहा कि हिंदी को अपनाने में अपने मन में छुपे भय को निकालकर दूर करना होगा। आप हिंदी बोलेंगे तब भी उतने ही शिक्षित लगेंगे जितने की अंग्रेजी बालेने से लगते हैं।

चेतना पखवाड़ा के दौरान कुल 06 गतिविधियों का आयोजन किया गया था। हिन्दी सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता में कुल 27 प्रतिभागी थे। इसमें वैज्ञानिक समूह से प्रथम डॉ. मुकेश कुमार बेरवाल, वैज्ञानिक, द्वितीय डॉ. कमलेश कुमार, वैज्ञानिक और तृतीय डॉ. रमेश कुमार, वैज्ञानिक रहे। तकनीकी समूह से प्रथम श्री भोज राज खत्री, तकनीकी अधिकारी, द्वितीय श्री पृथ्वी राज सिंह, तकनीकी अधिकारी रहे। इसी प्रकार प्रशासनिक समूह से प्रथम श्री राकेश स्वामी, सहायक, द्वितीय श्री कुलदीप पान्डे, सहायक प्रशासनिक अधिकारी और तृतीय श्री रावत सिंह, अ.श्रे.लिपिक रहे। एसएसएस एवं वाईपी समूह से प्रथम सुश्री किरण, वाईपी, द्वितीय श्री राधेश्याम, वाईपी तथा तृतीय श्री महेश कुमार मीणा, एसएसएस रहे।

यूनिकोड हिंदी टंकण प्रतियोगिता में कुल 11 प्रतिभागियों ने भाग लिया। इनमें प्रथम डॉ. अजय कुमार वर्मा, वैज्ञानिक, द्वितीय श्री रूप चंद बलाई, वैज्ञानिक और तृतीय डॉ. सुशील कुमार माहेश्वरी, प्रधान वैज्ञानिक रहे।

हिंदी में संभाषण प्रतियोगिता प्रतियोगिता में कुल 05 प्रतिभागियों ने भाग लिया और प्रथम डॉ. अजय कुमार वर्मा, वैज्ञानिक, द्वितीय डॉ. दीपक कुमार सुरोलिया, वरिष्ठ वैज्ञानिक और तृतीय स्थान पर डॉ. अनीता मीना, वैज्ञानिक रहे।

शोध कार्य पर आधारित पोस्टर में कुल 05 प्रतिभागी थे। इनमें प्रथम डॉ. विजय राकेश रेड्डी एस., वैज्ञानिक, द्वितीय डॉ. पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह, प्रधान वैज्ञानिक और तृतीय डॉ. एस.एम. हलधर, वैज्ञानिक रहे।

इनके अतिरिक्त संस्थान में हिन्दी में सबसे अधिक प्रशासनिक कार्य करने वाले कर्मचारियों भी पुरस्कार दिया गया। हिन्दी के प्रति जागरूकता लाने के उद्देश्य से संस्थान ने बीकानेर स्थित राजकीय महारानी उच्च माध्यमिक विद्यालय तथा राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय इंगानप के माध्यमिक परीक्षा में हिंदी विषय में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को भी सम्मानित किया गया।

हिंदी चेतना पखवाड़ा कार्यक्रम में मंचासीन अतिथि और उपस्थित अधिकारी/कर्मचारी

## संस्थान राजभाषा कार्यान्वय समिति की बैठकों का आयोजन

प्रतिवेदित अवधि के दौरान राजभाषा की प्रगति के मापदण्डों के अनुसार संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की चार बैठकों (दिनांक 19.06.2018, 04.09.2018, 06.12.2018 एवं 16.03.2019) का आयोजन किया गया।

## हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन

इस एक वर्ष की अवधि में संस्थान में पहली तिमाही में दिनांक 27 मार्च 2018 को 'वर्तनी शुद्धता और हिंदी' विषय पर कार्यशाला का आयोजन किया गया। दूसरी तिमाही की कार्यशाला 19 जून, 2018 को आयोजित की गई, जिसमें राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर के प्रबंध एवं तकनीकी विभाग के अध्यक्ष एवं सह प्राध्यापक डॉ. गौरव बिस्सा द्वारा 'कार्यालय प्रबंध, नेतृत्व और अभिप्रेरणा' विषय पर व्याख्यान दिया। तीसरी तिमाही की कार्यशाला का आयोजन दिनांक 26 सितम्बर, 2018 को किया गया था। वर्ष की अंतिम कार्यशाला का आयोजन दिनांक 31 दिसम्बर 2018 को किया गया, जिसमें वरिष्ठ हिंदी साहित्यकार श्रीमती मधुरिमा सिंह ने हिंदी भाषा के गौरव इतिहास व इसकी सरलता पर व्याख्यान दिया।

हिंदी कार्यशाला में व्याख्यान देती हुई साहित्यकार एवं उपस्थित अधिकारी/कर्मचारीगण

## स्वरांजली संध्या

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री भारत रत्न स्वर्गीय श्री अटल बिहारी वाजपेजी की याद में उनकी कविताओं के वाचन एवं कवि सम्मेलन का आयोजन दिनांक 16 सितम्बर 2018 को किया गया था। इस अवसर पर बीकानेर के प्रतिष्ठित हिंदी कवि–कवयित्रियों को आमंत्रित कर स्वरांजली संध्या के रूप में इसे मनाया गया था।

## बेर दिवस का आयोजन

संस्थान में दिनांक 27 जनवरी, 2019 को एक दिवसीय बेर दिवस का आयोजन किया गया। इस अवसर पर राजस्थान सरकार के केबीनेट मंत्री माननीय डॉ. बी. डी. कल्ला, ऊर्जा जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी, भू–जल, कला साहित्य संस्कृति और पुरात्व मंत्री मुख्य अतिथि थे। अन्य गणमान्य अतिथियों के अतिरिक्त इस अवसर पर बीकानेर जिले के लगभग 500 किसान भी उपस्थित थे। संस्थान की तकनीकियों की एक प्रदर्शनी भी इस अवसर पर लगायी गयी थी।

## महिला कृषक दिवस का आयोजन

दिनांक 26–28 मार्च, 2019 के दौरान एससीएसपी योजना के तहत संस्थान में महिला किसानों के लिए तीन दिवसीय एक प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों के साथ ग्रामीण बेरोजगार महिलाओं को सशक्त बनाना था। लगभग 65 महिलाओं ने प्रशिक्षण कार्यक्रम में सक्रिय रूप से भाग लिया है। सैद्धांतिक पृष्ठभूमि के अलावा, उन्हें प्रायोगिक रूप से भी प्रशिक्षण दिया गया। व्यावहारिक रूप से, उन्हें गैर–किण्वित फलों के पेय पदार्थ जैसे कि स्क्वैश, रस, आंवला आधारित माउथ फ्रेशनर, तरबूज छिलके की कैंडी, किन्नौं मुरब्बा आदि को बनाने के बारे में सिखाया गया। सौर निर्जलीकरण की तकनीक के बारे में जानकारी देते हुए उन्हें इस क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध सौर उर्जा का उपयोग के लिए प्रोत्साहित किया गया।

## राजभाषा हिंदी में आयोजित किसानोपयोगी प्रशिक्षण एवं अन्य कार्यक्रम / व्याख्यान

अधिसूचित अवधि के दौरान संस्थान या संस्थान के बाहर आयोजित विभिन्न किसान प्रशिक्षणों के दौरान बागवानी तकनीकों से संबंधित 14 तकनीकी व्याख्यान हिंदी में दिए गए। इसके अतिरिक्त छात्रों, हितधारकों को संस्थान में या किसानों के खेतों का दौरा करने के समय बागवानी तकनीकों से संबंधित 30 व्याख्यान हिंदी में दिए गए।

### किसान पाठशाला का आयोजन

खरीफ मौसम– 2018–19 के दौरान श्री अरविन्द सिंह पुत्र श्री हरि सिंह गहलोत, गाँव– आम्बासर, जिला– बीकानेर, के खेत में आत्मा के सहयोग से फूटककड़ी की उन्नत किस्म (एएचएस–82) की उत्पादन तकनीकों पर एक किसान पाठशाला का आयोजन हिन्दी में किया गया।

### किसान दिवस का आयोजन

दिनांक 23.12.2018 को बीकानेर के कोलासर गाँव में किसान दिवस मनाया गया, जिसमें 100 से अधिक

किसानों, वैज्ञानिकों और जन प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

## उपकेन्द्र (केबापके, वेजलपुर, गोधरा– गुजरात)

### राजभाषा कार्यन्वयन समिति की बैठक एवं हिन्दी कार्यशाला

राजभाषा कार्यन्वयन समिति की तिमाही बैठकों का आयोजन क्रमशः दिनांक 11.06.2018, 2.09.2018, 26.12. 2018 एवं 25.03.2019 को किया गया।

केन्द्र में कार्यरत अधिकारियों को हिन्दी में कार्य करने की प्रेरणा के लिए राजभाषा विभाग के निर्देशानुसार दिनांक 20.09.2018 एवं 26.12.2019 को "राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार में नियम अधिनियम की भूमिका" विषय पर कार्यशाला की गयी। कार्यक्रम की शुरूआत में श्री मकवाणा ने बताया की हिंदी के प्रचार –प्रसार में नियम अधिनियम का अत्यंत महत्व है। दूसरी कार्यशाला का विषय "देश की एकता और अखंडता में राजभाषा हिन्दी का योगदान" रखा गया था। इस कार्यशाला में कार्यक्रम की शुरूआत में श्री मकवाणा ने बताया की देश की एकता के लिए अंतर की एकता परमावश्यक है और वह राजनीति से नही, भारत की रत्नगर्भा भाषाओं के उपयोग द्वारा स्थापित हो सकती है।

### हिन्दी सप्ताह का आयोजन

केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र , वेजलपुर (गोधरा) में दिनांक 14.09.18 से 19.09.18 तक हिन्दी सप्ताह मनाने का आयोजन किया गया था। हिन्दी सप्ताह दौरान यह निर्णय लिया गया की सभी कर्मचारी एवं अधिकारियों अपना–अपना कार्य हिंदी में ही करने का प्रयास करें।

### हिन्दी दिवस

दिनांक 14.09.2018 को हिन्दी कार्यान्वयन में वक्ता अथवा व्याख्याता की प्रभावी भूमिका के गुर विषय पर आयोजित हिन्दी दिवस पर कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस विषय में मुख्य बिन्दु जिन पर ज्यादा ध्यान देना अति आवश्यक हैं, वे हैं– (1) व्याख्यान देने की शैली (2) विषय वस्तु का समुचित ज्ञान (3) स्पष्टता (4) अंतिम पडाव (5) समय सीमा का ध्यान (6) आंगिक अभिव्यक्ति (7) व्याख्यान का प्रारंभ, मध्य और चरम।

### संस्थान के प्रकाशन

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर की स्थापना के 25 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष में इस वर्ष को रजत जयंती वर्ष के रूप में मनाया गया। रजत जयंती वर्ष के दौरान अक्टूबर माह के दौरान एक राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें देश से लगभग 300 कृषि वैज्ञानिकों ने भाग लिया था। संस्थान ने रजत जयंती वर्ष के उपलक्ष में हिंदी व अंग्रेजी के कुल 25 प्रकाशन निकाले जिनमें डीकेएमयू के द्वारा निकाले जाने वाले जर्नल "इण्डियन हार्टिकल्चर" का विशेषांक भी सम्मिलित है।

**1) तकनीकी पुस्तिकाएं**

– बेर : उन्नत बागवानी – सब्जियों की उत्पादक तकनीक – काचरी फसल एवं बीज उत्पादन तकनीक – फूट ककड़ी

**2) तकनीकी पत्रक**

– संस्थान एक परिचय सहित विभिन्न विषयों/फसलों के 15 तकनीकी प्रत्रक मुद्रित करवाये गये।

**3) वार्षिक प्रतिवेदन**

– संस्थान एवं अखिल भारतीय शुष्क क्षेत्रीय फल समन्वित अनुसंधान परियोजना

**4) वार्षिक राजभाषा पत्रिका**

– ''मरु बागवाणी''

**5) संस्थान समाचार**

– छःमाही समाचार पत्रक

## वर्ष के दौरान प्राप्त पुरस्कार/सम्मान का संक्षिप्त परिचय

संस्थान को वर्ष 2018 के दौरान भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली ने वर्ष 2017–18 में संस्थान द्वारा राजभाषा हिंदी में किए गये सर्वश्रेष्ठ कार्य हेतु राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार 2017–18 (द्वितीय) प्रदान किया गया। भाकृअनुप के स्थापना दिवस 16 जुलाई 2018 को माननीय कृषि मंत्री भारत सरकार द्वारा यह पुरस्कार प्रदान किया गया।

भाकृअनुप का वर्ष 2017–18 का राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार (द्वितीय) प्राप्त करते हुए संस्थान के निदेशक प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज एवं सहा. मुख्य तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) श्री प्रेम प्रकाश पारीक

संस्थान को वर्ष 2018 के दौरान नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर ने हिंदी में किए गये सर्वश्रेष्ठ कार्य के लिए प्रशस्ति पत्र प्रदान कर सम्मानित किया। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक के दौरान मण्डल रेल प्रबन्धक, बीकानेर ने संस्थान के निदेशक प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज ने यह प्रशस्ति पत्र प्राप्त किया।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक के दौरान मण्डल रेल प्रबन्धक, बीकानेर से प्रशस्ति पत्र प्राप्त करते हुए संस्थान के निदेशक प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज एवं सहा. मुख्य तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) श्री प्रेम प्रकाश पारीक

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

प्रशस्ति-पत्र

राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार

वर्ष 2016-17 के दौरान सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग में उल्लेखनीय योगदान के लिए केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर को 'क' एवं 'ख' क्षेत्र के छोटे संस्थानों की श्रेणी में द्वितीय पुरस्कार (संयुक्त) से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 16 जुलाई 2018
नई दिल्ली

सचिव
(भा.कृ.अनु.प.)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

भारत सरकार

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर

प्रशस्ति-पत्र

वर्ष 2018-19 के दौरान नगर में राजभाषा के उत्कृष्ट प्रयोग के लिए केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर को प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाता है।

दिनांक-29-07-2019

(संजय कुमार श्रीवास्तव)
अध्यक्ष, नराकास एवं
मंडल रेल प्रबंधक

# कृषि अनुसंधान में भारतीय भाषाओं का महत्व

अंजेश कुमार[1] एवं एम. जेड. सिद्दीकी[2]
सहा. मुख्य तकनीकी अधिकारी[1] (राजभाषा) एवं प्रधान वैज्ञानिक[2]
भाकृअनुप–भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान, नामकुम, राँची–834 010 (झारखंड)

भारत दुनिया के कुछ गिने–चुने देशों में है, जहाँ संस्कृति, जलवायु, स्थलाकृति, खान–पान की शैली तथा भाषा के क्षेत्र में बहुत ज्यादा विविधता है। परिवहन एवं संचार के क्षेत्र में हुई उल्लेखनीय प्रगति से परिस्थितियां बदली है। संस्कृति, लिबास एवं खानपान की शैली इससे बहुत ज्यादा प्रभावित हुई है। भाषा के क्षेत्र में भी ऐसे बदलाव दृष्टिगोचर हुए हैं। सरकारी कार्यालयों तथा शिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेजी का वर्चस्व अभी भी बना हुआ है, परन्तु हिन्दी के साथ–साथ भारतीय भाषाओं ने भी इन महत्वपूर्ण स्थानों पर अपनी पैठ बनाई है। देश के सभी राज्यों की मान्यतापूर्ण भाषाओं का अपने–अपने राज्यों में व्यापक महत्व है। साथ ही देश में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा हिन्दी की व्यापकता में उल्लेखनीय विस्तार हुआ है। देश की स्वतंत्रता के आज लगभग 71 वर्ष बाद विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण बदलाव आए हैं, जिसका दूरगामी आर्थिक सामाजिक असर हुआ है।

वर्ष 1947 में देश की जनसंख्या लगभग 36 करोड़ थी तथा मात्र 07 प्रतिशत आबादी शहरों में निवास करती थी। शेष भूमि वन क्षेत्र, बंजर भूमि, रेगिस्तान, कृषि भूमि तथा रिहायशी इलाके इत्यादि में बंटी हुई थी। सम्पूर्ण देश की लगभग 80 प्रतिशत आबादी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि से जुड़ी थी। बचपन से ही स्कूलों में यही पढ़ाया जाता था कि भारत एक कृषि प्रधान देश है, और यही सच्चाई भी है। परन्तु उन दिनों कृषि उत्पादन की स्थिति बहुत संतोषजनक नही थी। देश की अधिकांश कृषि भूमि असिंचित तथा बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में थी। समतल क्षेत्रों में भी उपजाऊ भूमि होने के बावजूद भी सिंचाई की व्यवस्था नहीं थी। वर्षाश्रित कृषि कभी अतिवृष्टि तथा कभी अनावृष्टि की शिकार थी। आजादी के 20–25 वर्षो बाद तक भी खाद्यान्नों का उत्पादन इतना नही था कि देश की पूरी आबादी को दो जून का नियमित भोजन मिल सके। खाद्यान्न के अतिरिक्त फल, मांस, मछली इत्यादि लोगों के लिए भोजन का विकल्प था, परन्तु यह भी पर्याप्त नहीं था। भुखमरी से मौत की खबरें प्रायः सुनने को मिलती थी। वर्ष 1967 में देश में पड़े भीषण अकाल के कारण बड़ी मात्रा में खाद्यान्न आयात करना पड़ा था। ऐसी स्थिति में सरकार द्वारा कृषि कार्य में सुविधाएं बढ़ाने तथा कृषि के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य पर जोर दिया गया। एक तरफ सिंचित भूमि का क्षेत्रफल बढ़ने लगा, दूसरी तरफ कृषि क्षेत्र में विविधता लाने के प्रयास किए गए। इस कार्य को संगठित रूप प्रदान करने के लिए वर्ष 1929 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का गठन हुआ। केन्द्र सरकार के कृषि से जुड़े प्रायः सभी संस्थानों को इसके अन्तर्गत लाया गया। धीरे–धीरे खाद्यान्न, फल–सब्जी, दलहन, तिलहन, मोटे अनाज, मछली, चिड़िया, कपास इत्यादि के साथ ही कृषि से जुड़े पशुओं के लिए भी अनुसंधान केन्द्र खोले गए। सतत अनुसंधान द्वारा खाद्यान्नों, फलों, सब्जियों की नई उपजाऊ किस्मों का विकास हुआ। अनुसंधान की सफलना को जमीन पर उतारने के लिए देशव्यापी प्रक्षेत्र परीक्षण किये गए। कृषि कार्य को संगठित रूप देने तथा इसे एक आकर्षक पेशा बनाने में सफलना मिली। परिषद् के नेतृत्व में देश में हरित क्रांति आई। देश में खाद्यान्नों का रिकॉर्ड उत्पादन आरम्भ हो गया। तेज गति से बढ़ती आबादी के बावजूद भी न सिर्फ खाद्यान्न, फल, सब्जी के क्षेत्र में देश में आत्मनिर्भरता आई, बल्कि कुछ उत्पादों के निर्यात भी आरम्भ हो गए।

सम्प्रति देश की जनसंख्या 129 करोड़ से भी अधिक है, परन्तु इतनी विशाल आबादी को भी भोजन के लिए खाद्यान्न उपलब्ध हैं। ऐसी स्थिति तब है, जब कृषि भूमि धीरे–धीरे घटती जा रही है। शहरों का क्षेत्रफल आजादी के समय के 07 प्रतिशत से बढ़कर आज लगभग 35 प्रतिशत हो गया है। यह वृद्धि वन भूमि, ऊसर भूमि तथा कृषि भूमि की कीमत पर हुई है। कृषि अनुसंधान/प्रसार के क्षेत्र में हुए व्यापक कार्य के कारण देश के कृषकों का कृषि अनुसंधान संस्थानों से सीधा जुड़ाव हुआ है। इन संस्थानों के वैज्ञानिक भी नियमित अन्तराल पर प्रक्षेत्र तथा ग्राम भ्रमण करते हैं। इस तरह के अनुसंधान एवं प्रसार कार्य में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। लगभग दो सौ वर्षों के ब्रिटिश शासन के कारण भाषा के रूप अंग्रेजी का देश के सभी क्षेत्रों में गहराई से पैठ बना हुआ है। शिक्षा, विशेष रूप से कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान के क्षेत्र में आज भी अंग्रेजी सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाषा बनी हुई है। सम्प्रति कृषि अनुसंधान कार्य एवं उसके प्रलेखीकरण में लगभग अंग्रेजी का ही प्रयोग हो रहा है, जिसका साहित्यिक महत्व तो है, परन्तु इसका परीक्षण खेत में तथा कृषकों के बीच होता है। ऐसी स्थिति में भारतीय भाषाओं,

खासकर मान्यता प्राप्त भाषाओं का महत्व बढ़ जाता है। भाषा इस कार्य में संवाहक का कार्य करती है।

वर्ष 2011 की जनगणना की अन्तरिम रिपोर्ट के अनुसार भारत में 600 (छः सौ) भाषाएं एवं बोलियां हैं। भाषाओं और बोलियों में अन्तर का मुख्य बिन्दु प्रलेखीकरण है, भाषाओं में साहित्य सृजन होता है, परन्तु बोलियों के लिखित दस्तावेज कम हैं। भाषाओं का क्षेत्र अपेक्षाकृत बड़ा और व्यापक है। हालांकि यह एक सच्चाई है कि प्रायः कई–कई बोलियां एक ही भाषा क्षेत्र में आती है। दैनन्दिन कार्यों में भले ही स्थानीय बोली का प्रयोग होता है, परन्तु इन क्षेत्रों में भी क्षेत्रीय भाषाओं की व्यापक स्वीकार्यता है।

संविधान की आठवीं अनुसूची में मान्यता प्राप्त भाषाओं की संख्या 22 हैं। हिन्दी देश के लगभग 57 प्रतिशत भूभाग में बोली एवं समझी जाने वाली भाषा है। भारत में अहिन्दी भाषी राज्यों का निर्धारण भाषा के आधार पर हुआ था तथा उन सभी राज्यों में राज्य सरकार के कार्य स्थानीय भाषा में ही होते हैं। इन सभी मान्यता प्राप्त भाषाओं का अपना–अपना प्रभाव क्षेत्र है तथा इसमें साहित्य का सृजन भी लगातार हो रहा है। इनमें से ज्यादातर भाषाओं के अपने शब्दकोश हैं तथा फिल्में भी बनाई जा रही हैं। विशेष रूप से तमिल, बांग्ला, मलयालम, मराठी एवं तेलुगु फिल्म उद्योग अपने–अपने क्षेत्र में बहुत ही लोकप्रिय है। इसके अतिरिक्त उड़िया, असमी, पंजाबी, भोजपुरी, नागपुरी इत्यादि भाषाओं में भी फिल्में लगातार बन रही हैं तथा पसन्द भी की जा रही हैं। इन परिस्थितियों में कृषि अनुसंधान को स्थानीय भाषाओं से जोड़ना समय की आवश्यकता है, ताकि हम अपनी उपलब्धियों को किसानों तक आसानी से पहुँचा सकें। हालांकि मान्यता प्राप्त भाषाओं में कुछ भाषाएं ऐसी हैं, जिनका प्रभाव क्षेत्र बहुत ही सीमित है। लेकिन ज्यादातर भाषाएं व्यापक क्षेत्रों में फैली है तथा कार्यालय कार्य से लेकर दैनन्दिन कार्यों तक निरन्तर प्रयोग की जा रही हैं। क्षेत्रीय स्तर पर बड़े भूभाग में प्रचलित इन भाषाओं के बिना यहाँ के जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। अगर हमें अनुसंधान की उपलब्धियों से कृषकों को जोड़ना है, तो यह आवश्यक है कि अपनी बातों को उनकी भाषा/बोली में उन तक पहुँचाएं। यह बहुत कठिन नहीं है।

व्यापकता की दृष्टि से देश में सर्वप्रथम हिन्दी का नाम आता है तथा कृषि से जुड़े साहित्य हिन्दी में लगातार तैयार हो रहे हैं। परिषद् के ज्यादातर संस्थानों में प्रशिक्षण सामग्री तथा संबंधित फसल से जुड़ी अनुसंधान संबंधी उपलब्धियां प्रायः हिन्दी में उपलब्ध है। इस ओर लगातार सफलनापूर्वक कार्य किये जा रहे हैं। इसे और भी प्रोत्साहित करने की जरूरत है तथा हमेशा यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि तैयार किए गए साहित्य का प्रस्तुतीकरण सरल एवं सुगम्य हो। परिषद् के सभी संस्थानों में राजभाषा प्रकोष्ठ की सहायता भी ली जा रही है। हिन्दी भाषी वैज्ञानिक/शोधकर्मी भी सराहनीय योगदान दे रहे हैं। अनुसंधान कार्य में प्राप्त सफलना की गाथा/उपलब्धियों पर हिन्दी में पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं। हिन्दी में प्रकाशित होने वाले शोध साहित्य अभी भी बहुत कम हैं। कुछ वैज्ञानिक संगठनों, संस्थानों, वैज्ञानिकों द्वारा हिन्दी शोध पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। इस क्षेत्र में हो रही प्रगति संतोषजनक है, परन्तु हिन्दी के प्रभाव क्षेत्र को देखने के बाद यह काफी कम प्रतीत होता है। इसके लिए कृषि वैज्ञानिकों को पहल करनी होगी। उसी तरह कई अन्य मान्यता प्राप्त भारतीय भाषाएं ऐसी हैं, जिनका प्रभाव क्षेत्र तो बड़ा है ही एवं अपने क्षेत्र में लोगों के जीवन से सांस्कृतिक व भावनात्मक रूप से बहुत गहराई से जुड़ी हैं। अपने व्यापक प्रभाव क्षेत्र के कारण हिन्दी में न सिर्फ कृषि विज्ञान में बल्कि अन्य विषयों के वैज्ञानिक साहित्य आने शुरू हो गए हैं, परन्तु मान्यता प्राप्त अन्य भाषाओं में हो रहे लेखन बहुत संतोषजनक नहीं हैं। खासकर कृषि संबंधी साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य काफी कम हैं। जिस तरह से हिन्दी भाषी कृषकों के पास हिन्दी में अनुसंधान संबंधी कृषि सामग्री के साथ अपनी बातें पहुँचाई जा सकती है, वैसे ही अन्य भारतीय भाषाओं में भी अनुसंधान की उपब्धियों को रूपान्तरित कर उस भाषाई प्रभाव क्षेत्र के कृषकों तक पहुँचाया जा सकता है। देश ने विभिन्न क्षेत्रों में चाहे कितनी तरक्की कर ली हो, परन्तु भाषा की दृष्टि से लोगों का जो भावनात्मक जुड़ाव है, हमें उसका सम्मान करना चाहिए।

देश में अंग्रेजी की पहुँच आज भी केवल उच्च शिक्षित तबके तक ही सीमित है। यह अलग बात है कि प्रायः सभी तकनीकी एवं व्यवसायिक शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षण का माध्यम अंग्रेजी बना हुआ है। यही हाल कृषि शिक्षा का भी है। अनुसंधान के क्षेत्र में भी व्यापक रूप से अंग्रेजी का ही प्रयोग हो रहा है, परन्तु कृषि अनुसंधान का लक्ष्य वर्ग किसान है तथा किसानों की संख्या किसी भी दूसरे व्यवसाय से कई गुणा ज्यादा है तथा वे लोग ग्रामीण इलाके में ही निवास करते हैं। शहरों में भले ही प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा के संस्थानों तक में अंग्रेजी माध्यम का बोलबाला हो, लेकिन गाँव में अभी भी सरकारी स्कूल ही शिक्षा का माध्यम हैं। यहाँ हिन्दी या प्रादेशिक भाषाएं ही शिक्षण का माध्यम है। अंग्रेजी बोलने एवं समझने वाले लोग शायद ही मिल पाते हैं। निकट

# संस्थान की प्रमुख राजभाषा गतिविधियां

भविष्य में किसी बड़े बदलाव की संभावना भी नहीं है। वर्तमान में कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में तैयार हो रहे साहित्य में हिन्दी ने भले ही अपना स्थान बनाया हो, परन्तु राज्यों की मान्यता प्राप्त भाषाओं की स्थिति सराहनीय नही हैं।

कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में कार्य कर रहे सभी संगठनों को इसे गंभीरता से लेने की जरूरत है। चूंकि इस क्षेत्र में सभी राज्यों के लोग कार्य कर रहे हैं, संबंधित भाषा–भाषी वैज्ञानिकों/शोधकर्मियों की सहायता लेकर उस भाषा विशेष में कृषि अनुसंधान की उपलब्धियों को रूपान्तरित करने का कार्य बड़े पैमाने पर किया जाना चाहिए। अगर मौलिक रूप से इन भाषाओं में कार्य करने में थोड़ी कठिनाई हो तो अनुवाद एक बेहतर साधन है। इसके द्वारा हम उन भाषाओं में उत्कृष्ठ कृषि साहित्य तैयार कर सकते हैं। यहाँ यह ध्यान रखना अति आवश्यक है कि साहित्य सरल और सहज हो, ताकि कृषक वर्ग के लोग इसे आसानी से समझ सकें।

इस तरह हम कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में हुई उपलब्धियों को न केवल किसानों तक सुगमता से पहुँचा सकेंगे, अपितु कृषि उत्पाद पर इसका दूरगामी सकारात्मक प्रभाव होगा, जो सम्पूर्ण राष्ट्र की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए लाभदायक सिद्ध होगा। इससे हिन्दी सहित अन्य मान्यता प्राप्त भारतीय भाषाएं भी समृद्ध होगी तथा कृषि कार्यो में लाभ के साथ–साथ भाषाएं व्यापक स्वरूप ले सकेंगी।

### भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में अंकित मान्यता प्राप्त भारतीय भाषाएं एवं उनके बोले जाने वाले राज्य

1. असमी (आसाम)
2. बंगाली (बंगाल)
3. बोडो (असम पूर्वी राज्य)
4. डोगरी (जम्मू एवं हि. प्रदेश)
5. गुजराती (गुजरात)
6. हिन्दी (उत्तरी भारत के अधिकांश राज्य)
7. कश्मीरी (जम्मू एवं कश्मीर)
8. कन्नड़ (कर्नाटक)
9. कोंकणी (गोवा एवं कर्नाटक)
10. मलयालम (केरल)
11. मणिपुरी (मणिपुर)
12. मराठी (महराष्ट्र)
13. मैथिली (बिहार के कुछ भाग)
14. नेपाली (सिकिम्म व उत्तरी प. बंगाल)
15. उड़िया (उड़िशा)
16. संस्कृत
17. सिंधी (विभिन्न राज्यों में)
18. पंजाबी (पंजाब)
19. संथाली (बिहार, झारखंड, प. बंगाल)
20. तमिल (तमिलनाडू पुडिचेरी)
21. तेलुगु (आंध्रप्रदेश, तेलंगाना)
22. उर्दू (उत्तरी भारत के कुछ राज्य)

# कविताएं

## बारिश की बून्द

एक जलन, एक तपिश, एक आकंठ प्यास है,
तड़प रही है धरा बेबस, बेजुबान सी।
झुलस रहा है तन, जल रहा है मन,
फूल, पत्तियां सब हो गयी बेजान सी।
कहीं दूर एक गुबार सा उठा, छा गया
धूल ने ढांप दिया, राहत की जो आस जगी।
बड़ी दूर एक बदली भी छाने लगी थी
बढ़ी आगे, गरज उठी, ज्यों मिलन को बेकरार सी।
निर्दयी हवा का फिर वो झोंका आया
गया ले उड़ा, जो एक अधसुनी अजान थी।
मुरझा गयी, मिलन की जो आस टूटी
मायूसी इस कदर छाई, लगने लगी श्मसान सी।
रूह तरस गयी है इन्तजार में उस एक बून्द के 'डूडी'
पा जिसे, खिल उठेगी, सज उठेगी, मानो भर गयी हो मांग सी।

**प्रीतम सिंह**
सहायक प्राध्यापक (अंग्रेजी)
सेठ एन एम टी राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्याल
झुंझुनू (राजस्थ

## पिता का साया

बाबुल ने इतना लाड लडाया
न आने दिया दुखों का साया,
फिर न जाने क्यों आज
आंख में पानी भर आया।
जिसने मुश्किलों से लड़ना सिखाया,
उसी को आज मैंने कमजोर पाया,
जब मेरी विदाई का समय आया।
जिस पिता को हम आदर्श मानते,
मार्गदर्शक समझते, उन्हें उदास देख
सभी का मन भर आया।
शायद उनके अंतर्मन में उठा ये तुफान
क्या बिटिया ने उचित घर है पाया
कौन रखेगा खयाल, क्या होगी भरपूर देखभाल,
कौन करेगा पूरी इसकी ख्वाहिशें,
क्या रहेगी दुनिया भर की बंदिशे।
यही सोच शायद एक पिता का मन भर आया।
ससुलाल पहुंचते ही मैंने
एक ओर सर पर हाथ पाया,
वो भी था पिता का साया।
जब भी मैंने खुद को समस्याओं से घिरा पाया,
याद आया मुझे पिता का साया,
अटूट, निडर हिमालय सा अटल,
उन्हीं को आदर्श मान मैंने,
अपने जीवन को आगे बढ़ाया।
सचमुच यही होता है
एक पिता का साया।

**श्रीमती सुनिता सोनगरा**
5–इ–100, जयनारायण व्यास कॉलोनी
बीकानेर (राज.)

## भारतभूमि का आत्मकथ्य

कितने ही आए बन दुश्मन प्रहार किए, सहे शांत पत्थर बन आह न भरी
तोपें चलवाई, गोले बरसाए, शोणित बहाया, कराह न करी
जलते हुए अंगारे बरसाए मुझ पर, जलने की कभी परवाह न करी
कभी तीर कभी तलवार चली, पर मरने—कटने से कभी न डरी
कोई प्रीत पराई फसल उगाये मुझ पर, ऐसी हरियाली की चाह न करी
कोई कसर नहीं छोड़ी पश्चिम की चालों ने, पर उसकी कभी पार न पड़ी
नफरत की आग लगाई थी जिसने, जलकर राख उसी की उड़ी
वार से वार टकराया था उसका, चिंगारी उसी के सिर पर पड़ी
मिटाने वाले आए जो भी मुझको खुद मिट गये देखा मैंने घड़ी—घड़ी।

**डॉ. कृष्णा आचार्य**
उस्ता बारी के अंदर, बीकानेर (राज.) 9461473251

## बचपन

हरेक शहर के हरेक मोड़पर, सिसक रहा है बचपन
हर देश के हर समाज से, कुछ पूछ रहा हे बचपन
नन्हे—नन्हे पैरों से, सूनी सूनी आंखों से
कुछ ढूँढ़ रहा है बचपन, भरी है मन में इतनी चाह
कहीं मिलेगी मुझको राह, बड़ी बड़ी मीनारों की
ऊँची ऊँची दीवारों में, दबा हुआ है बचपन
मुझको जो कुछ मिलना है, क्या वह मिल पाता है
अभाव और गंदगी से ही, क्या केवल नाता है
खेल कूद और उद्‌डण्ता से, क्यों मेरा सरोकार नहीं
पलभर की खुशियों पर भी, मेरा क्यों अधिकार नहीं
क्या मुझको भी कभी, गरम दूध मिल पायेगा
कोई कक्षा में बैठकर, जीवन का पाठ पढ़ाऐगा
हरेक व्यक्ति से, हर समाज से, पूछ रहा है बचपन
कब मिलेगा कहां मिलेगा, मेरा खोया बचपन
सड़े गले कूड़ों पर ही, कुछ ढूँढ़ रहा है बचपन
कभी गली में कभी सड़क पर, भटक रहा है बचपन
रोता चिल्लाता अश्रु बहाता, व्याकुल होता बचपन
हरेक शहर के हरेक मोड़ पर, सिसक रहा है बचपन

**श्रीमती रूपा सिंह**
सी—42 (बी), गांधी कॉलानी,
पवनपुरी, बीकानेर—334003

## मैं स्त्री हूँ

राम की चेतना
कृष्ण की बंशी
नीति की विवशता या
दुर्योधन का छल
प्रसाद की श्रद्धा
मीरा का विश्वास
महादेवी का मौन
निराला का श्रम
इतिहास की स्मृतियां या
भविष्य का वितान
वर्तमान का लंबा वरदान
भूत का विस्तार
अनगिनत किरदारों को
ओढ़ परिक्रमा करती हूं
अनथक अविराम.....लगातार
क्योंकि मैं स्त्री हूं!!!

**डॉ. कृष्णा आचार्य**
उस्ता बारी के अंदर
बीकानेर (राज.) 9461473251

# केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान- एक सफल यात्रा

पी.एल. सरोज एवं अजय कुमार वर्मा

भारत में बड़ी आबादी अभी भी अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। बढ़ती जनसंख्या के दबाव और प्राकृतिक संसाधनों के कम होने के कारण कृषि वस्तुओं की उत्पादकता में टिकाऊ वृद्धि, उचित कीमत, आय और पारिस्थितिक सुरक्षा की चिंता निरंतर बढ़ रही है। शुष्क और अर्ध–शुष्क जैसे जोखिम वाले क्षेत्रों में स्थिति और भी भयावह है। घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाजार में गुणवत्तायुक्त उत्पाद की मांग में लगातार वृद्धि हो रही है। शहरीकरण और औद्योगीकरण के कारण उपजाऊ कृषि भूमि दिन–प्रतिदिन कम होती जा रही है। इस प्रकार, कृषि उत्पादन के लिए उपलब्ध एकमात्र विकल्प या तो मौजूदा फसलों की उत्पादकता में वृद्धि करना या गैर–पारंपरिक क्षेत्रों को कृषि के अंतर्गत लाना है, जिन्हें आधुनिक प्रौद्योगिकियां प्रदान करके उत्पादक बनाया जा सकता है। इस परिदृश्य में, शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र, जो देश के भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 12 प्रतिशत हिस्सा है, बागवानी विकास के लिए आदर्श है। इस क्षेत्र के अवसरों, शक्तियों, बाधाओं एवं संभावित खतरों के व्यापक विश्लेषण से पता चला है कि इसमें शुष्क क्षेत्रीय फल व सब्जियों के उत्पादन के लिए प्रचुर ऊष्मा, विस्तृत भू–भाग, मानव श्रम की उपलब्धता, महत्वपूर्ण जीन को समेटे हुए जैव विविधता, कीट–व्याधि का कम प्रकोप जैसी विशिष्टता भी है। इसको दृष्टिगत रखते हुए इस क्षेत्र को बागवानी हेतु परिवर्तित करने एवं प्रौद्योगिकियों का विकास करने के लिए 1 अप्रैल, 1993 को सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान बीकानेर, राजस्थान में राष्ट्रीय शुष्क बागवानी अनुसंधान केंद्र (एनआरसीएएच) की स्थापना की गयी। बाद में 27 अक्टूबर, 2000 को इसे केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान (आईसीएआर–सीआईएएच) के नाम से पूर्ण संस्थान का दर्जा दिया गया। साथ ही केंद्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र (सीएचईएस), गोधरा, गुजरात (पहले भाबाअनुसं, बेंगलुरु के तहत) को 1 अक्टूबर, 2000 को इसके क्षेत्रीय केंद्र के रूप में विलय कर दिया गया। उसी समय से, संस्थान प्रौद्योगिकियों को विकसित करने के लिए समर्पित रूप से काम कर रहा है, जो शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के निवासियों के लिए पोषण और आय सुरक्षा ला सकता है। 2005 में गुजरात के पंचमहल में एक कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) भी केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर के प्रशासनिक नियंत्रण में स्थापित किया गया। कृषि विज्ञान केंद्र अपनी स्थापना के बाद से, पंचमहल जिले (गुजरात) के किसानों के सामाजिक एवंआर्थिक उत्थान के लिए प्रौद्योगिकियों के प्रभावी प्रसार द्वारा मदद कर रहा है। शुष्क बागवानी के विकास के लिए संस्थान के अधीन "अखिल भारतीय शुष्क क्षेत्रीय फल समन्वित अनुसंधान परियोजना" भी संचालित की जाती है जिसके देश के विभिन्न राज्यों के कृषि विश्वविद्यालयों एवं भा. कृ. अनु. प. के संस्थानों में 18 केंद्र कार्यरत हैं।

## मुख्य उद्देश्य

- शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों की बागवानी फसलों की टिकाऊ उत्पादकता, गुणवत्ता और उपयोग को बढ़ाने के लिए बुनियादी, नीतिगत और व्यावहारिक अनुसंधान करना।
- शुष्क और अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों की बागवानी फसलों का आनुवंशिक संसाधनों और वैज्ञानिक जानकारी का भंडार।
- प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण, क्षमता संधारण और प्रौद्योगिकियों का प्रभाव आकलन।
- शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों की फल व सब्जी फसलों से संबन्धित प्रौद्योगिकियों की पुष्टि और समन्वित अनुसंधान।

**अधिदेशित मुख्य फसलें (शुष्क क्षेत्रों के लिये) प्रमुख फल फसलें**: बेर, आंवला, खजूर, बेल, अनार, नींबू वर्गीय फल, किन्नौं, लसोड़ा, केर, करौंदा आदि

**प्रमुख सब्जी फसलें**: काचरी, काकड़िया, मतीरा, लौकी, तोरई, टिंडा, खरबूज, सांगरी, सहजन, मिर्च, बैंगन, ग्वारफली, चवलाफली, कुंदरु आदि

**अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के लिये फल फसलें**: आंवला, अनार, सीताफल, बेर, जामुन, इमली, बेल, खिरनी, करौंदा, कैथा आदि

**सब्जी फसलें**: लौकी, कद्दू, बैंगन, टमाटर, मिर्च, ग्वारफली, सहजन, सेमफली आदि

## आधारभूत संरचना

संस्थान का मुख्यालय बीछवाल, बीकानेर (राजस्थान), जो कि श्रीगंगानगर हाईवे पर स्थित है। संस्थान के अंतर्गत एक केंद्र वेजलपुर, गोधरा (गुजरात) में केंद्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र के नाम से है, जो गोधरा–वड़ोदरा राजमार्ग पर स्थित है एवं तकनीकी हस्तांतरण हेतु एक कृषि विज्ञान केंद्र पंचमहल, गुजरात में स्थित है। बुनियादी, नीतिगत और व्यावहारिक अनुसंधान करने के लिए फल, सब्जी, जननद्रव्य संरक्षण, जैव प्रौद्योगिकी, आणविक जीवविज्ञान, मृदा और पौध पोषण, मृदा और जल संरक्षण, पादप कार्यिकी, पादप रोगविज्ञान, कीटविज्ञान और तुड़ाई उपरांत प्रबंधन की अच्छी तरह से सुसज्जित प्रयोगशालाओं के साथ फसल सुधार और फसल उत्पादन के दो प्रमुख विभाग हैं। साथ ही मानव संसाधन एवं तकनीकी हस्तांतरण विभाग व फसलोंपरांत तकनीकी विभाग भी संचालित हैं।

संस्थान मुख्यालय, बीकानेर 125 हेक्टेयर क्षेत्रफल में

फैला हुआ है जिसमें कार्यलय भवन, विभिन्न प्रयोगात्मक ब्लॉक, सुसज्जित प्रयोगशालाएं, पौधशाला, पुस्तकालय, फल समन्वित परियोजना सेल, वैज्ञानिक गृह, प्रेक्षाग्रह, संग्रहालय, कृषि–मौसम विज्ञान इकाई, बीज बिक्री काउंटर जैसी प्रमुख बुनियादी सुविधाएं हैं। इन सुविधाओं के द्वारा परियोजना समन्वय प्रकोष्ठ, पीएमई प्रकोष्ठ, एकेएमयू, राजभाषा, फार्म–प्रक्षेत्र, पौधशाला इकाई, ड्रिप सिंचाई प्रणाली और जल संग्रहण क्षेत्र के माध्यम से अनुसंधान कार्य का संचालन किया जाता है।

## विशेषताएं

शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्र की बागवानी फसलों पर अनुसंधान कार्य करने वाला देश का एक मात्र संस्थान है संस्थान के कुछ मुख्य कार्य इस प्रकार हैं:–

**शुष्क बागवानी का विश्व में सबसे बड़ा जननद्रव्य भंडार**: यह संस्थान शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्र की बागवानी फसलों का व्यापक भंडार "राष्ट्रीय जननद्रव्य भंडार " के रूप में समेटे हुए है जिसमे बीकानेर केंद्र पर 1000 से ज्यादा एवं गोधरा केंद्र पर कुल 571 जननद्रव्य अनुरक्षित हैं दोनो केंद्रो पर प्रमुख रूप से फलों में बेर के कुल 249, अनार के 141, खजूर के 64, बेल के 141, और आंवला के 27 जननद्रव्य हैं। सब्जी फसलों में प्रमुख रूप से काचरी के कुल 68, मतीरा के 46, काकड़िया के 65, खरबूजा के 60, ककडी के 18 तथा बैंगन के कुल 30 जननद्रव्य अनुरक्षित किये गये हैं।

**विश्व में सबसे पहले प्रजाति विकास**: संस्थान जिन फसलों पर अनुसंधान कार्य कर रहा है उनमे से कुछ फसलें ऐसी हैं जिनमें विश्व में प्रथम बार किसी प्रजाति को विकसित किया गया है इनमें मुख्य रूप से हैं:–

| फसल | प्रजाति | फसल | प्रजाति |
|---|---|---|---|
| खेजड़ी | थार शोभा | चिरोंजी | थार प्रिया |
| लसोड़ा | थार बोल्ड | महुआ | थार मधु |
| खिरनी | थार रितुराज | काचरी | ए.एच.के.–119, ए.एच.के.–200 |

**गर्म शुष्क वातावरण के अनुकूल किस्में:** संस्थान ने शोध कार्यो के द्वारा कुछ ऐसी सब्जियो की किस्मों का विकास किया है जो अब तक केवल उष्ण एवं उपोष्ण वातावरण में ही पैदा होती थी संस्थान द्वारा विकसित इन किस्मों को गर्म शुष्क वातावरण के अनुकूल तैयार किया गया है इनमें प्रमख हैं:–

| फसल | प्रजाति | फसल | प्रजाति |
|---|---|---|---|
| तोरई (धारीदार) | थार करनी | बैंगन | थार रचित |
| लौकी | थार समृद्धि | तोरई (चिकनी) | थार तपिश |

## अनुसंधान उपलब्धियाँ

### आनुवांशिक संसाधन प्रबंधन

राष्ट्रीय जननद्रव्य भंडार के तहत, बीकानेर में शुष्क फल एवं सब्जियों तथा गोधरा में, शुष्क और अर्ध–शुष्क फलों एवं सब्जियों के जननद्रव्य संरक्षित किये जा रहे हैं जिसका विवरण निम्नानुसार है:–

### फल

| फसल | संख्या | फसल | संख्या |
|---|---|---|---|
| बेर | 194 | मरुला नट | 01 |
| बोरड़ी | 22 | जामुन | 02 |
| झरबेर | 01 | आर्गन | 01 |
| अनार | 92 | केर | 05 |
| आंवला | 15 | लसोड़ा | 15 |
| खजूर | 64 | कैथ | 03 |
| बेल | 21 | करोंदा | 05 |
| नागफनी | 24 | मनीला इमली | 03 |
| फालसा | 05 | नींबू | 60 |
| अंजीर | 02 | आम | 01 |
| शहतूत | 15 | अमरूद | 03 |

### सब्जियाँ

| फसल | संख्या | फसल | संख्या |
|---|---|---|---|
| काचरी | 68 | लौकी | 20 |
| मतीरा | 46 | करेला | 05 |
| काकड़िया | 65 | धारीदार तोरई | 20 |
| मिर्च | 45 | चिकनी तोरई | 16 |
| खरबूज | 60 | सेमफली | 30 |
| ककड़ी | 18 | ग्वारफली | 02 |
| कुंदरू | 01 | स्वोर्ड बीन | 01 |
| कद्दू | 04 | खेजडी | 14 |
| टिंडा | 10 | ग्वारपाठा | 04 |
| बैंगन | 30 | चवलाफली | 01 |
| सहजन | 10 | वेलवेट बीन | 01 |
| चौलाई | 02 | पालक | 01 |

### गोधरा केंद्र पर

| फसल | संख्या | फसल | संख्या |
|---|---|---|---|
| बेर | 55 | फालसा | 25 |
| सीताफल | 15 | मनीला इमली | 25 |
| अनार | 49 | कैथ | 10 |
| आंवला | 12 | करोंदा | 40 |
| चीकू | 07 | महुआ | 30 |
| बेल | 120 | चिरोंजी | 30 |
| जामुन | 68 | खिरनी | 30 |
| इमली | 25 | सहजन | 30 |

### जननद्रव्य मूल्यांकन

- बेर के जीनोटाइप में गोला, सेब, उमरान, कैथली और बनारसी कड़ाका गर्म शुष्क जलवायु के तहत अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं।
- आंवला की एन.ए.–7 किस्म (51 किग्रा / वृक्ष) की उच्चतम उपज के साथ अच्छा प्रदर्शन कर रही है, इसके बाद चकैया (34 किग्रा /वृक्ष) और एन.ए.–6 (28 किग्रा /वृक्ष) का नम्बर आता है। अत्यधिक ठंढ व पाला गर्म शुष्क क्षेत्र में आँवले की कास्त के लिये एक सीमित कारक है ।
- अनार के 92 जीनोटाइप्स में जालोर सीडलेस (32 किग्रा /पेड़), गणेश (30 किग्रा /पेड़), जी –137 (29 किग्रा /पेड़), पी –23 (27 किग्रा /पेड़) और पी –26 (24 किग्रा /वृक्ष) पैदावार और गुणवत्ता लक्षणों के लिए आशाजनक है। इसके अतिरिक्त भगवा प्रजाति तेजी से फैल रही है।
- बेल की एनबी–5 और एनबी–9 किस्मों ने सिंचित गर्म शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र के तहत अच्छा प्रदर्शन

किया है। एनबी –5 के पांच साल पुराने एक कलम चढ़ाये हुए पौधे में लगभग 40 फल /वृक्ष लगे, जबकि एनबी –9 में लगभग 29 फल /वृक्ष मिले। बौनी किस्म 'गोमा यशी' भी अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में लोकप्रिय हो रही है।

- आंवला, बेर, बेल, तरबूज और खरबूज के लिए विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता (डी.यू.एस.) डस दिशानिर्देशों को अंतिम रूप दिया गया है।
- आईसीएआरडीए, अम्मान, जॉर्डन से खजूर की किस्मों जैसे एमआईएमआई (19), एमएचएन/बी (24) और एमआरकेएस (5) के कुल 48 पौधे मूल्यांकन के लिए लाये गए हैं।
- कृषि एवं सहकारिता विभाग, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के हस्तक्षेप के माध्यम से विभिन्न निजी कंपनियों द्वारा आपूर्ति किए गए खजूर के ऊतक सम्वर्धित कुल 85 पौधों का मूल्यांकन किया जा रहा है।
- मेघालय और नागालैंड राज्यों का सर्वेक्षण किया गया और ठंड/कम तापमान के लिए सहिष्णु आंवला के 16 जननद्रव्य एकत्र किए गए हैं और उनका मूल्यांकन किया जा रहा है।
- कम नमी सहिष्णुता के लिए झरबेर (*जिजिफस नुमेलेरिया*) के एक उत्कृष्ट जर्मप्लाज्म की पहचान की गई है और इसे भाकृअनुप–एनबीपीजीआर, नई दिल्ली के साथ पंजीकृत किया गया है।
- बेर की किस्म छुहारा में एक पादप कार्यिकी विकार स्टाइलर एंड 'ब्राउन टिप'को देखा गया है।
- खरबूज की एक उभय लिंगी लाइन (एएचएमएम/बीआर–8) को आईसीपीजी599709 के साथ आईसीपीजी14043 के रूप में एनबीपीजीआर के साथ विकसित और पंजीकृत किया गया है। फल मक्खी के संक्रमण के लिए खरबूज किस्मों /जीनोटाइप का मूल्यांकन किया गया और यह दर्ज किया गया कि एएचएमएम /बीआर –1, आरएम– 50 और एएचएमएम /बीआर –8 अत्यधिक प्रतिरोधी थे।
- तोरई के दो बेहतर जीनोटाइप्स अर्थात, एएचआरजी–29 और एएचआरजी –41 की पहचान की गयी है, जो मई–जून के दौरान उच्च तापमान के तहत फल जमाव करते हैं। लाइन एएचआरजी –57 को भाकृअनुप–एनबीपीजीआर, नई दिल्ली में आईसी–0599708 के साथ जमा किया गया है।

## फसल सुधार

संस्थान ने शुष्क फल (20) और सब्जी (21) फसलों की कुल 41 किस्में विकसित की हैं जिनका विवरण नीचे दिया गया है–

| क्र.स. | फसल | किस्म |
|---|---|---|
| **फल** | | |
| | आंवला | गोमा ऐश्वर्या |
| | बेल | गोमा यशी, थार दिव्या, थार नीलकण्ठ |
| | बेर | थार सेविका, थार भुबराज, थार मालती |
| | लसोड़ा | थार बोल्ड |
| | जामुन | गोमा प्रियंका, थार क्रांति |
| | अनार | गोमा खट्टा |
| | इमली | गोमा प्रतीक |
| | चिरोंजी | थार प्रिया |
| | खिरनी | थार ऋतुराज |
| | करोंदा | थार कमल |
| | शहतूत | थार लोहित, थार हरित |
| | महुआ | थार मधु |
| | फालसा | थार प्रगति |
| | कैथ | थार गौरव |
| **सब्जियाँ** | | |
| | खेजडी | थार शोभा |
| | मतीरा | थार माणक, ए.एच.–19, ए.एच.–65 |
| | काचरी | ए.एच.के.–119, ए.एच.के.–200 |
| | ककड़ी | ए.एच.सी.–2, ए.एच.सी.–13 |
| | काकड़िया | ए.एच.एस.–10, ए.एच.एस.–82 |
| | लौकी | थार समृद्धि |
| | ग्वारफली | थार भादवी |
| | स्वोर्ड बीन | थार माही |
| | सेमफली | थार कार्तिकी, थार माही |
| | धारीदार तोरई | थार करनी |
| | कद्दू | थार कवि |
| | सहजन | थार हर्षा |

| | | |
|---|---|---|
| | चिकनी तोरई | थार तपिश |
| | पालक | थार हरीपर्णा |
| | कुंदरू | थार सुंदरी |

## फसल उत्पादन

### फलों की फसल के लिए फसल उत्पादन तकनीकियां

- माइक्रोसाइट सुधार के तहत, शुष्क क्षेत्र की रेतीली मिट्टी में बाग की स्थापना के लिए, 60 x 60 x 60 सेमी गड्ढे का आकार शीर्ष मिट्टी, खाद और तालाब की सिल्ट से भरा होता है, जो अनार पौधों की बेहतर स्थापना और विकास के लिए अनुशंसित है।
- उच्च घनत्व रोपण के अंतर्गत आंवला की किस्म एनए–7 में 5 X 5 मीटर की दूरी वाले 400 पौधों/हेक्टेयरको वर्षा आधारित अर्ध–शुष्क परिस्थितियों में रखने की सिफारिश की गई है। उच्च घनत्व रोपण प्रणालियों पर अध्ययनों से पता चला है कि विभिन्न रोपण प्रणालियों ने अर्ध–शुष्क वातावरण के वर्षा आधारित परिस्थितियों में एनए–7 की वानस्पतिक वृद्धि, उपज और गुणवत्ता को काफी प्रभावित किया। विभिन्न रोपण प्रणालियों में (वर्ग– 100 पौधे, हेज रो– 200 पौधे, डबल हेज रो–260 पौधे, क्लस्टर –266 पौधे और युग्मित –130 पौधे /हेक्टेयर), उच्चतम उपज /हेक्टेयर (225.90 क्विंटल) और शुद्ध लाभ रोपण के 11 वें वर्ष में (रु 2,43,035.00 /हेक्टेयर) डबल हेज रो फसल में दर्ज किया गया था। डबल हेज रो प्लांटिंग सिस्टम में स्क्वायर सिस्टम की अपेक्षा उपज में 132.39 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई।
- आंवला में अलग–अलग मल्च के अनुप्रयोग ने प्रदर्शित किया कि धान के पुआल के मल्च में बेसिन की मिट्टी में बैक्टीरिया की आबादी सबसे अधिक थी, जो कि आंवला की उपज पर बेहतर प्रभाव डालती है।
- बहुवर्षीय फल की पत्तियों का एक वर्षीय फसलों पर प्रभाव का अध्ययन से यह प्रदर्शित किया गया है कि बेर की पत्तियों के जलीय अर्क का सरसों जैसी अंतरसस्य फसलों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसलिए सरसों की फसल के अंकुरण पर प्रतिकूल प्रभाव को कम करने के लिए, बेर के केवल विघटित बायोमास का उपयोग करने की सलाह दी जाती है।
- गर्म शुष्क जलवायु में अनार के उत्पादन हेतु पुष्प नियमन पर शोध में भी सफलना पाई गयी है तथा अनार की प्रजातियों जैसे जालोर सीडलेस, भगवा, जी–137 आदि को ड्रिप द्वारा सिंचाई करके उगाना सम्भव हो पाया है।
- बेर की गोला प्रजाति को स्पेलियर सिस्टम पर ट्रेन करके एवं ड्रिप द्वारा सिंचाई से उच्च गुणवत्ता की बेर पैदा करने में सफलता प्राप्त हुई है।

बेर का बगीचा

## फसल विवधिकरण

- बेर और आँवला आधारित फसल प्रणाली के अध्ययन से यह पाया गया कि बेर उद्यान के प्रारंभिक चरण (4 वर्ष) में, ग्वारपाठा और ग्वारफली कम इनपुट और अत्यधिक लाभकारी फसलें हैं। इसी क्रम में बेर के साथ ग्वारफली एवं सरसों की खेती की अनुसंशा संस्थान द्वारा की गयी। इस प्रणाली में बेर के बगीचे के चारों तरफ खेजडी, बेल, फलसा एवं नीम लगाने को भी उचित बताया गया।
- बेर आधारित फसल प्रणाली के तहत, यह पाया गया है कि बेर रोपण स्थूल घनत्व में कमी लाता है, मिट्टी की सरंध्रता और कार्बनिक कार्बन मात्रा को बढ़ाता है। बहुमंजिला फसल पद्धति पर किए गए अध्ययनों से पता चला है कि फसल संयोजन जैसे कि आंवला– बेर– बैंगन – मोठ की फलियाँ–मेथी, आँवला– बेल– करौंदा– मोठ की फलियाँ–चना, आँवला– खेजरी– स्वेडा– मोठ की फलियाँ–सरसों और आँवला– सहजन– सेना– मोथ बीन–जीरा शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र के तहत टिकाऊ और लाभकारी पाये गये।
- आंवला में कद्दूवर्गीय सब्जियों की अंतः–फसल (इंटर–क्रॉपिंग) वर्षा आधारित अर्ध–शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र के तहत आर्थिक रूप से व्यवहार्य

है। विभिन्न कद्दूवर्गीय सब्जियों (लौकी, कद्दू, करेला, तोरई और ककड़ी) के अलावा, आंवला + लौकी रुपये 1,47,312/हेक्टेयर एवं बी : सी अनुपात 4.44 के साथ उच्चतम शुद्ध लाभ प्राप्त करती है।

- पाला प्रभावित उत्तर–पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में आलू की सफल कास्त करने में इस संस्थान को सफलना मिली है। मुख्यतया कुफरी चिपसोना, कुफरी बादशाह एवं कुफरी ज्योति को स्प्रिंकलर से सिंचाई करके अच्छी गुणवत्ता वाली आलू पैदा की जा रही है।

## एकीकृत पोषक तत्व और जल प्रबंधनः

- चीकू और आंवला के लिए डीआरआईएस मानदंड को विकसित किया गया है।
- रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को कम करने के लिए, वर्मी कम्पोस्ट और अकार्बनिक उर्वरकों (50:50) के उपयोग ने गर्म शुष्क क्षेत्र के तहत अनार में पौध ओज, पत्ती के पोषक तत्व और फल उपज के संदर्भ में अच्छी प्रतिक्रिया दी। रेतीली मिट्टी में जैविक खादों के उपयोग से जड़ क्षेत्र में अधिक समय तक मिट्टी की नमी बनाए रखने पर बेहतर प्रभाव पड़ता है, जिससे फसल को पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। अजोटोबैक्टर के साथ मुर्गी खाद का उपयोग लौकी में सबसे अधिक उपज देता है।
- शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र की मौजूदा मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों में, जल उपयोग दक्षता सामान्य रूप से कृषि योग्य फसल और विशेष रूप से फलों की फसलों के लिए बेहद खराब है। अनार और बेर में ड्रिप के माध्यम से 0.75 सीपीई पर वैकल्पिक दिन सिंचाई और नाइट्रोजन की सिफारिश की गई खुराक ने पौध ओज, फल की उपज और पत्ती के पोषक तत्व के संदर्भ में आशाजनक प्रतिक्रिया दी। ड्रिप फर्टिगेशन से पाइप सिंचाई की तुलना में अधिकतम जल उपयोग दक्षता के साथ 25 प्रतिशत उर्वरक और 25 प्रतिशत से अधिक सिंचाई पानी की बचत होती है।
- किन्नौं फल की फसल में, अनुशंसित खुराक (नत्रजनः 1250 ग्राम, फास्फोरसः 500 ग्राम और पोटाशः 750 ग्राम/पौधा/वर्ष) का 50 प्रतिशत नाइट्रोजन, 80% फास्फोरस और 30% पोटाश फरवरी से जुलाई तक दिया जाना चाहिए और शेष 50 प्रतिशत नाइट्रोजन, 20% फास्फोरस और 70% पोटाश, उच्च उपज और बेहतर गुणवत्ता वाले फल प्राप्त करने के लिए ड्रिप फर्टिगेशन के माध्यम से ठोस घुलनशील उर्वरकों के साथ अगस्त से नवंबर के दौरान दिया जाना चाहिए।
- मिट्टी में 0–0.15 और 0.15–0.30 मीटर की गहराई की सूक्ष्मजीवीय जनसंख्या के विश्लेषण से पता चला है कि कुल सूक्ष्मजीवीय जनसंख्या पूर्ण नियंत्रण में न्यूनतम थी और उपचार (एन, पी, के, एफवाईएम और बायोफर्टिलाइजर के कंसोर्टियम की अनुशंसित मात्रा) में उच्चतम थी। इसी तरह किन्नौं में, सबसे अच्छा फल वजन, फल की उपज, टीएसएस, अम्लता और रस की मात्रा उपरोक्त उपचार में देखी गई।
- आम में, एनपीके की अनुशंसित मात्रा + एजोटोबैक्टोर + पीएसबी + गोबर की खाद देने से पौधे की बेहतर वृद्धि पायी गयी। खाद के विभिन्न रूपों के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए किए गए एक प्रयोग में पता चला कि टमाटर और ग्वारफली में नीम से बने खाद ने सबसे अधिक उपज दी।

## प्रवर्धन

- शुष्क बागवानी फसलों के उत्पादन को अनुकूलित करने के लिए, कुछ कृषि तकनीकों को गर्म शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र के लिए मानकीकृत/परिष्कृत किया गया है। आंवला, केर, लसोड़ा, बेर, जामुन, इमली, खेजडी, अनार, चीकू आदि की प्रवर्धन तकनीकों को मानकीकृत किया गया है। विभिन्न फलों की फसलें, जहाँ प्रसार तकनीकों को मानकीकृत किया गया हैः–

| फसल | प्रवर्धन विधि | प्रवर्धन का समय |
|---|---|---|
| आंवला | पैच कलिकायन | जून–जुलाई |
| बेल | कोमल काष्ठ कलम और पैच कलिकायन | जून–जुलाई |
| बेर | टी–कलिकायन | जून–जुलाई |
| चिरौंजी | कोमल काष्ठ कलम | जुलाई–अगस्त |
| जामुन | कोमल काष्ठ कलम और पैच कलिकायन | जुलाई–अगस्त |
| केर | कलम और सूक्ष्म प्रवर्धन | अगस्त–सितम्बर |
| खेजरी | पैच कलिकायन | जून–अगस्त |
| लसोड़ा | पैच कलिकायन | जून–अगस्त |
| अनार | कलम | फरवरी व जुलाई |
| इमली | कोमल काष्ठ कलम और पैच कलिकायन | जुलाई–अगस्त |

- ऊतक सम्वर्धित पौधों को सख्त करने और शुष्क फलों और क्लोनल मूलवृंत के वनस्पतिक प्रवर्धन के लिए हाई–टेक नर्सरी परिसर की स्थापना की गई है। ग्रीन हाउस के तहत खेजड़ी, बेर, आंवला, अनार, नीबू वर्गीय प्रजाति और ग्वारपाठा के प्रवर्धन पर प्रारंभिक अध्ययन किए गए। सभी प्रजातियों के साथ अब तक प्राप्त परिणाम उत्साहजनक थे। अनार और नीबू वर्गीय फलों की माइक्रोकटिंग और एलोवेरा के माइक्रोसकर में अच्छा परिणाम प्राप्त किया गया।

## शुष्क सब्जियों के लिए फसल उत्पादन तकनीकियां

- शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्र के प्रतिकूल पर्यावरण वाले क्षेत्रों में सब्जियों के प्रति इकाई क्षेत्र में अधिकतम लाभ के लिए विकसित या उन्नत तकनीकें भूमि चयन, फील्ड माइक्रो–जलवायु प्रबंधन, बीज उपचार, बुवाई की विधि व समय, पौध जनसंख्या, मृदा–जल संरक्षण, सिंचाई प्रणाली, पर्ण आहार और फसल सुरक्षा उपाय से संबंधित हैं। इसके अलावा, शुष्क सब्जियों की लाभदायक खेती के लिए तुड़ाई उपरांत फसल प्रबंधन, फसल मूल्य सम्वर्धन, और जैविक खेती जैसे विषय पर भी ध्यान दिया गया है।
- गर्म शुष्क वातावरण के लिए काचरी, काकड़िया, मतीरा, तोरई, ककड़ी, खरबूज की फसल उत्पादन तकनीक का मानकीकरण किया गया है।
- नियंत्रित सिंचाई प्रणालियों में, शुष्क परिस्थितियों में कद्दूवर्गीय फसलों के लिए बूंद दृबूंद सिंचाई विधि सबसे उपयुक्त है। इनलाइन ड्रिपर्स (4 लीटर /घंटा) के साथ 1.5–2.0 मीटर X 50 सेमी की दूरी पर सिंगल लेटरल लाइन्स (12–14 मिमी साइज) को काचरी, काकडिया और तरबूज (मतीरा) के लिए सबसे उपयुक्त पाया गया। शुष्क परिस्थितियों में सिंचाई की चौनल प्रणाली की तुलना में इन फसलों में लगभग 25–30 प्रतिशत फलों की उपज में वृद्धि

हुई। मौसमी कृषि–जलवायु और मौसम की स्थिति, फसल की क्षमता और उपलब्ध संसाधनों के आधार पर, ड्रिप सिंचाई को अपनाते हुये एक पूर्ण उत्पादन तकनीक विकसित की गई है जिसकी शुष्क क्षेत्र के कद्दूवर्गीय फसलों की व्यावसायिक खेती के लिए सिफारिश की जाती है।

- नियंत्रित पर्यावरण की स्थिति के तहत खीरा और टमाटर की खेती के लिए प्रोटोकॉल को मानकीकृत किया गया है। हिल्टन और कियान द्वारा प्राकृतिक वातानुकुलित ग्रीन हाउस परिस्थितियों के तहत खीरा किस्म इस्तिस से 6.5 किग्रा. प्रति वर्ग मीटर की औसत उपज प्राप्त की गई ।

## तुड़ाई उपरांत प्रौद्योगिकी

- बेर की किस्म गोला के फलों की भंडारण अवधि को बेहतर बनाने के लिए फलों को कैल्शियम नाइट्रेट (0.5 प्रतिशत) और वीरसोल (2.5 प्रतिशत) से उपचारित करने के बाद छिद्रित पॉलीथीन बैग में पैक किया गया। इस उपचार द्वारा फलों को 28$\pm$2. $^0$से. के तापमान पर रखने से फलों का वजन घटने में कमी आई। बाविस्टिन के साथ उपचारित किये गए फलों ने 10.60 प्रतिशत तक रोगसंबंधी नुकसान को कम किया। कैल्शियम नाइट्रेट परिवेश के तापमान के तहत 9 दिनों तक फल के रंग को बनाए रख सकता है।
- सांगरी (कोमल फली) के निर्जलीकरण के लिए, 2 प्रतिशत नमक के घोल में ब्लांचिंग ने पुनर्जलीकरण के बाद सबसे अच्छी गुणवत्ता दी है। खेजड़ी की सूखी फली (खोखा) से बिस्कुट तैयार करने का भी प्रयास किया गया।
- लंबी दूरी के परिवहन के लिए पैकेजिंग सामग्री और बेर व आंवला में परिपक्वता मानकों पर काम किया गया। यह देखा गया कि आंवला में न्यूनतम नुकसान तब पाया गया जब फलों को समाचार पत्र लाइनर के साथ नालीदार फाइबर बोर्ड बॉक्स में संग्रहीत किया गया था।
- बेल फल गूदे से पाउडर को तैयार किया गया और कमरे के तापमान पर भंडारित किया गया। यह देखा गया कि बेल फल गूदे के पाउडर को कमरे के तापमान पर 6 महीने तक और रेफ्रिजरेटेड परिस्थितियों में 12 महीने से अधिक समय तक बिना रंग बदले रखा जा सकता है। पाउडर से तैयार किया गया बेल आरटीएस (रेडी–टू–सर्व) स्कोर के आधार पर स्वीकार्य पाया गया। बेल के गूदे से बर्फी

भी तैयार की गई और यह परीक्षकों के बीच स्वीकार्य पाई गई।

- खजूर आरटीएस को खजूर के डोका स्टेज के फलों से तैयार किया गया और यह स्वीकार्य था। सबिया और मेदजूल किस्मों से 10 और 20% लुगदी पाउडर का उपयोग कर खजूर बिस्कुट तैयार किये गये और स्कोर के आधार पर स्वादाकार परीक्षण किया गया। खजूर बिस्कुट स्वीकार्य और प्रोटीन व चीनी में समृद्ध पाए गए।
- आँवला कतरन (आंवला श्रेड्स) को नमक के साथ उपचार के बाद सौर सूखने से तैयार किया गया। इसी तरह, आंवला का तेल रहित अचार 10–15% नमक के साथ तैयार किया गया ।
- बेर के फलों से स्लाइस जो गोमा कीर्ति किस्म का उपयोग करके तैयार किए गए हैं। तरबूज से कैंडी तैयार किया गया।
- करौंदा जीनोटाइप सीआईएएच सलैक्शन–1 के फलों से नेचुरल डाई को निकाला गया जिसे सूती कपड़े रंगने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। एक प्राकृतिक कोलोरांट सह पोषक तत्व–पूरक करौंदा जीनोटाइप सीआईएएच सलैक्शन–1 के फलों से निकाला गया ।

## फसल सुरक्षा

- ट्राइकोडर्मा और स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस के विभिन्न आइसोलेट्स शुष्क पारिस्थितिक तंत्र के मिट्टी और पौधों के नमूनों से अलग किये गये और इन आइसोलेट्स के बीच विविधता को दर्ज किया गया है। प्रमुख कवकनाशकों के लिए निहित सहिष्णुता सहित मूलभूत अनुसंधान के एक अनुक्रम के बाद, कुछ उत्कृष्ट आइसोलेट्स, जैसे स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस के सीआईएएच–111, सीआईएएच–196, सीआईएएच–311 और ट्राइकोडर्मा के सीआईएएच–151, सीआईएएच–240 का बड़े पैमाने पर गुणन किया गया।
- अर्ध–शुष्क परिस्थितियों में, अनार के सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग का नियंत्रण टोपसिन–एम (0.1 प्रतिशत), कैपटाफ (0.2 प्रतिशत) या डायथेन एम–45 (0.2 प्रतिशत) के 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव द्वारा प्राप्त किया गया। आँवला के फलों की सड़न को डाइथेन एम –45 (0.2 प्रतिशत) या कवच (0.2 प्रतिशत) के 2–3 छिड़काव द्वारा नियंत्रित पाया गया।
- मिर्च की पर्ण संकुचन बीमारी के लिए कोट प्रोटीन (सीपी) जीन प्राइमर को डिजाइन किया गया। इस जीन का क्लोन और अनुक्रम किया गया। इस जीन की लंबाई 747 इंच थी। इस अनुक्रम को नेशनल सेंटर फॉर बायोटेक्नोलॉजी इन्फॉर्मेशन में प्रस्तुत किया गया है।
- लौकी में अल्टरनेरिया लीफ ब्लाइट (पत्ती झुलसा) और सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग का प्रबंधन विकसित किया गया।
- राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में बेर फल मक्खी एवं खरबूज में कीटों के नियंत्रण हेतु आईपीएम मॉड्यूल विकसित किया गया।
- गर्म शुष्क स्थिति के अंतर्गत बेल में नींबू तितली और खेजरी में गाल मिज का प्रबंधन कार्यक्रम विकसित किया गया है। बेर, तरबूज, काकडिया और तोरई में फल मक्खी के खिलाफ प्रतिरोध के नए स्रोतों की पहचान की गयी है।
- राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में पीलू में स्माल सैल्मन अरब, खेजड़ी में कोरिड बग व मोथ और लसोड़ा में टिंजिड बग कीट को पहली बार दर्ज किया गया है।

## तकनीकी हस्तांतरण

- बीकानेर जिले के इंगांनहर क्षेत्र में प्रारंभिक सर्वेक्षण में पता चला है कि 32 प्रतिशत किसान मतीरा, काकडिया, काचरी, 18 प्रतिशत किसान बैंगन, लौकी और 14 प्रतिशत किसान बेर और आंवला उगाते हैं। इस क्षेत्र में शुष्क बागवानी के विकास में प्रमुख बाधाएँ हैं: गरीबी, कम आय, उत्पादन सामग्री की उच्च लागत, परिवहन सुविधाओं की कमी, बीज/रोपण सामग्री की कमी, किसानों के प्रशिक्षण की कमी और अनियमित वर्षा।
- शुष्क बागवानी तकनीकों के हस्तांतरण के लिए, किसानों और खेत महिलाओं के लिए कैंपस और ऑफ कैंपस प्रशिक्षण कार्यक्रम और समूह चर्चा व्यवस्थित किए गए। वर्तमान में, संस्थान में विकसित प्रौद्योगिकियों का प्रदर्शन करने के लिए किसान के खेत पर कुछ प्रदर्शन किए गए हैं। संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा इनकी नियमित निगरानी की जा रही है।
- कृषि बागवानी के बारे में ज्ञान प्रदान करने के लिए प्रक्षेत्र दिवस और प्रक्षेत्र भ्रमण का आयोजन किया जाता है। अन्य विस्तार गतिविधियाँ जैसे कि रेडियो

और टी. वी. वार्ता, किसान मेले के दौरान प्रदर्शनी का आयोजन, साहित्य का वितरण आदि कृषक समुदाय के कल्याण के लिए संस्थान द्वारा किया जा रहा है।

- शुष्क फलों और सब्जियों के उपयोग में ग्रामीण ज्ञान पर जानकारी प्रलेखित की गई है और छोटे पैमाने पर वैज्ञानिक रूप से उन्हें बनाने का प्रयास जारी है।
- पारंपरिक सब्जी की खेती, उपयोग और विपणन प्रणाली, फसल के पैटर्न और किसानों की सामाजिक–आर्थिक विशेषताओं में बदलाव, स्वदेशी तकनीकी (आईटीके) की जानकारी की जांच की गई। प्रौद्योगिकियों को अपनाने में किसानों के समक्ष आने वाली प्रमुख बाधाओं को भी सूचीबद्ध किया गया।
- संस्थान में विकसित तकनीकों को किसानों तक पहुंचाने के लिए बहुतायत में आन–कैंपस / ऑफ कैंपस प्रशिक्षण आयोजित किए हैं। इसके परिणामस्वरूप, जो क्षेत्र ज्यादातर उनके व्यवसाय के रूप में पशुपालन कर रहे थे, शुष्क बागवानी फसलों की खेती को अपनी आजीविका के रूप में अपनाया है।

## संपर्क और सहयोग

- राष्ट्रीय स्तर पर, संस्थान पादप जैव प्रौद्योगिकी, आईसीएआर–एनबीपीजीआर, नई दिल्ली, उद्यानिकी विभाग, राजस्थान सरकार, महाराणा प्रताप कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, एसके राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर, गैर सरकारी संगठनों (गौशाला संस्थान, खादी ग्रामोद्योग, बीकानेर, अंबुजा फाउंडेशन, मारवाड़ मुंडवा, नागौर, उरमुल सेतु, बीकानेर, पसारी सामाजिक और ग्रामीण विकास अनुसंधान फाउंडेशन, चिड़ावा, (झुंझुनू) और बीकानेर व सरदारशहर में स्थित कृषि विज्ञान केंद्र के साथ सहयोग करता है।
- केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिब्रू यूनिवर्सिटी ऑफ जेरुसलम, इजराइल, मिस्र की सरकार और संयुक्त अरब अमीरात सरकार, आदि के साथ सहयोग करता है
- एसके राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर में संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा पीजी अनुसंधान और शिक्षण का कार्य भी किया जाता है।
- खजूर के शोध कार्य को गति देने के लिये संस्थान द्वारा एक नेटवर्क परियोजना का संचालन किया जा रहा है जिसमें ऊतक सम्वर्धन द्वारा तैयार पौधों का चार संस्थानों सी.आई.ए.एच., बीकानेर, काजरी जोधपुर, एस.डी.ए.यु. सरदार कृषिनगर एवं कृषि विश्वविद्यालय, आनंद द्वारा परीक्षण किया जा रहा है।
- इसके अतिरिक्त संस्थान में लगभग एक दर्जन बाह्य वित्त पोषित परियोजनायें संचालित की जा रही है।

## कृषि विज्ञान केंद्र, पंचमहल, गुजरात

कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) की स्थापना केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर के प्रशासनिक नियंत्रण में 2005 में गुजरात के पंचमहल जिले के वेजलपुर में की गई थी। केवीके पंचमहल क्षेत्र के किसानों और कृषक महिलाओं को बागवानी परिदृश्य में सुधार करने में मदद कर रहा है और बदले में निवासियों को पोषण और आय सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु प्रेरित कर रहा है। इसके लिये, केवीके ने किसानों को नवीनतम तकनीक प्रदान करने के लिए, प्रशिक्षण कार्यक्रम, कृषि गोष्ठी, प्रदर्शनी और समूह बैठकों आदि का आयोजन करके प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए हैं।

## हितधारकों को दी जानी वाली सेवाएं

**बीज और रोपण सामग्री:** संस्थान शुष्क सब्जियों काचरी, मतीरा, काकडिया, तुरई, तरबूज और ग्वार के बीज और बेर, बेल, आंवला, अनार, जामुन, फालसा, किन्नो, करौंदा, मीठा संतरा, शहतूत, लसोड़ा, सहजन, खेजरी, ग्वारपाठा आदि की रोपण सामग्री को किसानों के लिए उत्पादित किया जाता है । इसके अतिरिक्त, अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत शुष्क क्षेत्र फल केंद्रों पर भी रोपण सामग्री का उत्पादन किया जा रहा है। किसानों और लाइन विभागों के बीच वितरण के लिए संस्थान द्वारा हर साल लगभग 2.5 लाख रोपण सामग्री का उत्पादन किया जाता है।

**मृदा स्वास्थ्य कार्ड की तैयारी:** संस्थान शुष्क क्षेत्र के किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड तैयार करने की सुविधा भी प्रदान कर रहा है, जिससे शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों की विभिन्न फसलों में उत्पादकता और उर्वरक उपयोग दक्षता में सुधार हो सके। संस्थान ने बीकानेर के किसानों को पहले ही मृदा स्वास्थ्य कार्ड वितरित किए हैं।

**क्षेत्रीय भाषा में वैज्ञानिक साहित्य:** संस्थान नियमित रूप से किसानों के लिए विभिन्न फसलों, किस्मों और प्रौद्योगिकियों पर हिंदी में फोल्डर और पत्रक तैयार कर रहा है और मुफ्त में उनका वितरण कर रहा है।

**प्रशिक्षण और कौशल विकास कार्यक्रम:** संस्थान किसानों को शुष्क और अर्ध–शुष्क फलों और सब्जियों

के फसल आधारित कृषि क्रियाओं, पौधशाला प्रबंधन, संरक्षित खेती, पौधों की सुरक्षा, फसल की तुड़ाई उपरांत प्रबंधन और मूल्य संवर्धन पर प्रशिक्षण प्रदान कर रहा है। इसी तरह, ग्रामीण युवाओं, प्रगतिशील किसानों के बीच उद्यमशीलता विकसित करने के लिए विभिन्न कौशल विकास मॉड्यूल तैयार किए गए हैं।

**तकनीकी सलाहकार सेवाएंः** संस्थान के वैज्ञानिक किसानों और नर्सरीजनों के लिए भी समय–समय पर आवश्यक्तानुसार विभिन्न माध्यमों जैसे कि क्षेत्र का दौरा, प्रक्षेत्र दिवस का आयोजन, वार्तालाप बैठकें, इलेक्ट्रॉनिक /प्रिंट मीडिया आदि के माध्यम से मार्गदर्शन कर रहे हैं । संस्थान प्रौद्योगिकियों के त्वरित प्रसार के लिए भागीदारी मोड में किसानों के खेत पर नई किस्में और प्रौद्योगिकियां का भी प्रदर्शन कर रहा है ।

## संस्थान का रजत जयंती वर्ष समारोह

संस्थान की स्थापना के 25 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में भारतीय शुष्क बागवानी समिति ने केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर के सहयोग से 27–29 अक्टूबर, 2018 के दौरान "उत्पादकता और आर्थिक सशक्तीकरण हेतु शुष्क बागवानी" विषय पर एक राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन का उद्घाटन 27 अक्टूबर 2018 को डॉ. त्रिलोचन महापात्र, सचिव, डेयर एवं महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा किया गया, जो कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। डॉ. आनंद कुमार सिंह, उप महानिदेशक (बागवानी विज्ञान) ने समारोह की अध्यक्षता की और डॉ. कीर्ति सिंह, पूर्व अध्यक्ष, एएसआरबी नई दिल्ली, पदम श्री डॉ. ब्रम्ह सिंह और डॉ. एस.डी. शिखामणी सम्मानीय अतिथि के रूप में और डॉ. डब्ल्यू.एस. ढिल्लों और डॉ. टी. जानकीराम, सहायक महानिदेशक (बागवानी विज्ञान) समारोह के विशिष्ट अतिथि थे। इस सम्मेलन में देश के विभिन्न प्रदेशों एवं संस्थाओं से 500 से अधिक लोगों ने भाग लिया।

सम्मेलन के दौरान पांच प्रकाशन यथा सम्मेलन स्मारिका, सारांश की ई–बुक, 'भारतीय बागवानी' पत्रिका का विशेष अंक, हिंदी पत्रिका 'मरु बगवाणी' और शुष्क एवं अर्ध–शुष्क बागवानी पर एक पुस्तक का विमोचन किया गया।

उद्घाटन समारोह के बाद डॉ. एस.डी. शिखामणी, (पूर्व कुलपति, डॉ. वाईएसआरएचयू, आंध्र प्रदेश) शुष्क बागवानी पर रजत जयंती व्याख्यान दिया। डॉ शिखामणि ने इन पारिस्थितिक तंत्र के कठोर वातावरण का सामना करने के लिए शुष्क और अर्ध–शुष्क बागवानी फसलों द्वारा अपनाई गई विभिन्न अनुकूलन प्रणालियों पर प्रकाश डाला। डॉ. ब्रम्हा सिंह द्वारा 'बागवानी के माध्यम से ठंडी शुष्क क्षेत्रों की हरियाली' विषय पर विशेष व्याख्यान दिया गया। भारतीय शुष्क बागवानी समिति द्वारा डॉ डी.जी. धंदर लाइफटाइम अचीवमेंट, डॉ जी. एस. चीमा अवॉर्ड एवं उद्यान श्री पुरस्कारों को भी संबंधित क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य के लिये प्रदान किया गया। समिति के अध्यक्ष ने 14 आजीवन सदस्यों को समिति के फेलो के रूप में मनोनयन किया।

सम्मेलन के दौरान विभिन्न विषयों पर तकनीकी सत्र का आयोजन भी किया गया :–

- शुष्क बागवानीः पुनरावलोकन एवं संभावना
- आनुवंशिक संसाधन प्रबंधन, सुधार और जैव प्रौद्योगिकी संबंधी हस्तक्षेप
- उत्पादकता वृद्धि हेतु नवीन दृष्टिकोण
- गुणवत्ता बीज और रोपण सामग्री के उत्पादन के लिए दृष्टिकोण
- जैविक दबाव प्रबंधन
- जैविक खेती, एकीकृत फसल/कृषि प्रणाली और अजैविक दबाव प्रबंधन में उन्नति
- तुड़ाई उपरांत फसल प्रबंधन, मूल्य संवर्धन और व्यापार, सतत विकास के लिए नीतियां, पारिस्थितिकवाद और प्रभाव मूल्यांकन

इसके आलावा, किसानों–उद्यमियों–वैज्ञानिकों की बातचीत पर एक बहुत महत्वपूर्ण सत्र आयोजित किया गया जिसमें कृषि आधारित उद्योगों, किसानों और राज्य सरकार के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। एनएचबी, नाबार्ड, एपीडा द्वारा सरकार की पहल/योजनाओं एवंकिसानों और उद्योगों के सामने आने वाली समस्याओं जैसे विभिन्न मुद्दों पर गहन विचार–विमर्श किया गया।

डॉ. बी.एन.एस. मूर्ति (आयुक्त बागवानी, भारत सरकार, नई दिल्ली) और प्रो. (डॉ.) पी.एल. सरोज (निदेशक, केशुबासं और आयोजन समिति के अध्यक्ष) एवं डॉ एस. एन. पाण्डे की उपस्थिति में अधिवेशन का अंतिम सत्र आयोजित किया गया जिसमें विभिन्न तकनीकी सत्रों की विभिन्न सिफारिशों पर चर्चा हुई। कार्यक्रम से पूर्व एवंबाद में प्रेस वार्ता का भी आयोजन किया गया। विभिन्न समाचार पत्रों में सम्मेलन का प्रकाशन हुआ।

## भविष्य में सुधार हेतु अनुसंधान वाले क्षेत्र

**आनुवंशिक संसाधन प्रबंधन:** इस क्षेत्र में उपलब्ध प्राकृतिक जैव विविधता को इकट्ठा करने, उसकी विशेषता को चिन्हित और मूल्यांकन करने और एक मजबूत जीन बैंक विकसित करने की आवश्यकता है, जिस पर देश अपनी भविष्य की जरूरतों के लिए निर्भर हो सके।

**आनुवंशिक सुधार:** जैविक और अजैविक दबाव के खिलाफ प्रतिरोध के लिए और अन्य गुणवत्ता वाले लक्षणों के जीन को उपलब्ध जीन पूल से मानक किस्मों में स्थानांतरित करने की आवश्यकता है।

**शुष्क बागवानी फसलों के उत्पादन और उत्पादकता में सुधार:** भारत में शुष्क बागवानी फसलों का उत्पादन और उत्पादकता कई उन्नत देशों की तुलना में बहुत कम है। इसलिए उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने के लिए तकनीकी हस्तक्षेप की तत्काल आवश्यकता है।

**शुष्क बागवानी फसलों में जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग:** जीन टैगिंग के लिए आणविक मार्करों का उपयोग, वन्य प्रजाति से जीनों का स्थानांतरण, जैविक और अजैविक दबाव के लिए प्रतोरोधी ट्रांसजीन का विकास, सूक्ष्म प्रवर्धन, आदि संभावित क्षेत्र हैं। व्यापक गुणन और जीन स्थानांतरण, जीन की पहचान और अनुक्रमण के लिए जैव प्रौद्योगिकी तकनीकियों को विकसित करने की आवश्यकता है।

**आधारभूत और रणनीतिक अनुसंधान:** उचित प्रौद्योगिकियों को विकसित करने हेतु एक मजबूत सूचना आधार प्रदान करने के लिए, बुनियादी अनुसंधान अत्यंत महत्वपूर्ण है। चूंकि शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र की अपनी अलग समस्याएं हैं, इसलिए जैविक और अजैविक दबाव सहिष्णुता प्रक्रिया, बीज और पौध ओज, बंदवचल आर्किटेक्चर आदि पर बुनियादी पहलुओं के जांच की आवश्यकता है। संयुक्त सह–प्रणाली, उत्पादन लागत में कमी, स्वयं सहायता समूह खेती, रसायन पर कम निर्भरता आदि विषयों को किसानों तक पहुंचाने की आवश्यकता है।

**बेमौसम फसल उत्पादन (ऑफ–सीजन क्रॉप प्रोडक्शन):** बागवानी फसलों के बेमौसम उत्पादन को विशेष रूप से सब्जियों को बढ़ावा देने के लिए पूरे साल गुणवत्ता उपज की उपलब्धता को बढ़ाने और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग को अधिकतम करते हुये सामान्य मौसम के आलावा फसल लेने की आवश्यकता है। बेमौसम उत्पादन के लिए उच्च मूल्य वाली फसलों की संरक्षित खेती, ड्रिप/स्प्रिंकलर सिंचाई के माध्यम से पानी और पोषक तत्वों का कुशल उपयोग और पलवार के लिए जैविक/विघटनशील बायोमास का उपयोग करना होगा। यह मिट्टी के तापमान को स्थिर करेगा, सिंचाई पानी की आवश्यकता को कम करेगा, नमी को बनाए रखेगा और खरपतवार की वृद्धि को कम करेगा और बाद में उच्च गुणवत्ता वाली उपज प्रदान करेगा। उच्च उत्पादन प्राप्त करने के लिए इनपुट उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिए सटीक खेती को बढ़ावा देने की भी आवश्यकता है।

**फसल विविधीकरण:** टिकाऊ फसल प्रणाली, एकीकृत कीट और रोग प्रबंधन के लिए कृषि तकनीक विकसित करने की बहुत आवश्यकता है ताकि घरेलू उद्देश्य और निर्यात करने के लिए फल और सब्जियों के उत्पादन के लिए इन जमीनों का लाभदायक उपयोग किया जा सके।

**संसाधन प्रबंधन:** जल संचयन, सब्सट्रेट प्रबंधन, पोषक तत्व प्रबंधन और फसल मॉडल के लिए एकीकृत दृष्टिकोण विकसित करने के लिए प्रयासों की आवश्यकता होती है, जो इन शक्तियों का सबसे अच्छा उपयोग कर सकते हैं और बायोमास में परिवर्तित कर सकते हैं।

**जैविक खेती:** जैविक आदानों के कुशल उपयोग पर अनुसंधान करने की आवश्यकता है। जैविक उत्पादों के प्रमाणन के लिए मानदंडों का मानकीकरण और प्रमाणन एजेंसी तय करना तुरंत संबोधित किया जाना चाहिए।

**पौध संरक्षण:** शुष्क और अर्ध–शुष्क बागवानी फसलों में प्रमुख कीटों और रोगों के प्रबंधन के लिए एकीकृत प्रबंधन रणनीतियों की आवश्यकता होती है। रसायनों का उपयोग कम से कम किया जाना चाहिए और प्रतिरोधी जीनोटाइप का उपयोग प्रजनन में नई किस्मों के विकास हेतु प्राथमिकता से करना होगा। रसायनों के उपयोग द्वारा तुड़ाई उपरांत प्रमुख कीटों और रोगों का प्रबंधन और कटाई की गई उपज में रसायन अवशेषों के विश्लेषण की भी आवश्यकता होती है।

**प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण:** संस्थान ने बागवानी तकनीकों में विभिन्न नवाचारों को विकसित किया है जिन्हें प्रशिक्षण और क्षेत्र प्रदर्शनों के माध्यम से किसानों को

आधुनिक उपकरणों के साथ स्थानांतरित किया जाना है।

**तुड़ाई उपरांत फसल प्रबंधनः** उपयुक्त प्रौद्योगिकी विकसित करके फसल के तुड़ाई उपरांत नुकसान को कम करने के लिए सभी प्रयासों की आवश्यकता है। इसके अलावा, उत्पाद का निर्जलीकरण किया जा सकता है क्योंकि क्षेत्र में उच्च सौर विकिरण, कम आर्द्रता और रोगों और कीटों का कम प्रकोप है। प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त किस्मों को विकसित किया जाना चाहिए।

**मानव संसाधन विकासः** उच्च उत्पादकता प्राप्त करने के लिए बागवानी उत्पादन प्रणाली और तुड़ाई उपरांत फसल प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं में प्रशिक्षित मानव शक्ति निश्चित रूप से आवश्यक है। इसके लिए संस्थान के कर्मचारियों को राष्ट्रीय/अंतर्राष्ट्रीय प्रशिक्षण कार्यक्रमों, संगोष्ठी और कार्यशालाओं में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।

**स्वमूल्यांकनः** यह संस्थान आई. एस. ओ. 9001–2008 प्रमाणित है जो शुष्क बागवानी के क्षेत्र में उत्तरोत्तर प्रगति कर रहा है। जहाँ संस्थान की स्थापना के समय (1993–94) में शुष्क क्षेत्रीय फलों का क्षेत्रफल केवल 1.43 लाख हेक्टेयर एवं उत्पादन 14.29 लाख टन था वहीं, वर्तमान में (2016–17) क्षेत्रफल 4.99 लाख हेक्टेयर एवं उत्पादन 57.16 लाख टन हो गया है। शुष्क क्षेत्रों में बागवानी फसलों की वृद्धि दर राष्ट्रीय बागवानी वृद्धि दर के लगभग बराबर है। शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में अनार, खजूर, प्याज, शकरकंद एवं आलू की खेती तेजी से बढ़ रही है। कुछ नये फल वृक्ष जो बाग के रूप में अपनाये नहीं गये थे जैसे जामुन, बेल, चिरौंजी, लसोड़ा, खेजडी, करोंदा आदि की मांग भी बढ़ रही है। अखिल भारतीय समन्वित फल परियोजना द्वारा विकसित अनार की भगवा प्रजाति एवं आँवले की एन.ए.–7 प्रजाति देश में अनार एवं आँवले के कुल क्षेत्रफल का लगभग 86.1 प्रतिशत एवं 74.0 प्रतिशत भाग पर क्रमशः अकेले उगायी जा रही है। कृषकों के बीच इस संस्थान द्वारा विकसित प्रजातियों की भारी मांग है। इस संस्थान को अपने डेटाबेस को कृषि पोर्टल पर सबसे पहले अपलोड करने एवं राजभाषा हिंदी को प्रोत्साहन के लिये भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा दो बार सम्मानित किया जा चुका है। किंतु शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्र की विषम परिस्थितियों में कृषकों की आय बढ़ाने के लिये अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है, जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं सामूहिक प्रयास से ही सम्भव होगा।

**"किसी भाषा की उन्नति का पता उसमें प्रकाशित हुई पुस्तकों की संख्या तथा उनके विषय के महत्व से जाना जा सकता है।"**
**- गंगाप्रसाद अग्निहोत्री**

**"जीवन के छोटे से छोटे क्षेत्र में हिंदी अपना दायित्व निभाने में समर्थ है।"**
**- पुरुषोत्तमदास टंडन**

# खजूर उत्पादन में परागण का महत्व

**आर.एस. सिंह एवं रामकेश मीणा**
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

खजूर (*फीनिक्स डेक्टीलीफेरा*) गर्म–शुष्क जलवायु में उगाया जाने वाला फल वृक्ष है,। इसके पौधे एक बीज पत्रीय होने के कारण मूसला जड़ें नहीं होती हैं लेकिन जड़ें एके मीटर से भी अधिक गहराई तक जमीन में जाती है। इसके पौधों में सूखा, लवणता तथा अत्यधिक शुष्क गर्म वातावरण सहने की क्षमता होती। प्राकृतिक रूप में गुजरात के कच्छ क्षेत्र में अधिकाशतः खजूर के पौधे उगे हुए है। मातृ पौधे से भूःस्तारी (सकर्स) निकलते है जिनसे पौध प्रवर्धन होता है। वैसे बीजू पौधों में लगभग 50 प्रतिशत नर व मादा पौधे निकलते हैं जिनकी पहचान स्पेथ (फूल) आने पर ही होती है एवं फल की गुणवत्ता एवं उत्पादन में भिन्नता होती है।

खजूर के फल बहुत पौष्टिक व शक्तिवर्धक होते हैं। फलों के गूदे में लगभग 20 प्रतिशत नमी के अतिरिक्त 60–65 प्रतिशत शर्करा, लगभग 2.5 प्रतिशत रेशा, 2.5 प्रतिशत प्रोटीन, 2 प्रतिशत से कम वसा व खनिज तत्व तथा विटामिन ए, विटामिन बी–1 (थायमीन), विटामिन सी, नियासिन तथा विटामिन बी–2 (राइबोफ्लेबिन) पाए जाते हैं। पौष्टिकता के अलावा इसमें औषधीय गुण भी विद्यमान होते है। इसके फल प्रायः पूर्ण पके अवस्था (पिण्ड) में खाए जाते हैं। डोका अवस्था के फलों से छुहारे बनाये जाते है। पूर्ण पके फलों से शर्करा, स्टार्च, सिरका, अर्क, रस, टाफियाँ, मदिरा इत्यादि अनकों उत्पाद बनाए जाते है। डोका अवस्था के फलों से चटनी, स्क्वैस (आर.टी.एस.) व अचार, जैम, सीरप बनाया जा सकता है। गुठली का उपयोग पशु आहार के रूप में उपयोग होता है। खजूर की पत्तियाँ टोकरी, पखें, झाडू व रस्सी इत्यादि बनाने के काम में आती है तने का उपयोग अस्थाई झोपड़ी बनाने के लिए किया जाता है। जबकि अरब के देशों में स्पेथ का उपयोग सब्जी के लिए किया जाता है।

खजूर फल उत्पादन में परागण का महत्वपूर्ण योगदान है अच्छी गुणवता के फल तथा फलन के लिए उचित समय पर एक से दो बार परागण क्रिया करना आवश्यक होता है। नर व मादा पौधे अलग–अलग होते है। खजूर किस्मों के परागण में भी भिन्नता होती है। अन्य किस्मों की अपेक्षा, मेडजूल किस्म में जल्दी परागण होता है। पुष्पक्रम में परागण नही होने की दशा में अविकसित फल गुच्छों में आते हैं जो गुणवताहीन होते है। भारत के कई प्रदेशों जैसे राजस्थान, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडू, इत्यादि में लगभग 20.000 हे. क्षेत्र में खजूर की बागवानी की जा रही है। देश में खजूर उत्पादन में गुजरात के कच्छ क्षेत्र में सबसे अधिक लगभग 18847 हे. क्षेत्र से 173997.6 मी. टन होता है।

नये बाग के विकास होने से वर्तमान में पर्याप्त संख्या में नर पौधे न होने के कारण परागकणों की उपलब्धता की समस्या आयी है। दूसरा कारण जलवायु में परिवर्तन होने के कारण भी मादा पौधों में पुष्पक्रम आने के बाद नर पौधों में पुष्पक्रम खिल रहे है जबकि प्रायः नर पौधों में पुष्पक्रम मादा पौधों से 15–20 दिन पहले आते है। इसलिए नर पौधों की अच्छी देखभाल व प्रबंधन कर पर्याप्त परागकण उत्पादन करना आवश्यक है।

पश्चिमी राजस्थान के जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर व जोधपुर क्षेत्र खजूर उत्पादन के लिए उपयुक्त है। इन जिलों के अतिरिक्त चूरू, श्री गंगानगर व नागौर जिलों के कुछ भाग, पंजाब में अबोहर, फाजिल्का, भंटिडा, हरियाणा में सिरसा, भिवानी, हिसार व गुजरात के कच्छ क्षेत्र में

इसकी खेती की अपार संभावनाएं हैं। इसकी महत्वता को देखते हुए अभी विदेश से आयातित उत्तक सवंर्धित पौधे शुष्क क्षेत्र के सात–आठ जिलों में लगभग 833 हेक्टेयर क्षेत्र में लगाये गये है। जिनमें बीकानेर जिले में लगभग 250 हेक्टेयर क्षेत्र में खजूर की बरही, मेडजूल, खुनैजी, जामली, सगाई व खलास किस्मों के पौधे लगाये गये हैं जिनमें फलन भी आरम्भ हो चुकी है। तमिलनाडू राज्य के कुछ क्षेत्र में खजूर के पौधे लगे है जो फलन में है। गुजरात के कच्छ क्षेत्र में उत्तक संवर्धित अधिकतर बरही किस्म के पौधे लगाये गये है जो फलन अवस्था में हैं। खजूर की अगेती, मध्यम तथा पछेती पकने वाली किस्में उपलब्ध हैं जो ताजा फल खाने एवं फलोत्पाद बनाने के लिए प्रयुक्त की जाती है। खजूर की अधिकांश किस्में, सउदी अरब, ओमान, ईराक, इरान, मिस्त्र, देशों से आयात की गई हैं।

## खजूर की प्रमुख किस्में

फल उत्पादन हेतु खजूर की किस्मों में हलावी, बरही, खलास, खुनैजी, मेडजूल, जाहिदी, शामरान, खदरावी इत्यादि प्रचलित है। फल के रंग के आधार पर पीले, लाल एवं गहरे लाल रंग की किस्में हैं जो अगेती, मध्यम एवं पछेती मौसम में पक कर तैयार होती है। छुहारा बनाने के लिए बड़े फल आकार एवं गूदा वाली मेडजूल किस्म उपयुक्त होती है, बरही अधिक उत्पादन (100 से 150 किग्रा/वृक्ष) देने वाली किस्म है जिसके फल खाने में मीठे, स्वादिष्ट एवं मध्यम आकार के होते है।

## पुष्पक्रम एवं परागण

खजूर में नर एवं मादा पुष्पक्रम अलग–अलग फल वृक्षों पर आते हैं तथा परागण कृत्रिम रूप से किया जाता है। इसके लिए परागकणों को रूई के फाहों की सहायता से मादा पुष्प क्रमों पर पुष्पों के खिलने के तुरन्त पश्चात प्रातः काल छिड़क कर अथवा नर पुष्प क्रमों के साथ बांध कर किया जाता है। विकल्प के तौर पर नर पुष्पक्रम की लड़ियां खुले मादा पुष्पक्रम में उल्टी करके रख देते हैं तथा इस प्रकार धीरे–धीरे परागकण मादा पुष्पक्रम पर गिरते रहते हैं व फल निषेचन क्रिया होती है।

पुष्प/स्पेथ के खुलने पर परागण करना आवश्यक होता है जैसे–जैसे स्पेथ खुलें उसके 24–40 घंटे के भीतर प्रातः समय में परागण क्रिया की जानी चाहिए। खजूर के पौधों में जनवरी से लेकर मार्च तक स्पेथ आकार फूल खिलते हैं जो क्षेत्र की जलवायु, किस्में व प्रबन्धन इत्यादि पर निर्भर करता है। स्पेथ निकलने से लेकर खिलने में लगभग 15 से 25 दिन का समय वातावरण में तापक्रम के अनुसार लगता है। स्पेथ की संख्या पौधों में पत्तियों की संख्या पर निर्भर करती है। अतः पत्तियों की उचित संख्या लगभग 60 से 80 तक बनाये रखना चाहिए। सुखी पुरानी रोग्रस्त इत्यादि पत्तियों को सितम्बर से अक्टूबर माह में काटकर अलग कर देना चाहिए। रुई में फाहों में परागकण लगाकर मादा स्पेथ में रख देते है। परागकण की कमी की स्थिति में उसमें टाल्क पाउडर मिलाकर भी प्रयोग किया जा सकता है।

## परागण हेतु नर किस्में

परागण हेतु स्थानीय किस्मों के पौधे परागकण उपयोग में लिए जा सकते हैं। अफलन होने का कारण सही समय पर परागण क्रिया का न होना तथा परागकणों का अंकुरण हो सकता हैं। परागकणों की अंकुरण दक्षता में भी भिन्नता पायी जाती है। इसमें उत्पादन एवं अनुकूल वातावरण की अहम भूमिका भी होती है।

परागकण सदैव अच्छे किस्म के पौधे से ही लेना चाहिए। पूर्व में स्थानीय नर पौधों से पराग एकत्र किया जाता रहा है, लेकिन अभी नर पौधों की कई किस्मे जैसे घनामी, एल–इन–सिटी (मदसारी), चार्मिस, फर्द–4 इत्यादि उपलब्ध है। इस संस्थान द्वारा भी एक नर पौधा (सी.आई.ए.एच./डी.पी./एम.–3) चिन्हित किया है। इससे 640 ग्रा. परागकण प्रति वृक्ष उत्पादित होता है। खजूर में प्रति हे. 5 –10 नर पौधे बाग के किनारे पंक्ति में लगाये जाने चाहिए।

खजूर में वायु द्वारा भी परागण होता है। लेकिन कृत्रिम रूप से छिडकाव (डस्टींग) विधि द्वारा परागण किया जाता है। कई देशों में यांत्रिक तौर पर पौधों की अधिक ऊंचाई के कारण परागकण का घोल बनाकर भी पुष्पक्रम पर छिड़काव किया जाता है।

### तालिका: नर पौधों से पराग उत्पादन का मूल्यांकन

| नर पौधे/ जननद्रव्य | पुष्प गुच्छों की संख्या/ वृक्ष | प्रति पुष्प गुच्छ उत्पादित पराग (ग्रा.) | पराग उत्पादन/ वृक्ष (ग्रा.) |
|---|---|---|---|
| सी.आई.ए. एच./डी.पी. /एम. –1 | 27.0 | 21.5 | 580.0 |
| सी.आई.ए. एच./डी.पी. /एम. –2 | 18.0 | 24.6 | 443.0 |
| सी.आई.ए. एच./डी.पी. /एम. –3 | 25.0 | 25.6 | 640.0 |
| सी.आई.ए. एच./डी.पी. /एम. –4 | 22.0 | 17.3 | 380.0 |

### परागण भंण्डारण

परागण को सही ढगं से पैकिंग कर उचित तापक्रम/वातावरण में भंण्डारित की अधिक समय तक कर रखा जा सकता है। जिसका उपयोग दूसरे वर्ष परागण के लिये कर सकते हैं। ताजा पराग की तुलना में रेफ्रीजरेटर में भण्डारित किये गये पराग में परागण किये जाने पर थोडा कम (10–20 प्रतिशत) फल बनते हैं। जबकि–200 से.ग्रे. पर भण्डारित करने पर पराग की अकुंरण दक्षता 85–95 प्रतिशत रहती है। रेफ्रीजरेटर में 4–50 से.ग्रे. पर पराग भण्डारण करना भी अच्छा पाया गया हैं। लम्बे समय तक पराग भण्डारण करने की 'क्रायो–प्रिजरवेशन' तकनीक अच्छी रहती है। इसमें परागण–1960 पर तरल नाइट्रोजन में रखा जाता है। परागणों की अंकुरण/दक्षता अन्य भण्डारण तकनीकी की अपेक्षा इसमें अच्छी होती है।

इस प्रकार खजूर के पौधों में समय पर सही ढंग से परागण कर अधिक फल उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

**"हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में सभासीन हो सकती है।"**

**- मैथिलीशरण गुप्त**

# राजस्थान के शुष्क पारिस्थितिकी क्षेत्रों में अनार उत्पादन की विधि

**रामकेश मीणा एवं दीपक कुमार सरोलिया**
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

## परिचय

अनार का लेटिन नाम प्यूनिका ग्रेनेटम है। भारत में अनार की खेती महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हिमाचल प्रदेश एवं राजस्थान में की जाती है। भारत में अनार को कई नामों से जाना जाता है। बंगाली में बेदाना, हिन्दी में अनार, संस्कृत में दाड़िम और तमिल में मादुलई कहा जाता है। अनार शब्द सुनते ही एक कहावत स्मरण हो जाती है– **एक अनार सौ बीमार।** इसका मतलब यह नहीं है कि अनार बीमारियों का घर है बल्कि यह तो हमारे शरीर के लिए काफी लाभदायक हैं। अनार में प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, विटामिन एवं खनिज लवण पाये जाते हैं।

**अनार के फायदे और उपयोगः**

- इसका उपयोग ब्लड प्रेशर नियंत्रण एवं हड्डियों को मजबूत बनाता है।
- अनार शरीर में खून के थक्के नहीं बनने देता है।
- गठिया के रोगी के लिए भी फायदेमंद होता है।
- अनार त्वचा में नमी बनाकर कील मुहासों से बचाता है।
- इसके सेवन से त्वचा पर सूर्य की किरणों का नकारात्मक असर नहीं पड़ता है।
- अनार का एंटी आक्सीडेंट गुण कम घनत्व वाले लोइपोप्रोटीन और कालेस्ट्राल को आक्सीडाइजिंग से रोकता है।

## जलवायु

अनार उपोष्ण जलवायु का पौधा है। यह शुष्क एवं अर्धशुष्क जलवायु में अच्छी तरह उगाया जाता है। फलों के विकास एवं पकने के लिए गर्म एवं शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। लम्बे समय तक उच्च तापमान रहने से फलों की मिठास बढ़ती है। इसकी खेती समुद्रतल से 500 मीटर से अधिक ऊचे स्थानों पर आसानी से की जा सकती है। आर्द्र जलवायु वाले क्षेत्रों में फफूंद जनक रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है।

## मृदा

अनार विभिन्न प्रकार की मृदा में उगाया जा सकता है। लेकिन अच्छे जल निकास वाली रेतीली दोमट मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। फलों की गुणवत्ता एवं रंग भारी मृदाओं की अपेक्षा हल्की मृदाओं में अच्छा होता है। अनार मृदा लवणीयता 9.00 ई.सी./मि.ली. एवं क्षारीयता 6.78 ई.एस.पी. तक सहन कर सकता है।

## प्रमुख किस्में

**गणेश**– यह किस्म डॉ. जी.एस. चीमा द्वारा गणेश खण्ड फल अनुसंधान केन्द्र, पूना से 1936 में अलांदी किस्म के वरण से विकसित की गई थी। इस किस्म के फल मध्यम आकार के बीज कोमल एवं गुलाबी रंग के होते हैं।

**मृदुला**– यह किस्म गणेश एवं गुल–ए–शाह किस्म के संकरण की संतती से चयन के द्वारा विकसित की गई है। फल मध्यम से बड़े आकार के चिकनी सतह एवं पीलापन लिए हुए लाल रंग के होते हैं। गहरे लाल रंग के बीज मुलायम रसदार एवं मीठे होते हैं। इस किस्म के फलों का औसतन वनज 200–300 ग्राम तक होता है।

**ज्योति**– यह किस्म बेसिन एवं ढोलका के संकरण की संतती से चयन के द्वारा विकसित की गई है। एरिल गुलाबी रंग की बीज मुलायम बहुत मीठे होते हैं। प्रति पौधा उपज 8–10 कि.ग्रा. प्राप्त होती है।

भगवा किस्म के फल

**भगवा**– इस किस्म के फल बड़े आकार के भगवा रंग के चमकीले होते हैं। एरिल आकर्षक लाल रंग के एवं बीज मुलायम होते हैं। उच्च प्रबंधन करने पर प्रति पौधा 10–15 कि.ग्रा. उपज प्राप्त की जा सकती है।

**जालौर सीडलेस**– यह किस्म एक स्थानीय चयन है। छिलका गुलाबी रंग के होते है। इस किस्म का एरिल मुलायम एवं मीठा होता है।

**फूले अरक्ता**– यह किस्म महात्मा फूले कृषि विद्यापीठ, राहुरी महाराष्ट्र से विकसित की गई है। यह एक अधिक उपज देने वाली किस्म है। फल बड़े आकार के मीठे, मुलायम बीजों वाले होते है। फल सतह एवं एरिल आकर्षक लाल रंग का होता है।

## वानस्पतिक प्रवर्धन

कलम द्वारा– इस विधि में एक वर्ष पुरानी शाखाओं से 20–30 सेमी. लम्बी कलम काटकर पौधशाला में लगा दी जाती है। इन्डोल ब्यूटारिक अम्ल 3000 पी.पी.एम. से कलमों को उपचारित करने से जड़े शीघ्र एवं अधिक संख्या में निकलती है। इस विधि द्वारा ही अनार का व्यावसायिक प्रवर्धन किया जाता है।

गूटी द्वारा– अनार का वानस्पतिक प्रवर्धन गूटी द्वारा भी किया जा सकता है। इस विधि में जुलाई–अगस्त में एक वर्ष पुरानी पेन्सिल के समान मोटाई वाली स्वस्थ, ओजस्वी, परिपक्व, 40–60 सेमी. लम्बाई की शाखा का चयन करें। चुनी गई शाखा से कलिका के नीचे 3 सेमी. चौड़ाई गोलाई में छाल पूर्णरूप से अलग कर दे। छाल निकाली गई शाखा का चयन करें। चुनी गई शाखा से कलिका के उपरी भाग में आई.बी.ए. 1000 पीपीएम का लेप लगाकर नमी युक्त स्फेगनम मॉस चारों और लगाकर पालीथीन शीट से ढ़ककर सुतली से बांध दे। जब पालीथीन से जड़े दिखाई देने लगे उस समय शाखा को स्केटियर से काट कर क्यारी में लगा देनी चाहिए।

## रोपण

पौध रोपण की आपसी दूरी मृदा प्रकार एवं जलवायु पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से अनार का पौध रोपण 4 x 5 मी. की दूरी पर किया जाता है। सघन पौध रोपण पद्धति में 5 x 3 मी. (666 पौधे/हे.) 4 x 3 मी. (833 पौधे/हे.) 2.5 x 3 मी. (1333 पौधे/हे.) के आपसी अन्तराल पर रोपण किया जा सकता है। पौध रोपण के एक माह पूर्व (60 x 60 x 60 सेमी.) के गड्ढे खोदकर खुले छोड देना चाहिए। तत्पश्चात् गड्ढे को 20 किलो गली हुई खाद 2.50 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट 50 ग्राम क्लोरोपाइरीफास मिलाकर भर देना चाहिए। फिर गड्ढे के बीच से खुरपी की सहायता से मिट्टी निकालकर पौध रोपण करना चाहिए तथा तुरन्त बाद पानी देना चाहिए।

## खाद एवं उर्वरक

| पौध आयु (वर्ष) | नाइट्रोजन प्रति पौधा (ग्राम) | फास्फोरस (ग्राम) | पौटेशियम (ग्राम) |
|---|---|---|---|
| पहली | 225 | 125 | 225 |
| पांचवीं | 500 | 250 | 500 |

## सिंचाई

अनार के पौधे सूखा सहनशील होते हैं। लेकिन अच्छे उत्पादन के लिए सिंचाई अत्यन्त आवश्यक है। फलों के बढ़वार के समय पानी देना अत्यंत आवश्यक है। नहीं तो फल फटने लगते हैं।

## निराई गुडाई

खरपतवार नियंत्रण एवं वायु संचार बढ़ाने के लिए समय–समय पर निराई गुड़ाई करते रहना चाहिए। मिट्टी को उथला रूप में खोदना चाहिए जिससे जड़ों को नुकसान नहीं पहुंचे।

## कटाई–छंटाई

अनार के पौधों की वृद्धि झाड़ीनुमा होती है। अतः इसको कटाई छंटाई देकर अच्छा आकार देना आवश्यक है। सामान्य रूप से पौधे में 3–4 तना छोड़कर शेष शाखाऐं काट देनी चाहिए। पौधों के बड़े हो जाने पर अधिक कृतंन की आवश्यकता नहीं होती है। केवल सूखी एवं भूमि को छूने वाली शाखाओं को हटाते रहना चाहिए।

## पुष्पन एवं फलन

उत्तरी भारत में फूल मार्च अप्रैल में शुरू होते हैं। पके फल जुलाई–अगस्त में प्राप्त किये जा सकते हैं लेकिन इनमें कीट संक्रमण अधिक होता है। अनार का पौधा सदाबहारी होता है। वर्ष में तीन समय पर फल उपज प्राप्त की जा सकती है। वर्ष में तीन समय पर फल उपज प्राप्त की जा सकती है। लेकिन पश्चिमी राजस्थान में पानी की कमी एवं मानसून का समय वर्षा नहीं होने के कारण अगस्त–सितम्बर में बहार लिया जाता है तथा उपज नवम्बर–दिसम्बर में प्राप्त की जाती है। जिस बहार के फल लेने होते है, फूल आने के दो माह पूर्व सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए। यह किया अपनाने से अधिक संख्या में फलन होता है। फल हमेशा पौध रोपण के 3 वर्ष बाद लेना उचित रहता है।

## फल तुड़ाई एवं पैदावार

फल पूर्ण रूप से पकने पर पीले एवं लाल रंग के हो जाते हैं (किस्मानुसार)। 5 वर्ष पुराने उद्यान से प्रति पौधा 100–150 फल प्रति पौधा प्राप्त किये जा सकते है। अनार के पौधों से लगातार 30 वर्ष तक अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। लेकिन शर्त कि समय समय पर उचित प्रबंधन किया जाये।

## ग्रेडिंग, पैकिंग, विपणन तथा भण्डारण

तुड़ाई के पश्चात् आकार के अनुसार फलों की ग्रेडिंग कर लेते है। अनार के फल बास की टोकरियों में पैक किये जाते हैं। पैकिंग करते समय टोकरियों में फलों के बीच–बीच में सूखी घास या पुआल की तह लगाते है। इसके उपरान्त इनको बेचने के लिए बाजार भेज दिया जाता है। अनार के फलों को सामान्य तापकम पर काफी दिनों बिना खराब हुए रखा जा सकता है। इसके फल 4–5 से.ग्रे. तापकम पर 80–85 प्रतिशत आपेक्षित आर्द्रता में इनको नौ माह तक बिना नुकसान के रखा जा सकता है।

## कीट एवं रोग

**दीमक**– यह कीट पश्चिमी राजस्थान की रेतीली मिट्टी ये अनार की फसल को स्थापित नहीं होने देता है। यह तने और जड़ क्षेत्र से प्रवेश कर टेडी मेड़ी सुरंग बनाकर जाइलम एवं फ्लोएम को नुकसान पहुंचाता है जिससे पौधे मर जाते है। यह कीट शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र का भयंकर कीट है। इस कीट की रोकथाम के लिए 2 एम एल क्लोरोफाइरीफास प्रति /लीटर पौध थांवले में में मिला देना चाहिए।

**सूत्रकृमी**– यह कीट पौधों की जडों में गांठे बनाकर नुकसान पहुंचाता हैं जिसके कारण पौधों की वृद्धि रूक जाती है। फूल आते हैं लेकिन फलन नहीं होता है। जिसके कारण उपज काफी कम मात्रा में प्राप्त होती है। इस कीट की रोकथाम के लिए खेत की बार्डर पर गैंदा फूल लगा देना चाहिए तथा 1.5 ग्राम कार्बोफ्यूरान प्रति वर्ग मीटर थांवले में मिट्टी में मिला देना चाहिए।

**तना छेदक**– इस कीडे की इल्लियां तना में छिद्र बना लेती है। यह कीड़ा तने अथवा शाखाओं को प्रभावित करता है। रोकथाम के लिए छिद्रों में कीटनाशी एवं तार डालकर इल्लियों को नष्ट किया जा सकता है। छिद्रों में पेट्रोल अथवा मिट्टी के तेल में रूई डूबोकर भरने से इसको नष्ट किया जा सकता है। रूई भरने के उपरान्त छिद्रों को मिट्टी से बंद कर देना चाहिए।

**माइट**– यह कीट अनार में मुख्यत: फलन के समय आक्रमण करता है। जिसके कारण पौधे की पत्तियां पीले रंग की हो जाती है तथा फल की बाहरी त्वचा कठोर हो जाती है। इसके नियंत्रण के लिए इथियोन (1.5 मिली/लीटर) का छिड़काव कर देना चाहिए।

## रोग एवं व्याधियां

राजस्थान के अनार उत्पादक जिलों में रोग व्याधियां का प्रकोप बहुत कम पाया जाता है। लेकिन बाड़मेर, गंगानगर जिलों में बेक्टीरियल ब्लाइट का संक्रमण पाया गया है। बेक्टीरियल ब्लाइट के लक्षण निम्न प्रकार के होते हैं:

- पत्तियों के नीचले पृष्टभाग में पानीनुमा धब्बे दिखाई देते हैं। जो बाद में भूरे रंग के धब्बों में बदल जाते हैं। प्रकाश में देखने से इन धब्बों के चारों तरफ, पीले रंग का स्पष्ट पारटर्शी गोला दिखता है।
- फल पर जलशोषक धब्बे या भूरे काले रंग के धब्बों के चारों तरफ हल्की दरारें नजर आती है।
- बेक्टीरिया औस, बारिश, छिड़काव की बूंदों से

निकलता है और वह सफेद चमकीली पपड़ी के रूप में धब्बों पर सूख जाता है।

- टहनियों और शाखाओं के नोडस के पास भूरे काले पानी नुमा धब्बे नजर आते है। जो बाद में कैंकर का रूप धारण कर लेते हैं।

## प्रबंधन

जिन बागों में ब्लाइट शुरू अथवा संक्रमण हो गया है उसमें निम्नलिखित अनुपालना करें।

- कम से कम 3–4 वर्ष तक मृग बहार नहीं लेकर हस्त बहार लेना चाहिए।
- संक्रमित शाखाओं को काटकर जला देना चाहिए।
- अनार बगीचे में प्रत्येक 3 महीने में ब्लीचिंग पाउडर (33 प्रतिशत) क्लोरिन 25 किलो 1000 ली. पानी से प्रति हेक्टेयरछिड़काव करें।
- फसल के दौरान बोर्डो मिश्रण (0.5 प्रतिशत) बहार के दौरान, 1 प्रतिशत कटाई के बाद या स्ट्रेपटो सायक्लीन (5 ग्राम/प्रति 10 ली.)/2 ब्रोमो 2 नायट्रोप्रोपेन 2–3 डायोल (बोनाफाल) के साथ कापर आधारित फफूंदनाशी का उपयोग करें।

## फल धब्बे

यह फफूंद पत्तियों और फलों पर दाग और सड़न रोग होते हैं।

**सरकोस्पोरा फलों के दाग:** गाढ़े काले रंग के विविध आकार के बिखरे दाग और इन दागों पर ब्लाईट की तरह चिपचिपापन नहीं होता है।

**फल स्कैब:** फल के छिलके पर भूरे लाल रंग के खुरदर उठे हुए धब्बे दिखते हैं।

**फलों पर एन्थ्रेकनोज:** विभिन्न आकार के गाढ़े भूरे काले रंग के कड़क धब्बे, कभी–कभी हलके रंग का केन्द्र और गाढ़े भूरे रंग का मारजिन दिखता है।

## प्रबंधन

- पोध रोपण उद्यान में फफूंदनाशी एवं सूत्रकृमि मुक्त होने चाहिए।
- मिट्टी को सूर्य की किरणों से उपचारित करना चाहिए।
- मिट्टी कीटनाशी एवं फफूंदनाशी रसायनिक से रोग रहित करना चाहिए।

## काकोड़ा के औषधीय गुण

काकोड़ा एक अल्पप्रचालित शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रीय सब्जी फसल है। यह आखों और ब्लड प्रेशर संबंधी समस्याओं के साथ ही यह मधुमेह में भी लाभदायक हैं यह स्वाद में कड़वा होता है। इसमें प्रोटीन, सूक्ष्म पोषक तत्व, फाईबर, कार्बोहाइड्रेड जैसे अनेकों विटामिन होते हैं। इसका अचार भी बनाया जाता है। यह हृदय रोग में भी एवं कारगर औषधी हो सकती है। कुल मिलाकर यह एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है।

# उन्नत तकनीक से सीताफल की खेती

**पवन कुमार पारीक[1], पी के यादव[2], रोहताश कुमार[3]**
स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
[1]विद्यावाचस्पति, उद्यान [2]आचार्य, उद्यान विभाग, [3]स्नात्तकोत्तर छात्र प्रसार शिक्षा विभाग, कृषि महाविद्यालय

सीताफल एक मीठा व स्वादिष्ट फल है। इसे "शरीफा" भी कहा जाता है। सीताफल का वानस्पतिक नाम अन्नोना स्क्वामोसा हैं। सीताफल उच्च कैलोरी के साथ, प्राकृतिक शर्करा और स्वादिष्ट स्वाद देता है और इसे एक मिठाई के रूप में और एक पौष्टिक नाश्ते के रूप में खाया जाता हैं। सीताफल आयरन और विटामिन सी से भरपूर होता है। यह बाहर से कठोर और अंदर से नरम और चबाने वाला होता है। इसके इस्तेमाल से कई तरीके के रोगों से छुटकारा मिलता हैं। इसके बीज, पत्ते, छाल सभी को औषधि के रूप में उपयोग किया जाता है। इसकी पत्तियाँ हृदय रोग में टॉनिक का कार्य करता है क्योंकि इसकी पत्तियों में टेट्राहाइड्रो आइसोक्विनोसीन अल्कलायड पाया जाता है। इसकी जड़े तीव्र दस्त के उपचार में लाभकारी होती हैं।

सीताफल का बगीचा

## शरीफा खाने के लाभ

- शरीफा में विटामिन सी के समृद्ध स्रोत है जो शरीर में मुक्त कण का मुकाबला कर सकते हैं। इसके अलावा इसमे विटामिन ए होता है जो की स्वस्थ त्वचा, बेहतर दृष्टि और स्वस्थ बालों के लिए उत्तम है।
- इसमे मैग्नीशियम होता है जो हृदय रोगों में लाभदायक है और मांसपेशियों को आराम दिलाता है ।
- सीताफल मे विटामिन बी 6 और पोटेशियम भारी मात्रा मे पाया जाता है।
- शरीफा फल तांबे का प्रबल स्रोत है और स्वस्थ पाचन और कब्ज रोकने मे समर्थ है। यह आहार फाइबर से भरा होता है।
- शरीफा स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है क्योकि इसमे वसा की मात्रा कम होती है।
- इस फल की मलाईदार गूदे को फोड़ो और अल्सर पे उपयोग किया जा सकता है।
- शरीफा को धूप में सुखाकर चूर्ण बनाकर इसका सेवन करने से पेचिश और दस्त ठीक हो सकते है।

**प्रमुख किस्में**:– बाला नगर, अर्का सहन, लाल सीताफल, मैमथ, सरस्वती –7,

## जलवायु

सीताफल के पौधे के लिए वैसे तो कोई विशेष जलवायु की आवश्यकता नही होती हैं। फिर भी अच्छे उत्पादन के लिए गर्म और शुष्क जलवायु वाले क्षेत्र जहाँ पाला नहीं पड़ता है, अधिक उपयुक्त होता है। ज्यादा ठंड और पाला पड़ने से इसके फल कठोर हो जाते हैं और वो पक नही पाते है। वर्षा ऋतु यानी जून जुलाई में फूल और सितम्बर से नवम्बर में फल लगने और पकने शुरू हो जाते है। उस समय तापमान 40 डिग्री से ज्यादा नही होना चाहिए।

## भूमि

अच्छी जल निकास वाली दोमट मिट्टी सीताफल की बढ़वार एवं पैदावार के लिये उपयुक्त होती है। इसका पौधा भूमि में 50 प्रतिशत तक चूने की मात्रा सहन कर लेता है। भूमि का पी.एच.मान 5.5 से 6.5 के बीच अच्छा माना जाता है। लेकिन इसे 7–9 पी.एच. मान वाली भूमि पर भी उत्पादन लिया जा सकता है।

## प्रवर्धन

सीताफल मुख्य रूप से बीज द्वारा ही प्रसारित किया जाता है। किन्तु अच्छी किस्मों की शुद्धता बनाये रखने,

तेजी से विकास एवं शीघ्र फसल लेने के लिये वानस्पतिक विधि द्वारा पौधा तैयार करना चाहिए। शील्ड बडिंग जनवरी से जून तथा सितम्बर–अक्टूबर के महीने में अच्छी सफलना प्राप्त होती है।

## पौधे की रोपाई

सीताफल के पौधे के लिये गर्मी के दिनों में 60 x 60 x 60 सें.मी. आकार के गड्ढे 5 x 5 मी. की दूरी पर तैयार किये जाते हैं। इन गड्ढों को 15 दिन खुला रखने के बाद ऊपरी मिट्टी में 5–10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 500 ग्राम करंज की खली तथा 50 ग्राम एन.पी.के. मिश्रण को अच्छी तरह मिलाकर भर देना चाहिये।

सीताफल लगाने के लिये जुलाई माह उपयुक्त रहता है। शरीफा का बीज जमने में काफी समय लगता है। अतः बोने से पहले बीजों को 3–4 दिनों तक पानी में भिगा देने पर जल्दी अंकुरण हो जाता है। यदि वर्षा न हो रही हो तो पौधों की 3–4 दिन पर सिंचाई करने से पौधा स्थापना अच्छी होती है। एक हेक्टेयर में सीताफल के अनुमानित 400 पौधे तक लग सकते है।

## सिंचाई

अगर पौधे लगाने के बाद बरसात आती रही हो सिंचाई की कोई आवश्यकता नही होती है। लेकिन बारिश ना आने पर अगर पौधे मुरझाये हुए हो तो सिंचाई कर दे। शरीफा के पौधों को गर्मियों में पानी देना आवश्यक होता है। अतरू इस समय 7 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिये। सर्दी के दिनों में महीने भर में एक बार सिंचाई कर सकते है। फल लगते समय एक सिंचाई जरुर करे ताकि फलों का आकार बढ़ सके।

## खाद् एवं उर्वरक

सीताफल के पौधों को खाद् उर्वरक की बहुत कम आवश्यकता होती हैं। लेकिन अच्छी पैदावार के लिए आप सड़ी हुई गोबर की खाद् और नाइट्रोजन, फॉस्फरस, पोटाश आदि दे सकते है। अतः अच्छी फसल लेने के लिए 200 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फरस एवं 500 ग्राम पोटाश प्रति पौधे की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त प्रति वर्ष प्रति पौधे 20–25 किग्रा० गोबर की सड़ी खाद, एक किग्रा० बोनमील और एक किग्रा० नीम की खली की जरुरत पड़ती है। खाद की यह मात्र तीन बार बराबर मात्रा में मार्च–अप्रैल, जुलाई–अगस्त और अक्टूबर महीनों में देनी चाहिए।

## पौधों की कांट–छांट

शरीफे के नये पौधों में 3 वर्ष तक उचित ढाँचा देने के लिये कांट–छांट करना चाहिये। कांट–छांट करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि तने पर 50–60 सें. मी. ऊँचाई तक किसी भी शाखा को नहीं निकलने दें। उसके ऊपर 3–4 अच्छी शाखाओं को चारों तरफ बढ़ने देना चाहिये जिससे पौधा का अच्छा ढांचा तैयार होता है। शरीफा में फल मुख्यतः नई शाखाओं पर आते हैं। अतः अधिक संख्या में नई शाखायें विकसित करने के लिये पुरानी, सूखी तथा दूसरों से उलझ कर निकलती हुई शाखाओं को काट देना चाहिये। प्रति वर्ष फल तोड़ने के बाद पेड़ पर लगी सुखी टहनिया और अधिक बड़ी हुई शाखा को काट के अलग कर देना चाहिए।

## पुष्पन एवं फलन

सीताफल में पुष्पन काफी लम्बे समय तक चलता है। उत्तर भारत में मार्च से ही फूल निकलना प्रारंभ हो जाता है और जुलाई तक आता है। पुष्प कालिका के आँखों से दिखाई पड़ने की स्थिति से लेकर पूर्ण पुष्पन में लगभग एक महीने तथा पुष्पन के बाद फल पकने तक लगभग 4 महीने का समय लगता है। पके फल सितम्बर–अक्टूबर से मिलना शुरू हो जाते है। बीज द्वारा तैयार किये गये पौधे तीसरे वर्ष फल देना प्रारंभ करते हैं जबकि बडिंग एवं ग्राफ्टिंग द्वारा तैयार पौधे दूसरे वर्ष में अच्छी फलन देने लगते है। फूल खिलने के तुरन्त बाद 50 पी.पी.एम. जिबरेलिक एसिड के घोल का छिड़काव कर देने से फलन अच्छी होती है।

## तुड़ाई

सीताफल के फल जब कुछ कठोर हों तभी तोड़ लेना चाहिए क्योंकि पेड़ पर काफी दिनों तक छुटे रहने पर वे फट जाते हैं। अतः इसकी तुड़ाई के लिये उपयुक्त अवस्था का चुनाव करना चाहिये। इसके लिये जब फलों पर दो उभारों के बीच रिक्त स्थान बढ़ जाय तथा उनका रंग परिवर्तित हो जाय तब समझना चाहिये फल पकने की अवस्था में हैं। पेड़ पर पके हुए फल की पहचान आप फल पर काले भूरा रंग के धब्बों, जिन्हें ग्रामीण बोली में आँख दिखना कहते है, को देखकर कर सकते है अपरिपक्व फल नहीं तोड़ना चाहिये क्योंकि ये फल ठीक से पकते नहीं और उनसे मिठास की मात्रा भी कम हो जाती है।

## रोग और कीट

इस पर किसी भी प्रकार के रोग नही आते है लेकिन कभी कभी पत्तियों को नुकसान पहुँचने वाले कीट और बग आ जाये तो दवाई का स्प्रे कर देना चाहिए।

1. प्रारम्भिक प्रकोप होने पर प्रोफेनाफास–50 या डायमिथोएट–30 की 2 मिली. मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। वर्षा ऋतु के दिनों में घोल में स्टीकर 1मिली/लीटर पानी में मिलाएं।
2. अधिक प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड (17.8 एस.एल.) 0.3 मिली./लीटर या थायामिथोग्जाम (25 डब्लू.जी.) 0.25 ग्राम/लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

## प्रसंस्करण

सीताफल के फल से एक मशीन के द्वारा गूदे और बीज को अलग निकला जाता है। उस निकले हुए गूदे से कड़वाहट ना आयें और सुरक्षित रखने के लिए इस मशीन का उपयोग किया जाता है। मशीन से निकले हुए गूदे को एक साल तक सुरक्षित रख कर बाजार मे अच्छे भाव पर बेच सकते है। इस गूदे का उपयोग आइसक्रीम, रबड़ी और पेय पदार्थ बनाने में किया जाता है।

## उपज एंव लाभ

सीताफल पौधा लगाने के तीसरे वर्ष से यह फल देना प्रारंभ कर देता है। एक पौधे से औसतन 50 किलो फल तथा प्रति हेक्टेयर सीताफल का उत्पादन 20–25 टन होता है। यदि 6000 रू/टन भी कीमत आंकी जावें तो फल बेचकर किसानों को प्रति हेक्टेयर 1,50,000 रू का कूल अर्जन तथा लागत काट कर 85000 रू का शुद्ध लाभ प्राप्त होगा।

**हिन्दी वह धागा है जो विभिन्न मातृभाषाओं रूपी फूलों को पिरोकर भारत माता के लिए सुन्दर हार का सृजन करेगा।**

**- डा. जाकिर हुसैन**
**पूर्व राष्ट्रपति, भारत**

# थार गौरव: कैंथ की नयी उच्च उत्पादन प्रजाति

**एस. एस. हिवाले, विकास यादव, ए.के. सिंह, वी. वी. अप्पाराव, संजय सिंह और पी. एल. सरोज**
केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र (के. शु. बा. सं.), वेजलपुर, पंचमहल (गोधरा), गुजरात

कैथ एक फलदार वृक्ष है। यह वनस्पति रूप से फेरोनिया लिमोनिया के रूप में जाना जाता है और साइट्रस की तरह रुतैसी परिवार के अंतर्गत आता है। भारत में, इसे हाथी सेब, बंदर फल, दही फल, कैंथ और कायथ बेल के रूप में जाना जाता है। इसे दक्षिण भारत का मूल निवासी बताया गया है। यह नम उष्णकटिबंधीय और उप उष्णकटिबंधीय देशों में स्वाभाविक रूप से पाया जाता है। भारत में, यह लगभग सभी हिस्सों में, ऊँचाई और ठंडे क्षेत्र को छोड़कर पाया जाता है और फूलों और फलने के लिए सूखी गर्म स्थिति अनूकूल होती है। परिपक्व फल का गूदा भूरा, चिपचिपा, रेशेदार, अम्लीय या मीठे सुगंध युक्त होता है और पूरे फल में बिखरे हुए बीज होते हैं। पौधे के विभिन्न भागों जैसे पत्ती, तना, छाल, फल और बीज में औषधीय और उपचारात्मक मूल्य होते हैं।

## थार गौरव–उन्नत किस्म

इसे चयन विधि के माध्यम से विकसित किया गया है। यह चयन 2004–05 के वर्ष में मध्य प्रदेश के इंदौर जिले से एकत्र किया गया था और सॉफ्ट वुड इन–सीटू ग्राफ्टिंग के माध्यम से स्थापित किया गया था। केंद्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र (आईसीएआर–सीआईएएच), वेजलपुर, पंचमहल (गोधरा), गुजरात में पश्चिमी भारत की अर्ध–शुष्क परिस्थितियों में 13 वर्षों तक चयन का मूल्यांकन किया गया है। यह 2019 में संस्थान स्तर पर एक प्रजाति के रूप में पहचानी गयी है। इस प्रजाति के फल बड़े आकार और उच्च गुणवत्ता वाले होते है। पश्चिमी भारत के वर्षा आधारित परिस्थितियों में इस प्रजाति से अधिक फलों का उत्पादन प्राप्त कर सकते है। फल सेट होने के 230 दिन बाद परिपक्व होते हैं। फल पेक्टिन और प्रोटीन सामग्री में समृद्ध हैं। इसका उपयोग फल रूप में खाने के अलावा अचार, आरटीएस, चटनी और पाउडर जैसे मूल्य वर्धित उत्पादों के लिए भी किया जाता है।

थार गौरव किस्म के फलों का आकार–प्रकार

## पौधे की वृद्धि का व्यवहार

पौधे की वृद्धि का व्यवहार फैलावदार तथा मध्यम बढ़वार वाला है। पौधे की ऊंचाई, स्टेम गर्थ और पौधे का प्रसार 6.25 मीटर, 56.36 सेमी और 4.81 से 5.12 मी. दर्ज किया गया है। इस प्रजाति का ट्रंक छोटा और बेलनाकार है। छाल गहरे भूरे रंग की, खुरदरी और मोटी होती है। पत्तियां गहरे हरे रंग की, पर्णपाती, वैकल्पिक और चर्मपत्र युक्त दांतेदार होती हैं। पत्तों में 7 पत्रक होते हैं, जो विपरीत, सेसाइल या बहुत कम पेटियोल वाले होते हैं। वृक्ष में पतझड़ जनवरी में होता है।

## फूल और फल

गर्म मौसम, फूलों की कली की वृद्धि के लिए अनुकूल होता है। फूल मार्च और अप्रैल के महीने में नए और पुरानी शाखाओं में आते है। ग्राफ्टिंग के बाद 4 वर्ष में पौधे में फूल आना शुरू हो जाता है। छोटे–छोटे फूल, ढीले टर्मिनल या पार्श्व पैनिक्ल में पैदा होते हैं। फूल मुख्य रूप से पुंकेसरमय और द्विलिंगी होते हैं और 9–12 समान आकार के पुंकेसर भी पाए जाते है। फूल हल्के हरे रंग या हल्के लाल रंग के होते हैं। फूलों के आने की मुख्य अवधि अप्रैल के पहले पखवाड़े में होती है जबकि सुबह के 8–10 बजे एंथेसिस का मुख्य समय होता है। ताजे परागकण, हल्का हरा से लेकर गहरा पीला रंग का होता है। फल पूरी परिपक्वता पर खुरदरी त्वचा के साथ हरे–सफेद रंग के हो जाते हैं और सुखद सुगंध भी देते हैं। अक्टूबर के महीने तक फल अधिक से अधिक आकार प्राप्त कर लेते हैं तथा नवम्बर माह में फल तोड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इस प्रजाति में फलों की गुणवत्ता और फलों का स्वाद बहुत अच्छा पाया गया है। फलों के वजन (ग्राम), फलों के आकार (मिमी), गूदा (प्रतिशत), खोल वजन (ग्राम), टीएसएस (°ब्रिक्स), अम्लता (प्रतिशत), कुल शर्करा (प्रतिशत), फल पेक्टिन (प्रतिशत), फल प्रोटीन (प्रतिशत),

थार गौरव प्रजाति के परिपक्व फल

बीज प्रोटीन (प्रतिशत), फॉस्फोरस (प्रतिशत), पोटेशियम (प्रतिशत), कैल्शियम (लोहा) और लोहा (मिग्रा) 452.25, 103.67x96.66, 50.92, 180.12, 14.12, 3.85, 3.07, 1.76, 18.13, 24.38, 0.07, 1.73, 0.30 और 16.72 क्रमशः पाया गया है। फलों के आकार, फल और गूदे के रंग क्रमशः हरे, सफेद और भूरे रंग के होता हैं। पौधे और फल किसी भी बीमारी और कीट से पूरी तरह से मुक्त हैं। परिपक्व फलों को सामान्य स्थिति में 12–15 दिनों के लिए भंडारित किया जा सकता है। यह 7वें वर्ष में उच्च उपज 58.58 किग्रा. देता है, जबकि 12वें वर्ष में 124.36 किग्रा./पौधा वर्षा आधारित अर्ध–शुष्क स्थिति देते हैं।

## उत्पादन प्रौद्योगिकी

### क. मिट्टी और जलवायु

कैंथ को विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है। उच्च उपज क्षमता और अच्छे पौधों की वृद्धि के लिए, रेतीले दोमट या 7–7.5 पीएच वाले गहरी दोमट मिट्टी की अधिक उपयुक्त पायी जाती है। यह पारिस्थितिक स्थितियों की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए अनुकूलित है, जो उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय से शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में अपने व्यापक भौगोलिक वितरण को दर्शाती है। यह अर्ध शुष्क और शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

अपरिपक्व फलों से आच्छादित शाखा

### ख. पौधे का प्रसार

इसमें मार्च–अप्रैल के महीने में सॉफ्ट वुड ग्राफ्टिंग या पैच बडिंग के माध्यम से नए पौधे तैयार किया जा सकता है, 10–12 महीने पुराने रूट स्टॉक पर 6–8 महीने के सांकुर कली के साथ सॉफ्ट वुड ग्राफ्टिंग में 85.23 प्रतिशत सफलना और 3–4 महीने की सांकुर कली के साथ पैच बडिंग में 75.36–70.12 प्रतिशत तक सफलना पेयी जाती है ।

### ग. बाग स्थापना

साधारणतः 90 x 90 x 90 सेमी के गड्ढे गर्मियों के दौरान खोदे जाते हैं। अच्छी तरह से विघटित कार्बनिक पदार्थ को मिट्टी के साथ मिलाया जाता है और गड्ढे भर दिए जाते हैं। बारिश के मौसम के दौरान रोपण तब किया जाता है जब गड्ढों में मिट्टी पहले ही बस गई हो। रोपण के तुरंत बाद पौधों की सिंचाई की जानी चाहिए। इसे उच्च उत्पादकता के लिए 8 x 6 मी की दूरी पर लगाया जा सकता है।

### घ. सिंचाई प्रबंधन

इसे अर्ध शुष्क अवस्था में सिंचाई के बिना सफलनापूर्वक उगाया जा सकता है। कम उम्र (2 वर्ष तक) में, पौधों की अच्छी वृद्धि और बेहतर स्थापना के लिए गर्मियों के दौरान पौधों की सिंचाई की जानी चाहिए। हालांकि, सिंचाई के बिना वर्षा आधारित अर्ध शुष्क स्थिति में उगाया जा सकता है, लेकिन रोपण को बारिश की शुरुआत के तुरंत बाद किया जाना चाहिए ताकि बारिश के मौसम में पौधे की जड़ अच्छे से स्थापित हो सके। वर्षा ऋतु के दौरान जल संचयन तकनीक पर विचार किया जाना चाहिए, जो मानसून के बाद के मौसम के दौरान विकास और फलने को प्रोत्साहित करता है।

### च. पोषक तत्व प्रबंधन

प्रति वर्ष लगभग 50 किग्रा. गोबरखाद, 1.0 किग्रा नत्रजन, 500 ग्रा. फॉस्फोरस और 500 ग्रा. पोटेशियम प्रति पौधा की वार्षिक खुराक को पूर्ण विकसित वृक्षों में डालना चाहिए और जुलाई के पहले सप्ताह और अगस्त के अंतिम सप्ताह में इसे प्रत्येक वर्ष दो बार में डालना चाहिए।

थार गौरव किस्म के 4 वर्षीय पौधे में फलन

## छ. कटाई और छंटाई

पौधे की प्रारंभिक वृद्धि अवस्था में क्रास शाखाओं को हटाने के साथ प्रशिक्षित किया जाना चाहिए, क्योंकि ग्राफ्टेड पौधे में, नए शाखाएं बहुत नजदीक और फैली हुए होती है। इसलिए, उचित फ्रेम वर्क के लिए तीन साल के पौधों की कटाई और छंटाई की शुरुआत जरूरी है। कैंथ में आमतौर पर छंटाई की आवश्यकता नहीं होती है, लेकिन दिसंबर–जनवरी के दौरान सूखी, मृत और पार शाखाओं को हटाना आवश्यक होता है।

## ज. फलों की तुड़ाई और उपज

फल नवंबर माह में पकता है। पके फल की मुख्य विशेषता सुखद सुगंध होती है तथा फल की सतह खुरदरी होने साथ मिटटी के रंग की हो जाती है। भंडारण के दौरान फलों को सभी संभावित नुकसान से बचने के लिए देखभाल की जानी चाहिए। इस प्रजाति के पौधों से, 12वें वर्ष में 124.33 किग्रा. प्रति पौधा औसत फल की पैदावार अर्ध–शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र में प्राप्त की जा सकती है।

**हिन्दी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का सरलतम स्त्रोत है।**
**भारतीय जनता के बीच काम करने के लिए हिन्दी ही एकमात्र साधन है।**

**- लोकनायक जयप्रकाश नारायण**

# नींबू वर्गीय फलों की व्यावसायिक खेती

**चेतक बिश्नोई[1], जगन सिंह गोरा[2], रमेश कुमार[2] एवं रूपचंद बलाई[2]**
[1]पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केंद्र, मुक्तसर, पंजाब
[2]भाकृअनप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

भारत में कई सालों से नींबू वर्गीय फलों की खेती प्रचलित है। प्रकृति ने भारत को बागवानी फसलों के लिए उपयुक्त कृषि जलवायु प्रदान की है विशेष रूप से नींबू प्रजाति के भारत का दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्र। देश के विभिन्न राज्यों जैसे कि महाराष्ट्र गुजरात, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान आदि में शुष्क क्षेत्रों से लेकर सिंचित क्षेत्रों में संतरा, माल्टा, ग्रेपफ्रूट, नींबू इत्यादि फलों की व्यावसायिक खेती सफलनापूर्वक की जाती है। नींबू वर्गीय फल विटामिन्स एवं खनिज तत्वों के अच्छे स्त्रोत हैं। अतः इन फलों को आरोग्यकारी एवं पौष्टिक फलों के रूप में देखा जाता है। अधिक पैदावार एवं अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए सही किस्मों का चयन आवश्यक है। विभिन्न प्रजातियों की विभिन्न नई किस्में पंजाब, राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों व सिंचित क्षेत्रों के लिए सिफारिश की गई है।

## संतरे की मुख्य किस्म

**पी ए यू किन्नौं 1:** यह अधिक पैदावार देने वाली संतरे की नई संकर किस्म है। यह जनवरी महीने में पक कर तैयार होती है। इसमें बीज की मात्रा ना के बराबर होती है। इस के रस में खटास एवं मिठास का अच्छा संतुलन पाया जाता है। पांच वर्ष के पौधे का औसतन फल उत्पादन 45–90 किलो प्राप्त होती है।

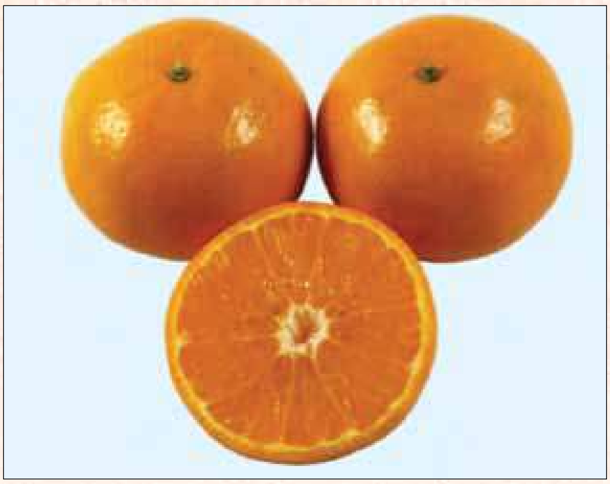

पीएयू किन्नौं के फल

**डेजी:** यह संतरे की जल्दी पक कर तैयार होने वाली नयी किस्म है। फल पकने का समय नवंबर माह है। फल मध्यम, गोल आकर, छिलका पतला, चमकदार लाल नारंगी रंग, बीज की औसतन संख्या 10–15 प्रति फल है। इस किस्म के पौधे कैरिजो मूलवृन्त पर तैयार किये जाते हैं। पांच वर्ष की उम्र के पश्चात फल उत्पादन 55–60 किलो प्राप्त होती है।

## मौसम्बी की मुख्य किस्म

**अर्ली गोल्ड:** यह माल्टा की जल्दी पककर तैयार होने वाली नई अगेती किस्म है। इसके फल अक्टूबर माह के अंत में पक कर तैयार होते हैं। फल मध्यम, गोल आकार, छिलका चमकदार सुनहरी पीले रंग, बीज की औसतन संख्या 2–6 प्रति फल है। पांच वर्ष की उम्र के पश्चात फल उत्पादन औसतन 45–48 किलो प्रति पौधा है।

**जाफा:** फल मध्यम से बड़ा आकार 45–50 किलो/हे० प्राप्त होती है। हल्का चपटा व पकने पर लाल नारंगी रंग का होता है। यह किस्म दिसंबर के महीने में पक कर तैयार होती है। औसतन फल उत्पादन 50–55 किलो प्राप्त होती है।

**ब्लड रेड:** यह मौसम्बी की एक प्रमुख किस्म है। इसका फल मध्यम आकार का तथा ऊपर से पिचका हुआ होता है। पकने पर गहरे पीले रंग का हो जाता है। इस किस्म का भी औसतन उत्पादन 50–55 किलो प्रति पौधा प्राप्त होती है।

## ग्रेप फ्रूट की मुख्य किस्म

**मार्श सीडलेस:** यह ग्रेप फ्रूट की किस्म है। इसके फल बड़े आकार के, छिलका हल्का पीले रंग का तथा फल का औसतन वजन 500–600 ग्राम होता है। इस किस्म की औसतन पैदावार 85–90 किलो प्रति पौधा है। इस किस्म का पकने का समय दिसंबर–जनवरी माह है।

**स्टार रूबी:** यह ग्रेप फ्रूट की एक मुख्य अगेती किस्म है। फल नवंबर माह के अंत में पक कर तैयार होते हैं। फल छोटे से मध्यम आकार, चपटे–गोल, पकने पर

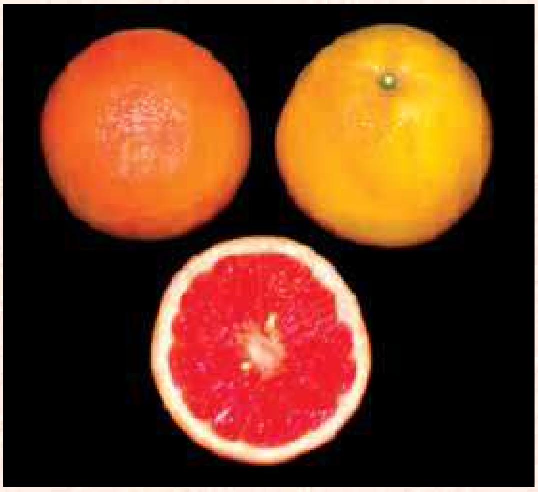

स्टार रूबी किस्म के फल

इसका छिलका पीले रंग का हो जाता है तथा इस पर गुलाबी रंग के धब्बे आ जाते हैं। इसमें बीज ना के बराबर अथवा बीज रहित है। इस किस्म की औसतन पैदावार 50–55 किलो प्राप्त होती है।

## नींबू एवं मीठे नींबू की मुख्य किस्में

**बारामासी लेमन–1ः** यह नींबू की एक किस्म है। इसका औसतन वजन 80–85 ग्राम प्रति फल है। इसका छिलका पतला एवं रस 45 प्रतिशत होता है। इसके फल जुलाई–अगस्त तथा फरवरी–मार्च में तैयार होते हैं। इसके एक पेड़ पर 80–84 किलो पैदावार जुलाई–अगस्त में आती है।

**कागजीः** इसका पौधा कांटेदार होता है। इसका छिलका पतला व चमकदार होता है। इस किस्म के फल छोटे, गोल व बहुत खट्टे होते हैं।

**जलवायुः** इसके लिए पाला रहित कम आर्द्रता वाली जलवायु उपयुक्त रहती है। औसतन वर्षा 50–60 से.मी. में भी इसकी खेती अच्छी प्रकार से की जा सकती है परन्तु सिंचाई का उचित प्रबन्ध होना आवश्यक है।

**भूमिः** नींबू जाति के फलों के लिए जल निकास वाली गहरी दोमट उपजाऊ भूमि जिसमें 2 मीटर तक की गहराई तक किसी प्रकार की सख्त सतह नहीं हो, उपयुक्त होती है। इसके लिए मिट्टी का क्षारीयपन (पी. एच. 8) कैल्सियम कार्बोनेट 5 प्रतिशत व विद्युत चालकता 0.5 मिली एमओएच/से.मी. से नीचे होनी चाहिए। बाग लगाने से पहले मिट्टी व पानी की जांच अति आवश्यक है। मिट्टी व पानी की रिपोर्ट लेने के बाद उद्यान विशेषज्ञ से सलाह अवश्य लें।

**पौधे खरीदते समय सावधानियांः** उद्यान की सफलना काफी हद तक स्वस्थ पौधों के चयन पर आधारित है। इसलिए पौधों को किसी विश्वसनीय नर्सरी से ही खरीदें। पौधे खरीदते समय इस बात का विशेष ध्यान दें कि आँख चढ़ाने के बाद एक वर्ष की आयु के हो तथा रोग एवं कीट से मुक्त हो। पौधों को जमीन से निकालते समय पौधों की जड़ों को किसी प्रकार की क्षति नहीं होनी चाहिए। यदि सम्भव हो तो सही किस्म के पौधे किसी सरकारी/उद्यान विभाग या कृषि विश्वविद्यालयों की नर्सरी से लेवें।

**पौधे लगाने का समय व ढंगः** नींबू वर्गीय पौधे लगाने के लिए फरवरी मार्च तथा अगस्त–सितम्बर का समय अति आवश्यक है। सबसे पहले खेत में 5–6 मीटर के फासले पर निशानदेही करें। पांच मीटर के फासले पर 156 व 6 मीटर के फासले पर 110 पौधे लगेगें। निशानदेही के स्थान पर एक मीटर की गोलाई व एक मीटर की गहराई के गड्ढ़े बाग लगाने से 2 माह पूर्व कर लें। गड्ढों को सड़ी हुई गोबर की खाद व उर्वरक व दीमक की दवा मिलाकर अच्छी तरह भर कर खुला पानी देवें। पौधों को लगाने से पहले मिट्टी की पिण्डी से लिपटी हुई घास को अलग कर देवें। घास हटाते समय मिट्टी की पिण्डी को कोई हानि नहीं होनी चाहिए। पौधे लगाने के बाद पानी अवश्य लगाएं। इसके बाद आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। पहले साल पौधों को लू एवं पाले से अवश्य बचाएं। पौधे के आसपास खरपतवार उगने नहीं दें तथा समय–समय मूलवृन्त से फटाव काटते रहें।

## खाद तथा उर्वरक :

नींबू वर्गीय पौधों (किन्नौं के अलावा) में खाद व उर्वरक नीचे दी गई सारणी के अनुसार डाले।

| आयु (पौधा) | गोबर की खाद (कि.ग्रा.) | नाईट्रोजन (ग्रा.) | यूरिया (ग्रा.) |
|---|---|---|---|
| 1–3 | 5–20 | 50–150 | 100–300 |
| 4–6 | 25–50 | 200–250 | 400–500 |
| 7–9 | 60–90 | 300–400 | 600–800 |
| 10 और अधिक | 100 | 400–800 | 800–1600 |

## किन्नौं में खाद व उर्वरक नीचे दी गई सारणी के अनुसार डालें

| आयु (पौधा) | गोबर की खाद कि.ग्रा. | यूरिया (ग्रा.) | फास्फोरस (ग्रा.) | सुपरफास्फेट (ग्रा.) |
|---|---|---|---|---|
| 1–3 | 10–30 | 240–720 | ... | ... |
| 4–7 | 50–150 | 960–1680 | 220–385 | 1375–2400 |
| 8 और अधिक | 50–150 | 1920 | 440 | 2750 |

उर्वरक का प्रयोग मिट्टी जांच के आधार पर करना चाहिए। गोबर की खाद सिगल सुपर फास्फेट तथा म्युरेट आफ पोटाश दिसम्बर के अंत में डालें। नींबू वर्गीय पौधों में 600–800 ग्राम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। आधी नाइट्रोजन मात्रा फरवरी तथा आधी मात्रा अप्रैल के महीने में डालें। मई–जून तथा अगस्त–सितम्बर में 0–5 प्रतिशत जिंक सल्फेट, 0–4 प्रतिशत मेंगनीज सल्फेट तथा 1 प्रतिशत पोटैशियम नाइट्रेट का फल की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए मई जून तथा जुलाई में तीन स्प्रे का छिड़काव करें। खाद एवं उर्वरक को पौधे के तने से 30 से.मी. दूर तथा पौधे के फैलाव तक डाल कर गुड़ाई करें। किसान खाद उपलब्ध न होने पर यूरिया का प्रयोग करें परन्तु खुराक आधा करें।

**सिंचाई:** अधिक पैदावार व अच्छी बढ़ोत्तरी के लिए सही समय पर सिंचाई करना बहुत आवश्यक है क्योंकि फलधारण करना व फलों का झड़ना दोनों ही सिंचाई पर निर्भर करते हैं। गर्मियों में 7–10 दिन के अन्तर पर व सर्दियों में 15–20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई फूल आने के समय रोक देनी चाहिए परन्तु फल बनने के तुरन्त बाद सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

**कटाई–छटाई:** नींबू वर्गीय पौधों में कटाई छटाई की आवश्यकता नहीं होती। सर्दियों में फलों की तोड़ाई के बाद सूखी, रोग एवं कीटग्रस्त टहनियों को काट देवें। पौधे का अच्छा ढ़ांचा तैयार करने के लिए शुरू से कटाई–छटाई करते रहें। मूलवृन्त पर कोई भी शाखा नहीं आने दे। तीन वर्ष तक फल न लेवें।

**रोग एवं कीट प्रकोप:** नींबू वर्गीय पौधों में विभिन्न प्रकार के रोग एवं कीट आते हैं। इनके उपचार के लिए विशेषज्ञ की सलाह पर समय–समय पर रसायनों का छिड़काव करें। पौधों को रोग एवं हानिकारक कीड़ों से बचाने के लिए उचित रसायनों का छिड़काव करते रहें तथा विशेषज्ञों की सलाह लेते रहें।

किन्नौं फलों से लदा पेड़

# पश्चिमी राजस्थान की शुष्क फल-फसलों में फटन के कारण एवं निवारण

**रामकेश मीना, दीपक कुमार सरोलिया, विजय राकेश रेड्डी एवं पी. एल. सरोज**
भाकृअनुप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

राजस्थान के गर्म शुष्क पारिस्थितिक तंत्र के मरुस्थलीय क्षेत्रों में अनार, बेल, नींबू एवं बेर की खेती सफलना पूर्वक की जा रही है क्योंकि ये सभी फसले उष्ण जलवायु में बहुत ही आसानी से उगायी जा सकती है। शुष्क क्षेत्रीय फलों के पौधों में उष्ण एवं सर्द हवाओं के वेग को सहन सहन करने की बहुत ही अद्भुत क्षमता होती है फलों के विकास एवं पकने के समय सर्द एवं शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। शुष्क एवं ठंडी जलवायु वाले पौधों के फल बहुत मीठे एवं सुगन्धित होते हैं। पश्चिमी राजस्थान की जलवायु अच्छे गुणवता के फल उत्पादन के लिए उत्तम मानी जाती है इस क्षेत्र का उच्च तापमान एवं कम सापेक्ष आर्द्रता फल वृद्धि को बाधित करती है, लंबे समय बाद अचानक मिट्टी की नमी और वायुमंडलीय आर्द्रता बढ़ती है तो फलों की आंतरिक ऊतकों की वृद्धि बहुत तेजी से होती है जिसके कारण उत्पन्न दबाव को बाह्य फल छिलका सहन नहीं कर पाता है जिसके कारण फल फट जाते है। फटे हुए फलों पर फफूदों के आक्रमण के कारण फल शीघ्र ही सड़ने लगते हैं जिससे फलों की भंडारण क्षमता कम हो जाती है। फल फटने की समस्याओं के कारण एवं निवारण का विस्तार से वर्णन का विवेचन निम्नलिखित है–

## फल फटने के कारण

### 1. वायुमंडलीय कारक

#### क. उच्च तापमान

पश्चिमी राजस्थान के मरुस्थलीय क्षेत्र की जलवायु सभी तरह के पौधों के लिए अनुकूल नहीं मानी जाती है। यहाँ गर्मियों में उच्चतम तापमान 48 से 52° से. तक एवं सर्दियो में 0° डिग्री के नीचे तक चला जाता है। अधिक उच्च तापमान के कारण पौधों एवं मृदा से वाष्पीकरण के कारण मृदा में जल की कमी हो जाती हैं। मृदा में नमी की कमी के कारण फलों की बाहरी त्वचा कठोर हो जाती है। तदोपरांत अचानक पौधों को पानी देने से फलों के अंदर ऊतकों की वृद्धी तेज एवं उचित अनुपात में नहीं हो पाती जिससे अनार, बेलपत्र, नींबू एवं बेर में फल फट जाते हैं। अनार, बेलपत्र, नींबू एवं बेर में फल पकने से पहले इस समस्या को देखा जा सकता है।

#### ख. वायुवीय वेग

पश्चिमी राजस्थान में गर्मी के महीनों में लू/गर्म हवा एक साधारण बात है। जब गर्म हवा फलों की सतह को स्पर्श करती है तो फल सतह से वाष्पीकरण में वृद्धि हो जाती है जिसके कारण फल छिलका कठोर हो जाता है। लंबे समय बाद अचानक मिट्टी की नमी और वायुमंडलीय आर्द्रता बढ़ती है तो फल के आंतरिक ऊतकों की तेजी से होने वाली वृद्धि से उत्पन्न दबाव को फल की बाह्य त्वचा सहन नहीं कर पाती है और परिणामस्वरूप फल फट जाते हैं।

#### ग. वायुमंडलीय आर्द्रता

थार रेगिस्तान की रेतीले मिट्टीयों की जल धारण क्षमता बहुत कम होती है इस क्षेत्र में अधिक वाष्पीकरण एवं कम वर्षा होती है जिसके कारण वायुमंडलीय नमी में उतार–चढ़ाव सामान्य बात है। लंबे समय बाद पौधों में सिचाई करने से फल के अंदर की कोशिकाओं की वृद्धि इसकी त्वचा की कोशिकाओं की तुलना में अधिक तेजी से होती है। परिणामस्वरुप फल फट जाते हैं।

### 2. भौतिक कारक

#### क. आंतरिक दबाव

फलों में कम परासरनी दबाव एवं उच्च सांद्रता, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ एवं एस्कोर्बिक अम्ल के कारण फल त्वचा में दबाव बढ़ जाता है और इस कारण से फल फट जाते हैं। पौधे की पत्तियों, कैनोपी एवं फलों की सतह से लगातार वाष्पीकरण से पतियों की जल क्षमता के क्षरण से उतार चढ़ाव होता है और इस कारण फल फट जाते हैं।

### ख. फल आकार

छोटे आकर के फलों की तुलना में बड़े फलों में फल फटन की समस्या कम पायी जाती है। फल का आकार, वजन एवं वजन अनुपात फल फटन में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बड़े फलों की तुलना में छोटे फलों की एपिडर्मिस कोशिकाओं का दबाव अधिक होता है जिससे फल त्वचा दबाव सहन नहीं कर पाती है, जो फल फटन का एक महत्वपूर्ण कारण माना जाता है।

### ग. वातरंद्र

पत्तियों में बड़े आकर के वातरंद्र से जल का वाष्पीकरण छोटे आकर की तुलना में अधिक होता जिससे पौधे में जल धारण क्षमता प्रभावित होती है। परिणामस्वरूप, फल फट जाते हैं।

### घ. फल परिपक्वता

फल परिपक्वता के साथ–साथ घुलनशील ठोस पदार्थ एवं शर्करा की मात्रा तथा एंटीऑक्सिडेंट एंजाइम की गतिविधि भी बढ़ जाती है। इससे फलों के बाह्य कोष में सेलुलोज तथा लिग्निन का जमाव नहीं होता है और फल फल फट जाते हैं।

### 3. पोषक तत्व

अनार, बेलपत्र, नींबू एवं बेर में फल फटन का मुख्य कारण कैल्शियम एवं बोरॉन की कमी को भी माना जाता है, क्योंकि कैल्शियम फल भीति का मुख्य अंश होता है जो फल में आंतरिक दबाव के समय फल भीति को फैलने एवं सिकुड़ने में मदद करता है। इसी कारण से फल फट जाते है।

### 4. मूलवृन्त

फल वृक्षों में मूलवृन्त उपयुक्त न होने के कारण भी फट जाते हैं। फल फटन में मुलवृन्त प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालते हैं, क्योंकि विभिन्न प्रकार के मूलवृन्तों की जल एवं पोषक तत्व अवशोषण क्षमता अलग अलग होती है। जैसे जट्टी खट्टी के मूलवृन्त की तुलना में मौसम्बी में कम तथा खट्टा मौसमी में कैरिजो मूलवृन्त की तुलना में फल फटन कम होता है।

### 5. किस्म का प्रभाव

फलों का फटना फलों की किस्म पर भी निर्भर करता है। फलों की किस्में फटन प्रतिरोधी होने से उनमें फलों के फटने की समस्या बहुत कम पायी जाती है। इसी प्रकार मोटे छिलके वाले फलों की तुलना में पतले छिलके वाले और छोटे डंठल वाले फलों यह में यह समस्या कम पायी जाती है।

### 6. पादप हार्मोन

पौधों में जिंक की कमी होने पर ऑक्जीन हार्मोन की कमी हो जाती हैं। ऑक्जीन के संश्लेषण के लिए जिंक की आवश्यकता होती है। इस प्रकार फलों में वृद्धि रोधक हार्मोन की अधिकता के फलस्वरूप भी फट जाते हैं।

### 7. यांत्रिक कारण

फलों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर परिवहन करने के फलस्वरूप भी रगड़न, टकराने तथा अनुचित तरीके से रखरखाव के कारण भी फट जाते हैं

## फलों के फटने का नियंत्रण

1. प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग– अनार, बेल, नींबू एवं बेर की फल फटन प्रतिरोधी किस्म का पौध रोपण करना चाहिए।
2. मृदा की जल धारण क्षमता बढ़ाना– रेगिस्थान की रेतीली मृदा की जल धारण क्षमता बहुत कम होती है। मृदा में पर्याप्त मात्रा में कार्बनिक पदार्थ, गोबर की खाद, कार्बनिक मल्च के समन्वित उपयोग से जल धारण क्षमता में बढ़ोतरी करके फलों में फटन की समस्या का निवारण किया जा सकता है।
3. सिचाई– शुष्क क्षेत्रीय फलों में लम्बे समय बाद अचानक एवं उच्च तापमान में सिंचाई नहीं करनी

चाहिए। पौधों को पानी प्रातःकाल एवं सायंकाल के समय ही देना चाहिए।

4. रसायनों का छिड़काव– फलों को फटने से बचाने के लिए बोरान का 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से 15 दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए। कैल्शियम सल्फेट, जिंक सल्फेट, कॉपर सल्फेट, इत्यादि रसायन भी फलों को फटने से बचाने में सहायक होते हैं। पोटेशियम सल्फेट के 3 छिड़काव करने से फल कम फटते हैं।

5. वर्षा कवच–पौधे को वर्षा जल से बचाने के लिए संरक्षित फिल्म सें फलों को ढक देना चाहिए जिससे पौधे जल अवशोषित नहीं कर पायेंगे जिससे फलों को परिक्वता तक नुकसान नहीं हो पाता है

6. हार्मोन का छिड़काव–फलों को फटने से बचाने के लिए 2,4 डी एवं एन.ए.ए. का छिडकाव/10 से 20 पी.पी.एम. की मात्रा में करना चाहिए।

7. शीघ्र तुड़ाई–सामान्यतः बड़े आकार के फल एवं अधिक परिपक्व छोटे फलों की तुलना में फटने के प्रति अधिक सुग्राही होते हैं। अतः फलों की जल्दी तुड़ाई करने से फलों को फटने से रोका जा सकता है।

8. गति अवरोधक वृक्षों की कतार– अत्यधिक हवा वाले क्षेत्रों में फलों को फटने से बचाने के लिए उत्तर पश्चिम दिशा में गति अवरोधक वृक्षों जैसे ग्रेवियां, रोबस्टा, जामुन, शीशम, इत्यादि की कतार लगाना चाहिए।

9. फलों की तुड़ाई का तरीका– फलों को तोड़ने से जमीन पर गिरने के कारण फल फट जाते हैं। जमीन पर मल्चिंग करना चाहिए। विभिन्न उपकरणों का उपयोग करना चाहिए। इस प्रक्रिया से फलों को तोड़ने पर कम नुकसान पहुंचता है।

10. फलों के ऊपर नमक एवं शक्कर के घोल का छिडकाव करें, जिससे फल की परासरणी क्षमता में उतार–चढ़ाव नहीं होगा, क्योंकि इससे फल त्वचा जल अवशोषण नहीं कर पाती है और फल फटन में कमी हो जाती है।

11. फलों को प्लास्टिक की हाइड्रोफोबिक फिल्म से ढक देना चाहिए जिससे फल वर्षा जल अवशोषित नहीं कर पायेगें तथा फल फटन भी कम होगा।

**"जीवन की परीक्षा में पर्चा भी स्वयं को बनाना होता है तो, हल भी स्वयं को ही करना होता है और यहाँ तक कि उत्तर पुस्तिका की जाँच भी स्वयं को ही करनी पड़ती है।"**

**डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम**, पूर्व राष्ट्रपति, भारत सरकार

# तर-ककड़ी उत्पादन की प्रौद्योगिकी

**बी.आर. चौधरी, एस.एम. हलधर एवं एस.के. माहेश्वरी**
भाकृअनुप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

तर–ककड़ी (कुकुमिस मेलो किस्म यूटिलिसीमस) जायद की एक प्रमुख फसल है। इसके फल हल्के हरे रंग के होते हैं जिनमें चिकनी त्वचा और सफेद गूदा होता है। इसको मुख्य रूप से नमक और काली मिर्च के साथ सलाद के रूप में कच्चा खाया जाता है। फल में शीतलन प्रभाव होता है इसलिए यह मुख्य रूप से गर्मी के मौसम में उगाई जाती है। यह एक नकदी फसल है।

## मृदा एवं जलवायु

तर–ककड़ी की खेती के लिए 6.0–7.5 पी.एच. मान वाली मिट्टी सर्वोत्तम रहती है। जीवाशंयुक्त बलुई या दोमट मिट्टी सर्वोत्तम है। यह एक गर्म शुष्क जलवायु की फसल है। बीज के जमाव एवं पौधों की बढ़वार के लिए 20–22$^{O}$ सेल्सियस तापक्रम अच्छा होता है।

## उन्नत किस्में

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान द्वारा थार शीतल नामक किस्म का विकास किया गया है। थार शीतल एक अगेती किस्म है इसके फलों की प्रथम तुड़ाई बुवाई के 45–50 दिन बाद होती है। फलों की औसत लम्बाई 25–30 सेमी तथा वजन 80–100 ग्राम होता है। यह किस्म उच्च तापमान पर भी फल देती है। शुष्क क्षेत्रों में औसत उपज 130–140 क्विंटल/हेक्टेयर तक प्राप्त होती है। तर–ककड़ी की अन्य किस्में पंजाब लोंगमेलन–1, पूसा उत्कर्ष तथा अर्का शीतल हैं।

थार शीतल

## खेत की तैयारी

तर–ककड़ी की बुआई हेतु खेत की तैयारी के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताईयां कल्टीवेटर से करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलाकर मिट्टी को भुर–भुरा कर लेना चाहिये। उचित जल निकास के लिए खेत को समतल कर लेना चाहिये तथा आखिरी जुताई के समय ही खेत में 150–200 क्विं. गोबर की सड़ी हुई खाद को अच्छी प्रकार मिला देना चाहिये।

## बीज दर एवं बीज उपचार

ड्रिप प्रणाली से खेती करने पर एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 1.0–1.2 किग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है। बीज को बोने से पूर्व केप्टान या थिरम (2 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए।

## बुआई का समय एवं विधि

तर–ककड़ी की बुवाई 15–25 फरवरी के मध्य करनी चाहिए। ग्रीष्मकाल में अगेती फसल प्राप्त करने के लिए दिसम्बर के अंतिम सप्ताह में लो टनल में बुवाई करनी चाहिए। दिसम्बर में तापमान कम रहने से अंकुरण देरी से होता है अतः, शीघ्र अंकुरण के लिए बोने से पहले बीजों को 12 घंटे तक पानी में भिगोना चाहिए तथा इसके पश्चात् टाट की बोरी के टुकड़े में लपेट कर किसी गर्म जगह पर रखना चाहिए। वर्षाकालीन फसल की बुवाई मध्य जुलाई से मध्य अगस्त तक करनी चाहिए। ड्रिप प्रणाली में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 2.0 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 50 सेमी रखनी चाहिए। एक ड्रिपर के पास 2–3 बीजों को 1–2 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए। बुवाई के 15–20 दिन बाद प्रत्येक जगह 2 स्वस्थ पौधे छोड़कर बाकी पौधों को निकाल देना चाहिए।

## पौषक तत्व प्रबंधन

खेत में 200–250 क्विंटल अच्छी प्रकार से सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट डालना चाहिये। इसके अतिरिक्त उर्वरक के रूप में 50–60 किग्रा. नत्रजन, 60–80 किग्रा. फास्फोरस तथा 50–60 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर खेत में डालना चाहिये। नत्रजन की आधी मात्रा,

फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय देना चाहिये। बची हुई नत्रजन की मात्रा दो बराबर भागों में टॉप ड्रेसिंग के रूप में जड़ के पास बुआई के 20 एवं 40 दिन बाद देनी चाहिये जिससे कुल उपज बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त पौधों में लता बनने व पुष्पन के समय जल में घुलनशील एन.पी.के. 19:19:19 की 8–10 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बूंद–बूंद सिंचाई के माध्यम से देने पर उपज में वृद्धि होती है। गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त करने के लिए पुष्पन व फलन के समय सूक्ष्म तत्वों का पर्णीय छिड़काव (5–6 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से) करना लाभदायक होता है।

मल्च व ड्रिप से तर–ककड़ी का उत्पादन

टनल तकनीक से तर–ककड़ी का उत्पादन

## खरपतवार नियंत्रण एवं निराई –गुड़ाई

सिंचाई करने के बाद नालियों तथा थालों में खरपतवार उग आते हैं। इन्हें समय–समय पर खेत से निकालते रहना चाहिये। सिंचाई करने के बाद मिट्टी सख्त हो जाती है। अतः सिंचाई के बाद हल्की गुड़ाई करनी चाहिये, इससे खेत की पपड़ी टूट जाती है और पौधों की जड़ों को हवा मिल जाती है, जिससे पौधों का विकास तेजी से होता है। गुड़ाई के समय पौधों की जड़ों पर हल्की मिट्टी चढ़ा देनी चाहिये।

## सिंचाई

सफल अंकुरण के लिए खेत में पर्याप्त नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है। पौधों की बढ़वार एवं फलों के बढ़ने के समय खेत में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए। शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में तर–ककड़ी की खेती के लिए सिंचाई की बूंद–बूंद तकनीक सर्वोत्तम रहती है। इस प्रणाली में 4 लीटर प्रति घण्टे के ड्रिपर से 2–3 दिन के अन्तराल पर 2–3 घण्टे सिंचाई करनी चाहिए।

## प्रमुख कीट एवं एकीकृत प्रबन्धन

तर–ककड़ी की फसल को फल मक्खी, कद्दू का लाल कीड़ा, हाडा बीटल, पत्ती भेदक सुंडी, लीफ माइनर, चेपा व माईट प्रमुख हैं। कीटों की रोकथाम के लिए एकीकृत प्रबन्धन की विधियाँ अपनाना चाहिए।

1. फल मक्खी, चितकबरी सुंडी, लाल कद्दू बीटल, हाडा बीटल आदि के प्रजनन चक्र और जनसंख्या वृद्धि को रोकने के लिये गर्मी के दिनों में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिये। पौधों और फलों के क्षतिग्रस्त भागों को हटा कर नष्ट कर देना चाहिए।
2. क्यू–आकर्षण ट्रैप फल मक्खी के प्रबंधन में प्रभावशाली है। क्यू–आकर्षण ट्रैप नर को आकर्षित करती है और इसके अंदर कीटनाशक रखा जाता है जिसके द्वारा नर मर जाता है और मादा को संभोग करने के लिये नर नहीं मिलता है। फल मक्खी को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न प्रकार के क्यू–लुर जैसे फलाईसीड 20 प्रतिशत की दर से, ऊगेलुर 8 प्रतिशत दर, क्यू–लुर 85 प्रतिशत + नैल्ड, क्यू–लुर 85 प्रतिशत+ डाय्जिनोन, क्यू–लुर 95 प्रतिशत + नैल्ड आदि बाजार में उपलब्ध हैं। एक लीटर पानी में 250 ग्राम गुड़ तथा 4–5 मिली मेलाथियान 50 ईसी. मिलाकर इसको छोटे–छोटे बर्तनों में भरकर एक हेक्टेयर क्षेत्र में 8–10 जगह रखना चाहिए तथा आवश्यकतानुसार उपरोक्त घोल से भरते रहने से भी फल मक्खी का नियंत्रण किया जा सकता है। खेत में रात के समय प्रकाश के ट्रेप लगायें तथा उनके नीचे किसी बर्तन में चिपकने वाला पदार्थ जैसे गुड़ का घोल भरकर रखें व इस घोल को 2–3 दिन बाद बदलते रहें।
3. कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यकतानुसार, सावधानीपूर्वक और आर्थिक नुकसान के स्तर (ईटीएल) के अनुसार करना चाहिए :–

| कीट | कीटनाशक तथा प्रति लीटर पानी मे कीटनाशक की मात्रा |
|---|---|
| फल मक्खी, कद्दू का लाल कीड़ा, पत्ती भेदक सुंडी, हाडा बीटल | डाइमीथोएट 30 ई सी या मेलाथियान 50 ई सी (1.5–2.0 मिली) या स्पाईनोसेड 45 एस सी (0.5–0.7 मिली) |

| कीट | कीटनाशक तथा प्रति लीटर पानी मे कीटनाशक की मात्रा |
|---|---|
| चेपा, सफेद मक्खी, लीफ माइनर | इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल या थायोमिथोक्जाम 70 ड्ब्लू एस (0.3–0.5 मिली) |
| माईट | प्रोपरजाइट (2 मिली) |

## प्रमुख बीमारियां एवं उनका प्रबंधन

### फफूंद जनित

**मृदुरोमिल आसिताः** पत्ती की ऊपरी सतह पर हल्के पीले कोणीय धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में इन धब्बों के ठीक निचली सतह पर मृदुरोमिल फफूंद बैंगनी रंग की दिखाई देती है। उपचारित बीज बोना चाहिए। खड़ी फसल पर इंडोफिल एम–45 या रिडोमिल एम जेड–72 का 2 ग्राम/लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

**चुर्णिल आसिताः** पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद या धुंधले धूसर, गोल व छोटे धब्बे बनते हैं जो बाद में पूरी पत्ती पर फैलकर सफेद चूर्ण की तरह ऊपरी सतह को ढक लेते हैं। तीव्र संक्रमण होने पर पत्तियाँ गिर जाती हैं। रोग की प्रारम्भिक अवस्था पर केराथेन (1 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

**फल विगलनः** इस रोग से ग्रसित फलों पर गहरे नीले रंग के धब्बे बन कर फल सड़ने लगते हैं तथा उनमें दुर्गंध आने लगती है। फलों के नीचे घास–फूस बिछाकर उनको मिट्टी की सतह के सम्पर्क से बचाना चाहिए या बेलों को सहारा देना चाहिए। बुवाई से पहले बीज का उपचार ट्राईकोड्रमा (4–5 ग्राम/किग्रा बीज) अथवा थिरम (2 ग्राम/किग्रा बीज) से करना चाहिए। खड़ी फसल मे कार्बण्डाजिम (2.5 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

**श्यामवर्ण (एन्थ्रेक्नोज):** आरम्भ में पत्तियों पर पीले, गोल जलयुक्त धब्बे दिखाई देते हैं। ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े व भूरे हो जाते हैं। रोग ग्रसित पत्तियाँ सूख जाती है। फलों पर धब्बे गोलाकार जलयुक्त व हल्के रंग के होते हैं। बीज को थिरम या कार्बण्डाजिम (1–2 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित करके बोने चाहिए। इंडोफिल एम–45 या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (2–3 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव 7 दिन के अंतराल पर 2 बार करना चाहिए।

**उकठा रोग (विल्ट):** पौधों का ऊपरी भाग किसी भी अवस्था पर मुरझा कर सूख जाता है। पत्तियाँ पीली हो जाती हैं। कॉलर वाला क्षेत्र सिकुड़ जाने से पौधा मर जाता है। पौधों की जड़ें व इनका भीतरी भाग भूरा हो जाता है। बुवाई से पहले बीज को कार्बण्डाजिम (1–2 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित करें। खड़ी फसल में कार्बण्डाजिम (2 ग्राम/लीटर पानी) से ड्रेन्चिंग करना चाहिए।

### विषाणु जनित

**मोजेकः** पौधे छोटे व विकृत हो जाते हैं तथा उनकी वृद्धि रुक जाती है। पत्तियाँ सिकुड़ जाती है तथा इन पर एक पीला मोजेक या मोटिल क्रम दिखाई देता है जिसमें क्लोरोटिक धब्बे दिखते हैं। कुछ पुष्प, गुच्छों में परिवर्तित हो जाते हैं। फल छोटे व विकृत हो जाते हैं। उपचारित बीज का प्रयोग करें। इमिडाक्लोप्रिड (0.3–0.5 मिली/लीटर पानी) का खड़ी फसल पर 10 दिन के अंतराल पर 2–3 बार छिड़काव करें, जिससे रोग वाहक कीट नष्ट हो जाते हैं।

## तुड़ाई एवं उपज

नरम व चिकने फलों को सुबह अथवा शाम के समय तोड़ना चाहिए। तुड़ाई के समय फलों की लम्बाई 20–30 सेमी होनी चाहिए। अगेती फसल से अच्छे दाम प्राप्त करने के लिए फलों को छोटी अवस्था में तोड़ना चाहिए। उपज, फलों को तोड़ने की अवस्था पर निर्भर करती है तथा औसत पैदावार 150–180 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त होती है।

# अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में कुंदरू की खेती

**लालू प्रसाद यादव, गंगाधर के. संजय सिंह एवं पी. एल. सरोज**
केंद्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र (भाकृअनुप–कें.शु.बा.सं.)
गोधरा–वडोदरा हाईवे वेजलपुर 389340 पंचमहल (गुजरात)

**परिचयः** कुंदरू (कोकसिनिया इंडिका) एक उष्णकटिबंधीय लता है जो देश के पूर्वी और दक्षिण भागों में उगाई जाती है वर्तमान मे इसे वैज्ञानिक तकनीक अपनाकर देश के सभी क्षेत्रों मे उगाया जा रहा है। कुंदरू भारत के विभिन्न आदिवासी क्षेत्रों मे दैनिक जीवन में उपयोग के लिये मुख्य रूप से उगाई जाने वाली सब्जी है। जिसका फल कच्चा रहने पर हरे और सफेद धारियों से युक्त होता है तथा पक जाने पर इसका रंग चटक सिंदूरी हो जाता है। कच्चे फल का उपयोग व्यावसायिक रूप से तरकारी बनाने के काम आते हैं और पकने पर ये ताजे भी खाए जा सकते हैं।

**मृदा व जलवायुः** इसे चिकनी मिट्टी को छोड़कर किसी भी भूमि में उगाया जा सकता है किन्तु उचित जल निकास वाली जीवांशयुक्त रेतीली या दोमट भूमि इसके उत्तम विकास और उच्च गुणवत्ता वाले फलों के उत्पादन के लिए सर्वोत्तम पायी गई है चूँकि इसकी लताएँ पानी के रुकाव को सहन नहीं कर पाती है । अतः ऐसे स्थानों पर जहां जल निकास की उचित व्यवस्था हो वहीं पर इसकी खेती करनी चाहिए कुंदरू को गर्म और आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है कुंदरू की खेती उन सभी क्षेत्रों में भी सफलनापूर्वक की जा सकती है जहां पर औसत वार्षिक वर्षा 100–150 सेमी तक होती है ।

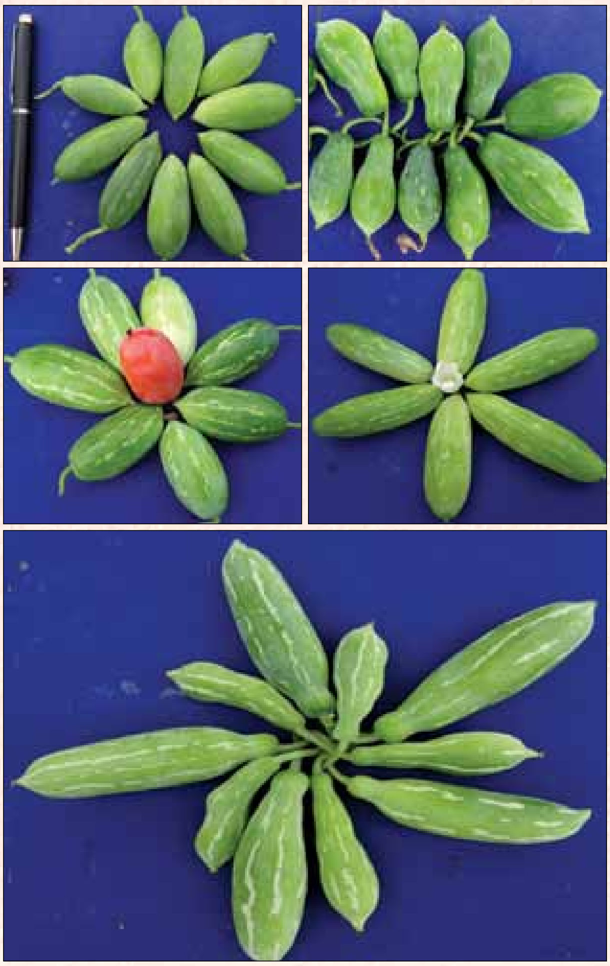

केंद्रीय बागवानी परिक्षण केंद्र गोधरा गुजरात पर कुंदरु के श्रेष्ठ जननद्रव्य

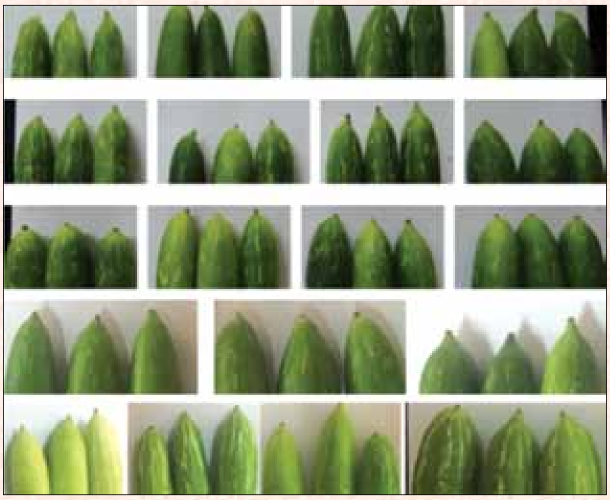

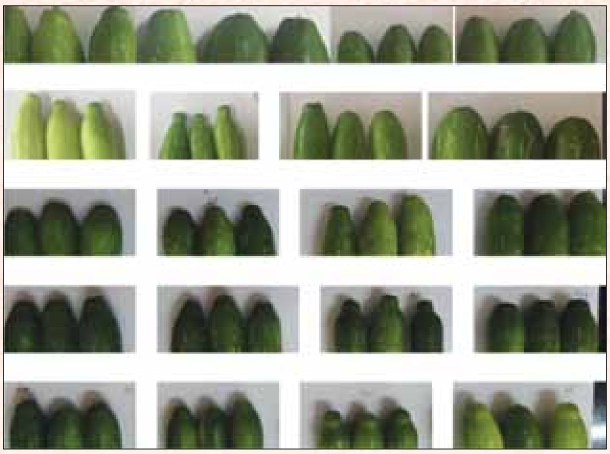

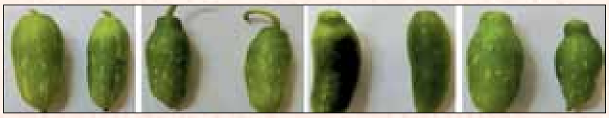

केंद्र के प्रक्षेत्र पर फलों के स्कंधों और अग्रभाग में भिन्नता

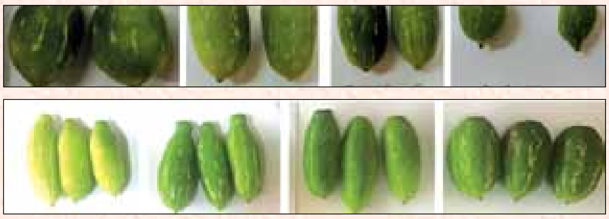

केंद्र के प्रक्षेत्र पर फलों के आकार और रंग में भिन्नता

**प्रमुख किस्में:** हाल के विगत वर्षो में इसके उपर संशोधन कार्य आईसीएआर व कृषि विश्वविद्यालय पर चल रहा है केंद्रीय बागवानी परिक्षण केंद्र गोधरा ने इस पर 2016 से संशोधन का कार्य प्रारम्भ किया है और अभी तक कुल 28 जननद्रव्यों का संग्रहण तथा उनका मूल्यांकन किया जा रहा है जिनमें से सी.एच.ई.एस. आई.जी.–2, सी.एच.ई.एस. आई.जी.–3, सी.एच.ई.एस. आई.जी.–4, सी.एच.ई.एस. आई.जी.–7, सी.एच.ई.एस. आई.जी.–8, सी.एच.ई.एस. आई.जी.–9, तथा सी.एच.ई.एस. आई.जी.–10 गुणवत्ता एवम् उत्पादन में उत्तम पाये गये हैं ।

**थार सुंदरी:** फल हल्के हरे–गहरे हरे रंग के होते हैं। इसकी औसत पैदावार 2.9–3.5 किग्रा./पौधा है ।

**इंदिरा कुंदरू–5:** फल पहली तुड़ाई के लिए 75–85 दिन में तैयार हो जाते हैं। इसकी औसत पैदावार 22. 94 किग्रा./पौधे (101.9 टन/हेक्टेयर) है। यह बोरर और फफूंदी को रोकने के लिए सहिष्णु है और ठंढ और सूखे के लिए भी सहिष्णु है। फल हरे रंग के साथ सफेद स्ट्रिप्स और लगभग वर्ष भर उपलब्ध रहते हैं।

**इंदिरा कुंदरू–35:** फल पहली तुड़ाई के लिए 75–85 दिन में तैयार हो जाते हैं। इसकी औसत पैदावार 21.08 किग्रा./पौधे (93.68 टन/हेक्टेयर) है। इसका फलन व्यवहार लगभग वर्ष भर है। इसमें लंबे आकार और हल्के हरे रंग के फल हैं।

**काशी भरपूर:** रोपण के 45–50 दिन में प्रथम तुड़ाई होती हैं। इसकी औसत पैदावार 100–130 टन/हेक्टेयर है।

**बुवाई का समय व विधि:** जून–जुलाई और फरवरी–मार्च के महीने में इसकी कलमों का रोपण जमीन में या गोबर की सड़ी हुई खाद तथा मिटटी मिलाकर भरे हुए पालीथीन के थैलों में किया जाता है इसके लिए पहले से तैयार की गई कलमों के पालीथीन को हटाकर मिटटी

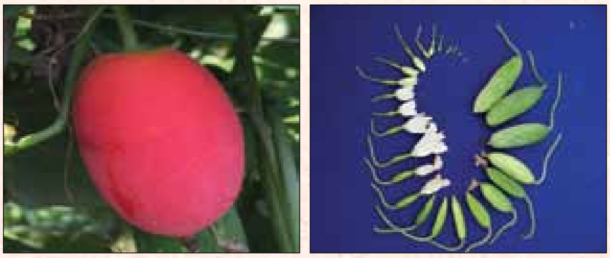

कुंदरु का पूर्ण पका हुआ फल व इसकी वृद्धि और विकास

सहित गड्ढे में रोपण करना चाहिए। कुंदरू में नर और मादा पौधे अलग–अलग होने के कारण हर 10 मादा पौधों के बीच एक नर पौधे की कलम लगाना आवश्यक होता है। 1.5–2.0 मी. पंक्ति से पंक्ति की दूरी और 3.0–3.5 मी. पौध से पौध की दूरी रखकर 60 से.मी. लम्बा और 60 से. मी. चौड़ा और 60 सेमी गहरा गड्ढा उपयुक्त होता है व्यावसायिक खेती के लिये कुंदरु में पाडाल पद्दति सबसे अच्छी पायी गई है।

**प्रवर्धन:** कुंदरू का प्रवर्धन कलम से किया जाता है इसके लिए सामान्यतः जून–जुलाई ओर फरवरी–मार्च के महीने में 4–5 माह से एक वर्ष पुरानी लताओं की 3–5 गांठ सहित 20–30 से.मी. लम्बी और आधे से.मी. मोटाई (पेंसिल के आकार की) की कलमे काट ली जाती है इन कलमों को जमीन में या गोबर की सड़ी हुई खाद तथा मिटटी मिलाकर भरे हुए पालीथीन के थैलों में लगा देते है इन कलमों की समय से सिचाई तथा देखभाल करते रहने से लगाने के लगभग 20–25 दिनों बाद कलमों की अच्छी तरह जड़े विकसित हो जाती है और उनमे शाखाएं निकल आती है।

**खाद और उर्वरक:** अधिक लाभ लेने के लिए संतुलित पोषण दें। सामान्यतया 15 से 20 क्विंटल प्रति गड्ढा अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद डालकर मिट्टी में

कुंदरु की कलमें

मिला देना चाहिए। इसके अलावा 80–100 ग्रा. यूरिया 40 ग्रा. एसएसपी तथा 80 ग्रा. एमओपी प्रति गड्ढा डालना चाहिए।

**सिंचाईः** कलमों का थाले में रोपण करने के बाद सिंचाई नितांत आवश्यकता होती है तथा बाद में आवश्यकता अनुसार सिंचाई करते हैं। ठण्ड के दिनों में जब पौधे सुषुप्त अवस्था में रहते है तब सिचाई की विशेष आवश्यकता नही रहती हैं, गर्मी के दिनों में 5–6 दिन के अन्तराल पर सिचाई की जानी चाहिए। वर्षा के दिनों में पौधों के पास पानी नहीं रुकना चाहिए अन्यथा पौधे सड़ना शुरू कर देते हैं।

**अंतः–सस्य क्रियाएंः** व्यावसायिक खेती के लिये कुंदरु को पाडाल पद्दति से प्रशिक्षित किया जाता है कुंदरू की लता काफी मुलायम होती है अतः इसे सहारे की आवश्यकता होती है क्योंकि इसकी नई शाखाएं बहुत नाजुक होती है इसलिये स्टेकिंग करने से पौधों की बढ़वार भी अच्छी होती है तथा बाद में शाखाओं को पाडाल पद्दति पर व्यवस्थित विधि से विकसित किया जाता है जिससे अधिक फल प्राप्त कर सकते हैं। सूखी हुई और अवांछनीय शाखाएं समय–समय पर आवश्यकतानुसार निकाल देते हैं। उतर भारत में ठण्ड अधिक होने के कारण पाले से बचाने के लिये लता को अक्टूबर–नवंबर में जमीन से 30 सेमी छोड़कर काट देते है।

## प्रमुख कीट व रोग

**फल मक्खीः** रूफल मक्खी के मादा कीट कोमल फलों में अपना अण्डारोपक गड़ा कर छिलके के निचे अण्डे देती है। इन अण्डों से लटें निकल कर फल में सुरंग बना कर फल के गूदे को खाती है जिससे फल सड़ने लगते है और टेड़े–मेड़े हो जाते है तथा कमजोर होकर बेल से अलग हो जाते है। क्षतिग्रस्त फल पर अण्डा दिए गए स्थान से तरल पदार्थ निकलता रहता है जो बाद में खुरंट बन जाता है। पूर्ण विकसित लट फल से निकलकर मिट्टी में जाकर शंकु बनाती है। यह कीट फरवरी से अक्टूबर माह तक सक्रिय रहता है किन्तु वर्षाकाल में इस कीट का प्रकोप अधिक हो जाता है। किसानों को फल मक्खी कीट के प्रबंधन के लिए सर्वप्रथम सड़े हुए या गिरे हुए या इससे ग्रसित फसल को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए। यह कीट मिट्टी में 5–6 मि.मी. की गहराई पर अपने प्यूपा बनाती है। अतः बेलों के आस–पास अच्छी तरह से निराई–गुड़ाई करनी चाहिए और पूरी होने पर खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए। कद्दूवर्गीय सब्जियों के चारों तरफ मक्का की फसल लगानी चाहिए क्योंकि फल मक्खी ऊँची जगह पर बैठना पसंद करती है और इसका का नर कीट मक्का की फसल पर बैठता है।

कुंदरु में फल मक्खी

उपचार के लिए ईमिडक्लोरपिड कीटनाशी की 50 मिली मात्रा को आधा किग्रा. गुड़ एवं 50 लीटर पानी के साथ घोलकर छिड़काव करे या कार्बेरिल घुलनशील चूर्ण 50 प्रतिशत एक किग्रा. प्रति हेक्टेयर के हिसाब से फसल पर छिड़काव करें।

**चुर्णिल आसिताः** रोग ग्रसित पौधों की पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद या धुंधले धूसर, गोल व चूर्ण रूप में छोटे धब्बे बनते हैं जो बाद में पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं। पत्तियों व फलों का आकार छोटा व विकृत हो

सी.एच.ई.एस. आई.जी.–7, और सी.एच.ई.एस. आई.जी.–2 के जननद्रव्यों की फलों से लदी लताए

जाता है। तीव्र संक्रमण होने पर पत्तियाँ गिर जाती है व पौधों का असमय निष्पत्रण हो जाता है। रोग ग्रसित पौधों के अवशेषों को नष्ट करना चाहिए। रोग की प्रारम्भिक अवस्था पर कारबेंडाजिम (2 ग्राम/लीटर पानी) के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

**फल तुडाई व उपजः** कलम लगाने के 40–45 दिनों बाद फूल आना शुरु हो जाता है व फूल आने के 7–10 दिन बाद फल पूर्ण रूप से विकसित होने पर कच्ची अवस्था में तुड़ाई के लिये उपयुक्त रहता है समय पर फलों की तुड़ाई नही करने पर फल सख्त हो जाते है और बाद में पूरा फल लाल हो जाता है जो सब्जी के लिए उपयुक्त नहीं माना जाता है। कुंदरू की उपज इसकी प्रजातियों के अनुसार भिन्न–भिन्न होती है लेकिन इसकी औसत उपज 150–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है ।

**उपयोगः** कुंदरू की कोमल पत्तियों और शाखाओं का उपयोग एशियाई देशों में खाना पकाने में किया जाता है। हरे रंग के कचे फल और पके हुए लाल फल सलाद या फिर सब्जी बनाकर खाये जाते हैं। मधुमेह के इलाज के लिए जड़ों और पत्तियों के रस का उपयोग किया जाता है तथा मोतियाबिंद के इलाज के लिए तने का रस आंखों में डाला जाता है। पत्तियों को पुल्टिस के रूप में फटी हुई त्वचा के उपचार में भी उपयोग लिया जाता है। कुंदरू के फलों को कुष्ठ रोग, बुखार, अस्थमा, ब्रोंकाइटिस और पीलिया के इलाज के लिए प्रयोग में लाया जाता है। बगीचे में सजावटी लता के रूप में भी कुंदरू को लगाया जाता है।

## क्या आप जानते हैं?

1. हिन्दी का सबसे पहला "नूतन ब्रह्मचारी" को माना जाता है। जो 1886 में गधकार बाल कृष्ण भट्ट द्वारा लिखा गया था।
2. हिन्दी साहित्य के प्रथम डी. लिट. डॉ. पीताम्बर दत्त बड़ध्वाल थे।
3. हिन्दी साहित्य के कथा सम्राट कहे जाने वाले मुंशी प्रेमचन्द्र का असली नाम धनपत राय था। प्रारंभ में उन्होंने अपनी रचनाएं नवाब राय के नाम से लिखी थी। उनकी पुस्तक "सोजेवतन" को राजद्रोह की प्रेरक मानते हुए इसकी सभी प्रतियों को जब्त कर लिया गया था।

# फूट ककड़ी फसल एवं बीज उत्पादन तकनीकी

**दिलीप कुमार समादिया एवं प्रेम प्रकाश पारीक**
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान बीकानेर

सब्जियों में फूट ककड़ी एक अल्प–प्रचलित फसल है तथा सर्वप्रथम केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में वर्ष 1994 से इसके जननद्रव्य संग्रहण एवं संरक्षण के साथ–साथ आवश्यक किस्मों तथा उत्पादन तकनीकियाँ विकसित करने के सघन अनुसंधान कार्य किए हैं।

## फूट ककड़ी – एक परिचय

राजस्थान में फूट ककड़ी का लोगों के खान–पान, तीज–त्यौहार एवं रीति–रिवाजों में विशेष महत्व है तथा प्रवासी रिश्ते–नातों में इसके सूखे फलों 'खेलड़ा/खेलरी' को उपहार स्वरूप (दिबड़ी) देने का प्रचलन है। यहाँ की मिश्रित खेती में सदियों से इसका एक घटक फसल के रूप में उत्पादन, ताजा व परिपक्व फलों का सब्जी, रायता, सलाद, कैच–अप व जैम में उपयोग तथा सूखाकर वर्षभर सब्जी के लिए संरक्षित, बीजों की गिरी से ठंडाई एवं औषधीय गुणधर्म इसकी बहु–उपयोगिता को प्रदर्शित करता है।

संस्थान द्वारा देश में पहली बार फूट ककड़ी की उन्नत किस्में व नवोन्वेषित तकनीकी के साथ–साथ फसल उत्पादन के लिए नवीन बीजों की उपलब्धता तथा व्यापक प्रचार–प्रसार के परिणामस्वरूप 2004 से इसकी वर्षा आधारित एवं सिंचित खेती की जा रही है। वर्ष में दो बार सफलनापूर्वक खेती कर मार्च से नवंबर महीने तक ताजा फलों की उपलब्धता तथा सूखे फलों को संरक्षित कर व्यवस्थित व्यापार ने इसको अतिलाभकारी सिद्ध कर दिया है। वर्ष 2014 से 2017 में फूट ककड़ी पर किये गये अध्ययनों से यह पाया कि सीमित वर्षा/सिंचाई व कम लागत में एक हेक्टेयर खेती से 165–225 क्विंटल ताजा फल बेचकर लगभग रूपया 65,000–1,05,000 की आय की जा सकती है। दूरस्थ क्षेत्रों में खेती कर रहे किसानों से यह पाया कि मई–जून एवं सितम्बर–अक्टूबर महीने में उत्पादित 100 क्विंटल फलों को सूखाने पर 5–6 क्विंटल तैयार खेलड़ा बाजार में बेचने पर अधिक आय के साथ स्व–रोजगार मिल रहा है।

## जैव–विविधता अध्ययन

फूट ककड़ी (काकड़िया, काचरा, फूट, डांगरा या स्नेप मेलॉन) पोलिमॉर्फिक खरबूजा समूह की अल्प–उपयोगी प्रजाति कुकुमिस मेलो वेराइटी मोमोरडिका अथवा पर्यायरूपी एग्रेटिस या कल्चर के नाम से संकलित है एवं गुणसूत्र 2 एन = 24 होते हैं। फूट ककड़ी के फल विविध आकार–प्रकार, रंग–रूप व खट्टे–मीठे स्वाद वाले होते हैं तथा पके फलों से एक विशेष गंध आती है। इसके छोटे व मध्यम आकार के फलों को मट–काचर/काचरा के नाम से जाना जाता है तथा पूर्ण विकसित एवं पके फलों को सब्जी, रायता व सलाद के उपयोग में लिया जाता है। मट–काचर/काचरा के फलों का गूदा कठोर, खट्टा–मीठा एवं स्वादिष्ट होता है तथा इनको कुछ दिनों तक भंडारित रखा जा सकता है। बड़े आकार वाले फल जो प्रायः फटते हैं उन्हें फूट/काकड़िया/फूट ककड़ी के नाम से जाना जाता है तथा इनका छिलका मुलायम एवं गूदा मीठा होता है।

पूर्ण विकसित व ताजा फलों अथवा सूखे उत्पाद से विभिन्न स्वाद की एकल एवं मिश्रित सब्जियाँ बनायी जाती है। एक विधि में काकड़िया की एकल खट्टी–मीठी अथवा ग्वारफली के साथ मिश्रित जिसमें हरी–मिर्च व मसाले–युक्त सब्जी सर्वाधिक लोकप्रिय है। पके गूदे में बराबर मात्रा में चीनी मिलाकर गुणवत्तायुक्त जैम तैयार किया जाता है। इसी प्रकार ताजा गूदा, चीनी व पानी के 2:1:2 भाग से काकड़िया पेय–रस तैयार किया जाता है। सूखे खेलड़ों के 100 ग्राम भाग में 69.56% कार्बोहाइड्रेट, 5.34% रेशा, 2.37% प्रोटीन, 1.85% वसा, 3.44% कैल्शियम, 0.38% फास्फोरस व 1.64% तत्व भस्म की पौष्टिकता होती है।

संस्थान में वर्ष 1994 से 2005 तक ककड़ी प्रजाति पर जननद्रव्य सर्वेक्षण, संग्रहण एवं मूल्यांकन के कार्य इस तरह किए गए जिससे इनके बहु–उपयोगी तथा अतिविशिष्ट जननद्रव्यों का चयन कर संरक्षण किया जा

सके। इसके अन्तर्गत अधिकतम जैव–विविधता वाले जिलों – बीकानेर, चुरू, नागौर, बाड़मेर, जैसलमेर, जोधपुर, पाली, सिरोही, अजमेर, उदयपुर, टोंक, सीकर, जयपुर, अलवर इत्यादि में संस्थान तथा एनबीपीजीआर के साथ सर्वेक्षण से फूट ककड़ी प्रजाति के लगभग 120 जननद्रव्य संग्रहित कर बारम्बार मूल्यांकन किए गए। विविध लक्षणों एवं बहु–उपयोगिता के आधार पर 65 जननद्रव्यों को राष्ट्रीय जीन बैंक, नई दिल्ली में संरक्षित रखा गया है।

## उन्नत किस्मों का विकास

विगत 25 वर्षों से जननद्रव्य मूल्यांकन, चयन, शुद्धि करण एवं अतिआवश्यक लक्षणों के आधार पर वर्गीकरण पश्चात् विशिष्ट प्रजनक लाइनों यथा एएचएस–6, एएचएस–10, एएचएस–23, एएचएस–50, एएचएस–54, एएचएस–56, एएचएस–82, डीपीवाई–216 व डीकेएस/एएचएस–2011/2 को फसल सुधार में लिया है। संस्थान द्वारा वर्ष 1998 में संस्तुति की गई किस्में ए एच एस–10 व ए एच एस–82 अत्यधिक लोकप्रिय हो चुकी हैं तथा वर्तमान में इनके बीजों की उपलब्धता एवं व्यापक प्रचार–प्रसार से देश के शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों में फूट ककड़ी की व्यावसायिक महत्वता बढ़ गई है।

## ए एच एस – 10

इसकी बुवाई पश्चात् पौधों में 25–28 दिनों पर नर एवं 35–39 दिनों पर मादा फूल खिलना प्रारंभ होते हैं तथा फलों की तुड़ाई 65–70 दिन से प्रारंभ हो जाती है। फल दीर्घायताकार जिनका छिलका चिकना, हल्का हरा–पीला धब्बे युक्त होता है। फलों का वजन 0.853–0.942 किग्रा., लम्बाई 17–20 सेमी. एवं व्यास 7.74–10.51 सेमी. होता है। विशेष गंध युक्त दूधिया–पीला गूदा खट्टा–मीठा, रसीला एवं मिठास 4.16–5.27% है। एक पौधे पर 4.27–5.92 विपणन योग्य फल जिससे 4.12–4.97 किग्रा. उपज तथा व्यवस्थित खेती कर 215–230 क्विंटल/हेक्टेयर उत्पादन होता है।

## ए एच एस – 82

इसकी बुवाई पश्चात् पौधों में 25–29 दिनों पर नर एवं 34–41 दिनों पर मादा फूल खिलना प्रारंभ होते हैं तथा फलों की तुड़ाई 66–72 दिन से प्रारंभ हो जाती है। फल लम्बे–दीर्घायताकार एवं छिलका चिकना, हल्का पीला–केसरिया रंग का होता है। फलों का वजन 0.843–0.998 किग्रा., लम्बाई 21–24 सेमी. एवं व्यास 8.85–9.72 सेमी. होता है। विशेष गंध युक्त दूधिया–पीला–गुलाबी गूदा, खट्टा–मीठा, रसीला एवं मिठास 4.34–4.92% होता है। एक बेल पर 04.53–6.46 विपणन योग्य फल जिससे 4.52–5.12 किग्रा. उपज तथा उन्नत तकनीकी से खेती कर 234–248 क्विंटल/हेक्टेयर उत्पादन होता है।

## बागवानी आधारित फसल उत्पादन

केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में विगत 25 वर्षों से क्षेत्रीय जलवायु को आधार बनाकर किए गए अनुसंधान अध्ययनों में बागवानी फसलों की व्यावसायिकता व गुणवत्तायुक्त उत्पादन क्षमता की संभावनाओं एवं रूकावटों तथा संसाधनों का समुचित उपयोग जैसे महत्वपूर्ण घटकों का विस्तारपूर्वक विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गए हैं। कम वर्षा, लम्बी समयावधि एवं अधिक तापमान वाला ग्रीष्म–काल तथा सर्दियों में अत्यधिक न्यूनतम तापमान व पाले का प्रकोप जैसी वातावरणीय रूकावटों में भी सुनियोजित फसलों का चुनाव एवं उनकी समयावधि को क्षेत्रीय जलवायु के अनुरूप उत्पादन प्रणालियों में समावेश कर व्यावसायिक बागवानी की प्रबल संभावनाएँ आँकी गई हैं।

## प्रक्षेत्र विकास तकनीक

खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास की इस तकनीकी में शुष्क बागवानी के लिए वैज्ञानिक ढंग से खेती की व्यवस्थाएँ तैयार की जाती है। प्रक्षेत्र विकसित होने से वातावरणीय रूकावटों के दुष्प्रभाव कम हो जाते हैं तथा खेत में कृषि–योग्य वातावरण बनने से फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में आवश्यक सुधार होते हैं। किसान, संस्थान द्वारा संस्तुतित खेजड़ी आधारित प्रणालियों में फल, सब्जी, नगदी व अन्य फसलों का प्रारूपों व संसाधनों के अनुरूप समावेश कर सकते हैं परन्तु उनको प्रारम्भ के 3–4 वर्षों तक कड़ी मेहनत करनी होती है जिसका प्रतिफल आय में बढ़ोत्तरी होना सुनिश्चित है।

किसान, जिनके पास 4–16 या 25 बीघा जमीन का एकल जोत है वह बागवानी आधारित सब्जी उत्पादन व्यवस्थाएँ विकसित कर सकते हैं। इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम चयनित भू–भाग की बाड़ या तार बंदी की जाती है तथा प्रक्षेत्र में अनुकूल वातावरण तैयार करने वाले स्थानीय बीजू पेड़–पौधों (खेजड़ी, लसोड़ा, कुमट, रोहिड़ा, पीलू, बोरड़ी, झरबेर, केर, फोग, खींप) को योजनाबद्ध प्रारूप में लगाया जाता है।

खेजड़ी आधारित व्यवस्था के लिए चयनित प्रक्षेत्र में उचित आकार के इकाई खेत तैयार किए जाते हैं तथा किस्म थार शोभा का पौध–रोपण उत्पादन प्रारूपों में बगीचा स्वरूप किया जाता है। प्रारूप के अनुरूप विकसित खेजड़ी के आधार–वृक्षों के मध्य की भूमि पर उगाई गई फसलों को अनुकूल लाभ तथा उत्पादन में

15 से 60 प्रतिशत वृद्धि होती है। सब्जी फसल उत्पादन एवं प्रबंधन के अनुसंधान कार्यों के परिणामस्वरूप खेजड़ी आधारित बागवानी में फूट ककड़ी के लिए तीन संयोजनों वाली व्यवस्थाओं की संस्तुति की है तथा इनको परिभाषित किया है – (अ) जैविक उत्पादन (केएम–1, 4 x 4 मीटर अथवा केएम–3, 8 x 8 मीटर) (ब) अल्प–प्रचलित फसल उत्पादन (केएम–3, 8x8 मीटर) (स) सघन फसल उत्पादन (4x4 मीटर जोड़े में पट्टिका, 24 या 44 मीटर अंतराल, केएम–9 या केएम–11) तकनीक।

## खेत की तैयारियाँ

प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीकी में सब्जियों की निरन्तर पैदावार के लिए खेत का चक्रीय प्रणाली से चुनाव करें तथा फसल बुवाई पूर्व व कटाई पश्चात् तैयारियाँ एवं कृषि–क्रियाएं जिनमें गहरी जुताई, वर्षा–जल संग्रहण तथा नमी संरक्षण प्रमुख हैं। प्रदेश में मानसून आगमन की सूचना के साथ ही चयनित खेत को तैयार कर जून में गहरी जुताई करें। इसी समयावधि में गोबर खाद का बिखराव कर जून के अंतिम सप्ताह में पुनः जुताई करें तथा पाटा लगाकर खेत को बुवाई के लिए तैयार करें। संस्थान में अध्ययनों से यह निश्चित हुआ कि पहली गहरी जुताई जून महीने के दूसरे पखवाड़े तथा फसल के लिए उपरोक्त वर्णित तकनीकी से तैयार खेत में वर्षा–जल अधिक संग्रहित व संरक्षित होता है एवं खरपतवार भी कम पनपते हैं। इसी प्रकार खरीफ ऋतु की फसल कटाई पश्चात् नवम्बर–दिसम्बर महीने में जुताई करने से इनके अवशेष व खरपतवार भूमि में मिल जाते हैं तथा सर्दियों में होने वाली वर्षा (मावठ) का जल भी खेत में अधिक संचित होता है। ग्रीष्मकालीन फसल के लिए जनवरी–फरवरी में दो बार हैरो व रोटावेटर से जुताई पश्चात् पाटा लगाकर खेत को तैयार करें।

## खाद–उर्वरक प्रबंधन तकनीक

संस्थान में सब्जी उत्पादन वाले खेतों की रेतीली मृदा को शून्य, तीन, छः व नौ वर्षीय उपयोग पश्चात् मिट्टी परीक्षण अध्ययनों से यह निश्चित हुआ है कि शुष्क जलवायु के बागवानी प्रक्षेत्रों में नियमित परन्तु नियंत्रित खाद–उर्वरकों का उपयोग अनिवार्य हैं। खेतों में पर्याप्त जीवांश एवं उत्पादकता बनाए रखने के लिए प्रतिवर्ष 5–6 ट्रेक्टर–ट्रॉली मींगनी, गोबर अथवा कम्पोस्ट खाद तथा नाइट्रोजन (80–100), फॉस्फोरस (40–50) व पोटाश (40) जैसे रासायनिक उर्वरकों (किग्रा. प्रति हेक्टेयर) की आवश्यकता है।

संस्थान में नाली अथवा बूँद–बूँद तकनीकी से सब्जी उत्पादन के लिए खाद–उर्वरक उपयोग की समेकित व्यवस्था विकसित की है तथा इससे फल–उपज में बढ़ोत्तरी एवं संसाधनों की बचत जैसे सार्थक परिणाम प्राप्त हुए हैं। इसमें पाटा लगे हुए तैयार एक हेक्टेयर क्षेत्र में खाद (50 क्विंटल), वर्मीकम्पोस्ट (5 क्विंटल), डाईअमोनियम फास्फेट (100 किग्रा.), सिंगल सुपर फास्फेट (100 किग्रा), यूरिया (50 किग्रा), म्यूरेट आफ पोटाश (50 किग्रा.) एवं नीम खली/पत्ती चूर्ण (10 किग्रा.) को रेखांकित लाइनों के 50–60 संटीमीटर चौड़ाई क्षेत्र पर बिखराव करने के पश्चात इन पर नालियाँ/सीड–बेड तैयार की जाती हैं।

फूट ककड़ी की वैज्ञानिक खेती में नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस, पोटाश व अन्य रसायनों एवं खाद की पूरी मात्रा बुवाई पूर्व तैयार की जा रहीं क्यारियाँ/नालियाँ बनाने से पहले ही उपयोग करना उपयुक्त रहा है। नाइट्रोजन की शेष मात्रा को 50 किग्रा. यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से दिया जाता है तथा इस मात्रा को तीन भाग में विभक्त कर बुवाई पश्चात 18–21, 30–35 व 45–50 दिनों पर सिंचाई के साथ नालियों में ही भुरकाव करें। बूँद–बूँद विधि में यूरिया को 4–6 भागों में विभक्त कर 10–12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई के साथ देना अति–लाभप्रद रहा है। वर्षा आधारित फसल में यूरिया का उपयोग बरसात के दिन ही करें अथवा 20 ग्राम यूरिया प्रति लीटर (2 प्रतिशत) पानी की दर से तैयार 300–500 लीटर/हेक्टेयर घोल का छिड़काव करना भी लाभप्रद रहता है।

## फसल बुवाई व सिंचाई तकनीक

फूट ककड़ी की व्यावसायिक खेती के लिए क्षेत्रीय जलवायु एवं सिंचाई संसाधनों को आधार बनाकर इसकी योजनाबद्ध बुवाई – वर्षा, ग्रीष्म तथा शीत ऋतु में की जा सकती है। वर्षा ऋतु अथवा बारानी फसल के लिए बीज बुवाई जून के अंतिम सप्ताह से प्रारम्भ कर जुलाई महीने के अंत तक जब भी बरसात दिनों का अच्छा दौर हो, उसी समयावधि में करें। सिंचाई–जल की उपलब्धता होने पर ग्रीष्म–कालीन फलोत्पादन के लिए बीज बुवाई फरवरी में करना सर्वोत्तम है, परन्तु यह कार्य मार्च–अप्रैल महीने में भी किया जा सकता है।

संस्थान में प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीकी के अंतर्गत डिग्गी आधारित जल–बचत खेती के साथ–साथ शुष्क क्षेत्रीय वातावरणीय प्रकोप जैसे – अत्यधिक सर्दी व पाले से बचाव तथा अगेती फूट ककड़ी उत्पादन करने के लिए एक स्वदेशी व्यवस्था (सरफेस चैनल/टेंट टाईप स्ट्रेक्चर कवरिंग) विकसित की है। इस संरक्षित फसल उत्पादन

तकनीकी में दिसम्बर के अंतिम सप्ताह से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक बीजों की वर्णित विधियों से बुवाई कर नालियों अथवा लोहे के ढाँचों को जमीनी–स्तर पर पॉलीथीन की चादरों से ढका जाता है। इसमें बुवाई पश्चात् से फसल को प्रारंभिक 35–40 दिनों तक अत्यधिक ठण्ड/पाले के दुष्प्रभाव से सुरक्षित रखा जाता है। तत्पश्चात् फरवरी महीने में जब तापमान अनुकूल होता है उसी समयावधि पर पॉलीथीन की चादरें हटा दी जाती है तथा खुली फसल में आवश्यक कृषि–क्रियाएँ अपनाकर अगेती फलन ली जाती है।

फूट ककड़ी के लिए स्थानीय स्तर पर विकसित उन्नत एवं प्रमाणित किस्मों का चुनाव करें तथा परम्परागत विधि से बुवाई के लिए 1.5–2.0 किग्रा./हेक्टेयर बीज पर्याप्त रहता हैं। शीघ्र अंकुरण एवं अच्छी प्रारम्भिक बढ़वार के लिए बीजों को बुवाई से पहले 1–2 घंटे पानी में डुबाकर रखें अथवा गर्म पानी में नमक (20 ग्राम/लीटर) के साथ डुबाते हैं तथा जब हल्के–थोथे बीज पानी की सतह पर आ जाते हैं तब उनको अलग कर दिया जाता है। इस क्रिया पश्चात् बर्तन के तल में बैठे बीजों को टाट की गीली पोटली में बाँध लेवें तथा इसे रात भर गोबर की खाद के गड्ढे या गड्ढा बना कर जमीन में रखें। इस तरह तैयार किए बीजों को बुवाई के तुरंत पहले 2–3 ग्राम फफूंदीनाशक दवा/किग्रा. अथवा ट्राईकोडर्मा से उपचारित करें। संस्थान में बुवाई पर किए गए अनुसंधान कार्यों में फूट ककड़ी की किस्म ए एच एस–82 के बीजों को उपरोक्त वर्णित विधि से उपचारित तथा कुड, नाली अथवा बूँद–बूँद तकनीकी से बुवाई के लिए 1.0–1.25 किग्रा./हेक्टेयर पर्याप्त रहा है।

फूट ककड़ी की वैज्ञानिक खेती में समेकित फसल बुवाई एवं सिंचाई जल–प्रबंधन के लिए कुड या नाली एवं बूँद–बूँद अथवा फव्वारा पद्धतियों को अपनाना लाभप्रद रहा है। परंतु बुवाई का समय, विधि एवं सिंचाई प्रणालियों का उपज पर प्रभाव पाए गए हैं इसलिए ऋतु व जलवायु के विश्लेषणात्मक जानकारियाँ रख कर ही फसल उत्पादन कार्य किए जाने चाहिए। संस्थान द्वारा फसल बुवाई की विधियाँ विकसित की हैं जिनका वर्णन निम्न प्रकार से किया गया है–

**(अ) नाली विधिः** संस्थान में किए गए अनुसंधान कार्यों के निष्कर्षों के आधार पर वैज्ञानिक ढंग से बेलवाली सब्जियों की खेती के लिए नाली विधि सर्वोतम है। इस विधि में पाटा लगा कर तैयार किए खेत में 1.5–2.5 मीटर दूरी के अंतराल पर 50–60 सेमी चौड़ाई की हल्की–गहरी नालियाँ बनाई जाती हैं। मुख्य नाली के दोनों ओर फसल के लिए नालियों की लम्बाई 25 मीटर रखें तथा इन्हें पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर बनावें। रेखांकन कर बनाई गई इन नालियों में खाद व उर्वरकों को अच्छी तरह मिलाकर बुवाई के लिए तैयार किया जाता है। नालियों के अंदर की उतरी ढलान पर 50–50 सेमी दूरी के अंतराल पर 3–4 बीजों की बुवाई करें। नवांकुरों में जब 2–4 वास्तविक पत्तियाँ अथवा 18–21 दिनों के होते हैं, उसी समय प्रत्येक बुवाई स्थल पर एक या दो स्वस्थ पौधे रखकर शेष निकाल देवें। जब पौधे 30–35 दिनों के होते हैं तब उन्हें नालियों से बाहर बेल फैलने वाली जगह की ओर मोड़ देवें तथा इनके आस–पास स्थानीय घास–फूस की पलवार करें। पौधों की प्रारम्भिक अवस्था से फल जमाव होने तक 6–7 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करें।

नाली विधि में पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में देखभाल एवं निराई–गुड़ाई कार्य सहजता से किए जाते हैं। बरसात के दिनों में इन नालियों एवं इसके आस–पास के ढलान क्षेत्र में वर्षा–जल अधिक मात्रा में संग्रहित होता है तथा यह जल फसल के लिए अति–उपयोगी रहता है। इस विधि से खेती करने पर खाद–उर्वरक व सिंचाई जल इन्हीं नालियों में ही दिया जाता है जिससे इनकी अधिक मात्रा में बचत होती है। नाली विधि से फसल बुवाई एवं सिंचाई प्रबंधन तकनीकी से एक तिहाई (33 प्रतिशत) जल, खाद–उर्वरक एवं मानव श्रम जैसे बहुमूल्य संसाधनों की बचत के साथ अधिक फल उपज प्राप्त हुई है। क्यारी विधि में जहाँ पूरे फसल क्षेत्र को सिंचित किया जाता है वहीं नाली विधि में पौधों की सिंचाई इन्हीं नालियों में ही की जाती है तथा बेल फैलने वाला लगभग दो तिहाई क्षेत्र असिंचित रखा जाता है।

**(ब) बूंद–बूंद विधिः** सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था में सब्जियों की बूँद–बूँद विधि से खेती में फसल उत्पादन के उत्साहजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं। संस्थान द्वारा विकसित डिग्गी आधारित जल बचत खेती की नाली विधि की संरचना पर बूँद–बूँद पद्धति से फूट ककड़ी उत्पादन की तकनीकी विकसित की है। इस तकनीकी में जल बचत के साथ पौधों में अधिक वानस्पतिक वृद्धि तथा विपणन योग्य फलों की संख्या में भी बढ़ोतरी हुई है।

शुष्क जलवायु को आधार बनाकर किए गए अनुसंधान कार्यों से बूँद–बूँद तकनीकी से सब्जी फसलों के लिए 14–16 मिलीलीटर व्यास की लेट्रल पाइप, जिन पर 50–50 सेमी. दूरी के अन्तराल पर चार लीटर प्रति घंटा पानी छोड़ने वाले इन–लाइन ड्रीपर्स सर्वाधिक उपयुक्त रहे हैं। चयनित खेत में रेखांकन कर 2–2 मीटर की दूरी के अंतराल पर लेट्रल पाइपों को विधिवत् बिछाया जाता

है तथा इनको मध्य में बिछी 50–75 मिलीमीटर व्यास की पानी आपूर्ति की पाइप लाईन से जोड़ा जाता है।

पाटा लगाने के पश्चात् तैयार खेत में जिन जगहों पर लेट्रल पाइपों के मुहाने हैं उन्हीं के पास 50–60 सेमी. चौड़ाई की हल्की–गहरी व लम्बवत् नालियाँ अथवा गहरे कुड बनाते हैं तथा इनमें खाद–उर्वरकों का मिश्रण मिलाकर पुनः नाली, कुड अथवा उठी–पट्टिका स्वरूप तैयार कर इनके मध्य में लेट्रल पाइपों को बुवाई के लिए व्यवस्थित किया जाता है। प्रारम्भिक हल्की सिंचाई कर प्रत्येक ड्रिपर के पास 3–4 बीजों की बुवाई करें तथा 18–21 दिनों की अवस्था पर एक–दो स्वस्थ पौधे रखें। जल बचत खेती में फूट ककड़ी में 2–3 दिनों के अन्तराल पर तथा फसल की प्रारम्भिक अवस्था में 1.0–1.5 घंटा एवं फलन के समय 1.5–2.0 घंटा सिंचाई करें।

**(स) कुड विधिः** रेतीले टिब्बों या असमतल खेतों में वर्षा आधारित अथवा फव्वारा पद्धति से फूट ककड़ी की बुवाई कुड विधि से करना उपयुक्त रहा है। एकल फसल के लिए खेत में 1.5–2.0 मीटर दूरी के अंतराल पर देशी हल से गहरे कुड बनाते हुए उर्वरकों के साथ बीज बुवाई की जाती है अथवा कुडों में 50–50 सेमी. दूरी के अंतराल पर 3–4 बीजों की हाथ से बुवाई करना उत्तम रहा है। नवांकुर जब 18–21 दिन के होते हैं, तब प्रत्येक स्थल पर एक–दो स्वस्थ पौधे रखते हुए शेष निकाल दिए जाते हैं तथा इसी समयावधि में पहली निराई–गुड़ाई व अन्य आवश्यक अंतरःशस्य क्रियाएँ करें। वर्षा आधारित फूट ककड़ी उत्पादन की इस तकनीकी में भी नाली विधि की तरह ही फसल प्रबन्धन कार्य किए जाते हैं तथा सूखे की स्थिति एवं सिंचाई व्यवस्था होने पर फव्वारा पद्धति से एक या दो जीवनदायी सिंचाई कर सुनिश्चित फल–उपज प्राप्त की जाती है।

**(द) मिश्रित फसल विधिः** परम्परागत फसल उत्पादन पद्धति में स्थानीय सब्जियों के बीजों को मिश्रित कर छिटकाँव विधि से बुवाई की जाती है। इस तरह बुवाई कार्य से पौधे अव्यवस्थित उगते हैं जिससे इनकी सही ढंग से संभाल नहीं हो पाती है तथा फसल में उन्नत क्रियाओं को भी नहीं अपनाया जा सकता है। मिश्रित खेती में बेलवाली सब्जी फसलों की भी कतारों एवं कुड विधि अपनाकर सहजतापूर्वक बुवाई की जा सकती है तथा इसमें निश्चित की गई दूरी या 5–6 मीटर के अंतराल पर हल से कुड बनाते है एवं इनमें अलग–अलग फसलों के एकल बीजों की बुवाई की जाती है। जब नवांकुर 18–21 दिन के होते हैं, तब प्रत्येक बुवाई स्थल पर एक–दो स्वस्थ पौधे रखते हैं तथा इसी समयावधि में खेत में अंतरःशस्य क्रियाएँ कर खरपतवार मुक्त रखा जाता है।

## बीज उत्पादन तकनीक

फूट ककड़ी किस्मों के बीज उत्पादन करने के लिए फसल की वह सभी तकनीकियाँ एवं प्रबंधन व्यवस्थाएँ अपनानी होती हैं जिससे स्वस्थ एवं भरपूर फल उपज प्राप्त की जा सके। इसी के साथ किस्म की आनुवंशिकीय लक्षणों को बनाए रखने के लिए विशेष बातों का ज्ञान रखना होता है क्योंकि इसमें पर–परागण क्रिया से निषेचन एवं फल जमाव होते हैं। अतः उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखकर एक समय एवं एक स्थान पर फूट ककड़ी की एक ही किस्म का बीज उत्पादन किया जा सकता है तथा इस क्षेत्र के 500–800 मीटर दूरी में इसकी दूसरी किस्म या प्रजाति अथवा जाति के पौधे नहीं उगाए जा सकते हैं। इसके अन्तर्गत कुकुमिस प्रजातियाँ जिनमें काचरी, मट–काचर, तर–ककड़ी, सलाद–ककड़ी, आर्या–ककड़ी, वंगा–ककड़ी एवं खरबूजा समूह की फसल अथवा इनके स्वतः उगे पौधे भी फूट ककड़ी बीज उत्पादन क्षेत्र के 500–800 मीटर दूरी तक नहीं होने चाहिए क्योंकि इन सभी प्रजातियों में परस्पर पर–परागण से फल–जमाव होते हैं तथा इससे किस्मों की आनुवंशीय शुद्धता प्रभावित हो जाती है।

राजस्थान के शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्र में काचरी, मट–काचर, फूट ककड़ी एवं ककड़ी फसलें कुकुमिस मेलो की स्थानीय प्रजातियाँ हैं तथा यहाँ की खेती में फसलों के साथ कुष्माण्ड कुल की इन प्रजातियों के पौधे स्वतः ही उगते हैं एवं परती/गोचर भूमि में भी इनके पौधे पाए जाते हैं। यहाँ के खेतों में इन प्रजातियों के स्वतः उगे पौधों की प्रति हेक्टेयर संख्या भी अधिक पाई गई है तथा कुछ प्रमुख फसलों में यह खरपतवार बन जाते हैं। दूसरी ओर वर्षा आधारित व परम्परागत खेती में इन स्थानीय प्रजातियों के स्वस्थ एवं उपयोगी पौधों को रखकर फल उपज भी ली जाती है। अतः फूट ककड़ी की किस्मगत तथा आनुवंशिकीय शुद्ध बीज के लिए फसल उत्पादन एवं प्रबंधन में विशेष दक्षता की आवश्यकता होती है।

फूट ककड़ी की ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल से सफलनापूर्वक बीज उत्पादन किया जाता है तथा फरवरी एवं जुलाई का दूसरा पखवाड़ा बुवाई के लिए सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है। बीज उत्पादन के लिए एक फसल क्षेत्र में एक ही किस्म (एएचएस–10 अथवा एएचएस–82) की बुवाई की जाती है तथा कुड, नाली अथवा बूँद–बूँद तकनीकी से व्यवस्थित खेती करना सर्वाधिक सुरक्षित है। नवांकुर जब 18–21 दिनों के होते हैं तब प्रत्येक बुवाई

स्थल पर एक–दो स्वस्थ पौधों को रखें। इसी समयावधि में पूरे फसल क्षेत्र को विधिवत जाँचा जाता है जिससे इस प्रजाति एवं कुकुमिस मेलो की अन्य प्रजातियों के स्वतः उगे पौधों को निकाला जा सकें तथा यह निरीक्षण कार्य 3–4 बार क्रमशः 18–21, 25–35 एवं 45–50 दिनों की अवस्था पर किया जाना चाहिए। इसी प्रकार बीज उत्पादन वाली फसल क्षेत्र के पास से 500–800 मीटर तक के भू–भाग की भी 2–3 बार निगरानी कर उपरोक्त वर्णित प्रजातियों के स्वतः उगे अथवा अवांछनीय पौधों को निकाला जाता है।

शुद्ध बीज उत्पादन के लिए फूट ककड़ी में अंकुरण पश्चात् से पहली तुड़ाई तक प्रक्षेत्र की 3–4 बार गहन जाँच करनी होती है, जिससे अवांछनीय पौधों को समय–समय पर खेत से निकाला जा सके। खेत निरीक्षण का कार्य बुवाई पश्चात् के 18–21 दिनों पर जब नवांकुरों की छंटनी की जाती है, 25–35 दिनों पर जब पौधों में नर एवं मादा फूल खिलना प्रारम्भ होते हैं, 45–50 दिनों पर जब फल जमाव प्रारंभ होता है तथा 65–70 दिनों पर जब फल परिपक्व एवं पहली तुड़ाई प्रारंभ की जाती है, तब इन अवस्थाओं पर करना सर्वाधिक उपयुक्त रहा है।

पूरे भरे बीज के लिए एक बेल पर 4–6 फलों को पकने के लिए रखते हुए शेष की कच्ची अवस्था में ही तुड़ाई कर लेनी चाहिए। फूट ककड़ी में पहली तुड़ाई के समय पूरे फसल क्षेत्र का निरीक्षण करें तथा बीज के लिए खेत के मध्य क्षेत्र से ही फल इकट्ठा करना सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है। शुद्ध एवं स्वस्थ बीज उत्पादन के लिए फसल की प्रारंभिक 3–4 तुड़ाई के फलों को ही उपयोग में लेवें। तुड़ाई पश्चात् फलों को सुरक्षित एवं छायादार जगह पर एकत्रित कर पुनः किस्मगत जाँच करें तथा अवांछनीय फलों को अलग कर लेवें। फलों को लम्बवत् काटकर बीज को रस सहित चौड़े मुँह के बर्तन में एकत्रित करें तथा 10–12 घंटे पश्चात इसे स्वच्छ पानी से धोकर छलनी के माध्यम से बीजों को अलग कर लेवें। छलनी में एकत्रित बीजों को पुनः पानी से धोकर छायादार एवं सुरक्षित जगह पर सुखावें ततपश्चात इनको 4–5 दिन तक हवादार कक्ष में खुला रखें। इस प्रकार तैयार बीजों को पॉलीथीन की थैलियों अथवा प्लास्टिक के डिब्बों में भरकर 4–5 वर्षों तक बुवाई के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है।

बूंद–बूंद सिंचाई आधारित पर फूट ककड़ी के खेत का दृश्य

# चवलांफली (लोबिया) की उत्पादन प्रौद्योगिकी

**अजय कुमार वर्मा एवं डी.के. समादिया**
भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान

देश के उत्तर–पश्चिमी गर्म शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्र विशेषकर राजस्थान,गुजरात एवं इसके आस–पास जिसमें मध्यप्रदेश व महाराष्ट्र आते हैं, राज्यों की परम्परागत तथा वर्षा आधारित खेती में बाजरा, ज्वार, मक्का आदि के साथ–साथ दलहनी व तिलहनी फसलों की खेती की जाती है। इस परम्परागत मिश्रित खेती में चवलांफली या लोबिया एक बहुउपयोगी फसल है जिसका अधिकतर उत्पादन दाने हेतु किया जाता है परंतु स्थानीय स्तर पर ताजा कच्ची फलियों व दानों को भी सब्जी के रूप में उपयोग लिया जाता है। चवला की खेती में मुख्यतः इसकी स्थानीय व दाने वाली किस्मों की खेती की जाती है एवं वर्तमान में कुछ सब्जी उपयोग वाली किस्में जैसे पूसा कोमल, पूसा दोफसली, अर्का समृद्धि, काशी उन्नति, काशी कंचन, काशी निधि, पूसा सुकोमल, पूसा फालगुनी, अर्का गरिमा आदि की खेती भी जा रही है किन्तु सिंचाई जल की अधिक आवश्यकता रहती है।

## पोषण महत्व

ताजा फलियों को दानारहित या दानासहित विविध प्रकार की सब्जी बनाने हेतु उपयोग में लिया जाता है। वर्तमान समय में गुणवत्तायुक्त संतुलित आहार में प्रोटीन की उचित मात्रा के लिए सब्जी वाली फलियों की मांग बढ़ती जा रही है किन्तु अभी तक इसकी ज्यादातर वर्षाकालीन खेती ही हो रही है। राजस्थान के मरुस्थलीय क्षेत्र में भी पैदा होने वाली चवलां की फलियाँ प्रायः पूरी तरह सब्जी उपयोग हेतु नही हैं परंतु व्यापक स्तर पर इसका उपयोग मिश्रित सब्जी के रूप में किया जाता है। लोबिया प्रोटीन का एक समृद्ध स्रोत है। यह राइबोफ्लेविन, नियासिन, विटामिन बी 6, विटामिन ए, विटामिन सी, थायमिन, कैल्शियम, आयरन, फास्फोरस, पोटेशियम, तांबा, फोलेट, मैग्नीशियम और मैंगनीज जैसे खनिजों का भी एक अच्छा स्रोत है।

## जैव विविधता एवं किस्म अध्ययन

राजस्थान व अन्य प्रदेशों में चवलांफली की अधिकांश किस्में दलहन वाली हैं परंतु इन क्षेत्रों में कई प्रकार के जननद्रव्य पाये गए हैं जिनकी फली व दाना सब्जी उपयोग हेतु उपयुक्त है। विगत 20 वर्षों में संस्थान के बीकानेर व गोधरा में इस फसल की सब्जी उपयोगी किस्में विकसित करने हेतु कार्य किए गए हैं एवं कई वर्षों तक जननद्रव्य को जांचा गया तत्पश्चात इन दो लाइनों 'ए.एच.सी.पी.–1–4–1' और 'ए.एच.सी.पी.–2–3' की पहचान की गई।

## खेत की तैयारी

मानसून आगमन की सूचना के साथ ही जून महीने में भूमि को तैयार कर गहरी जुताई कर लेवें तथा गोबर या भेड़–बकरी की मींगनी खाद मिलाकर अंतिम सप्ताह में एक बार पुनः जुताई करें, तत्पश्चात पाटा लगाकर खेत खेत को फसल बुवाई के लिये तैयार रखें। दीमक व भूमिगत कीड़ों से बचाने के लिये नीम की खली अथवा कीटनाशी पाउडर 25 किग्रा./हेक्टेयर का भुरकाव पाटा लगाने से पहले करना चहिये। ग्रीष्मकालीन बुवाई के लिये खेतों को जनवरी–फरवरी में दो बार जुताई पश्चात पाटा लगाकर तैयार करना चहिये इस तरह तैयार खेतों में चवलांफली को कुड, नाली या बूंद–बूंद विधि अपनाकर उत्पादन करना लाभप्रद रहता है।

मरुस्थलीय रेतीली मिट्टी वाले खेतों में सब्जी उत्पादन के लिये नियंत्रित परंतु लगातार खाद व उर्वरकों का प्रयोग करना अनिवार्य है तथा यह मृदा की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिये भी आवश्यक है। खेतों में अच्छी जीवांश के लिये गोबर (200–250 क्विंटल/हेक्टेयर) या 5–6 ट्रैक्टर– ट्राली भेड़–बकरी की मींगनी खाद प्रतिवर्ष देवे। चवलाफली की व्यवस्थित खेती के लिये रासायनिक उर्वरकों में 40 किग्रा. नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना आवश्यक है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले खेत की तैयारी के समय दें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा को यूरिया के रूप में तीन भागों में बाँटकर फसल बुवाई के 18–25 दिनों बाद, दूसरी 30–35 दिनों पर जब पौधों में फैलाव एवं फूलों का आना प्रारम्भ हो तथा अंतिम भुरकाव 45–50 दिनों पर जब फल जमाव प्रारम्भ होते हैं उस समय देना सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है। बूंद–बूंद प्रणाली में यूरिया का उपयोग 4–6 भागों में विभक्त कर 10–12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई के साथ करना सर्वाधिक उपयुक्त रहा है।

## फसल बुवाई व सिंचाई तकनीक

चवलांफली की खेती प्रायः वर्षा आधारित होती है, हालांकि सिंचाई व्यवस्था होने पर उपयुक्त उत्पादन तकनीक (बूंद–बूंद विधि) व सीमित जल प्रबंधन अपनाकर ग्रीष्मकालीन खेती भी की जा सकती है। वर्षा आधारित खेती के लिए फसल की बुवाई बरसात के मौसम जून–जुलाई में की जाती है, जब भी अच्छी वर्षा का दौर हो। इसी तरह, ग्रीष्मकालीन फसल की बुवाई फरवरी–मार्च में की जाती है। उन्नत तकनीक से फसल बुवाई हेतु 12–15 किग्रा./हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है। कतार एवं पौध के बीच अंतर, बीज दर पर निर्भर करता है। बीज दर अधिक होने पर अंतर कम और इसके विपरीत होगा। शुष्क जलवायु में इसकी बुवाई हेतु 45–50 से.मी. (कतार–कतार) 30–50 से.मी. (पौध–पौध) की दूरी पर्याप्त रहती है। इसी प्रकार बूंद–बूंद विधि में 1.0 मी. X 30–50 व से.मी. की दूरी व कुड़ विधि में 45–60 से.मी. • 30–45 से.मी. की दूरी पर बुवाई करना उचित रहता है। कम बीज होने पर बीजों की बुवाई हाथ से करना ठीक रहता है इसी प्रकार कुड़ विधि में बीज की बुवाई देशी हल से खाद के साथ मिलाकर की जाती है। बुवाई से पहले, बीज को 2–6 घंटों के लिए पानी में भिगोया जाना चाहिए और कवकनाशी जैसे थायरम या बाविस्टिन (2 ग्राम प्रति किलो बीज) के साथ बीज उपचार भी करना चाहिए। पौधो की जड़ों में अधिकतम गाँठों के बनने व वायुमंडलीय नाइट्रोजन का मिट्टी में स्थिरीकरण करने के लिये बुवाई से पहले बीजों को 40 ग्राम राइजोबियम कल्चर प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। राइजोबियम कल्चर को गर्मी या प्रत्यक्ष सूर्य के प्रकाश के संपर्क में आने से बचाना चाहिए। प्रत्येक बुवाई स्थल पर, 2–3 बीज बोए जाते हैं। अच्छे अंकुरण के बाद और जब पौधे 8–10 सेंटीमीटर की ऊंचाई के हो जाते हैं या 18–21 दिन बाद, प्रत्येक बुवाई स्थल पर एक या दो स्वस्थ पौधों को रखते हुए अन्य पौधों को हटा देना चाहिये। बुआई से पहले मिट्टी में पर्याप्त नमी जरूरी है।

शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्र में यदि वर्षा ऋतु में उगाई जाने वाली फसल में निश्चित अंतराल पर उचित वर्षा होती रहे तो अतिरिक्त सिंचाई की आवश्यकता नही होती है। प्रायः इसे वर्षाकालीन फसल के रूप में ही उगाया जाता है, समय पर वर्षा न हो या वर्षा अंतराल 18–21 दिन से अधिक हो तो आवश्यकता के अनुरूप 2–3 जीवनदायी सिंचाई करनी चाहिए। अनुसंधान कार्यों के आधार पर सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था में बूंद–बूंद पद्धति बेहतर पायी गई। इस तकनीक में न केवल जल की बचत होती है बल्कि उपज भी अधिक प्राप्त होती है। बूंद–बूंद

खेत में फसल का सामान्य परिदृश्य

पुष्पन एवं फलन

पद्धति से फसल की बुवाई हेतु 14–16 मिलीमीटर व्यास की एकल पाइप लाइने जिन पर 50–50 से.मी. की दूरी के अंतराल पर चार लीटर प्रति घंटा पानी छोडने वाले इन–लाइन ड्रिपर्स हो, सर्वाधिक उपयुक्त रहे हैं।

## नवोन्वेषित कृषि क्रियाएँ

वर्षा या सिंचाई पश्चात रेतीली एवं बलुई मिट्टी कठोर परत के रूप मे जम जाती है जिससे बीज अंकुरण एवं नवोदित पौधों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है इसलिए प्रारम्भिक अवस्था में पौधों के आस–पास निराई–गुड़ाई करना लाभप्रद रहता है। यह कार्य क्रमशः फसल बुवाई के 18–21, 35–40 एवं 55–60 दिनों बाद करना सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकालने से जड़ों में वायु संचार अच्छा रहता है जो फसल विकास के लिए लाभदायक होता है ।

## फली तुड़ाई व उपज

मौसम की स्थिति और किस्म के आधार पर सब्जी के लिए बुवाई के 50–60 दिनों के बाद फसल तैयार हो जाती है। सब्जी हेतु फली की तुड़ाई कच्ची एवं कोमल अवस्था में करें जब फली लंबी, कम रेशेदार, अधिक रसीली और अधिक प्रोटीन युक्त होती है। कम अंतराल पर बार–बार तुड़ाई की जाती है। तुड़ाई के बाद फलियों को छायादार स्थान पर रखना चाहिए ताकि फलियों से खेत की गर्मी दूर हो सके। अच्छी कीमत पाने के लिए विपणन से पहले रेशेदार और अधिक परिपक्व फली एवं कीट व रोग से प्रभावित फलियों को दूर करना बेहतर होता है। कम संसाधनों में व्यवस्थित खेती कर 55–135 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है।

ए.एच.सी.पी.–1–4–1

ए.एच.सी.पी.–2–3

## फसल सुरक्षा

**सामान्यतः** लोबिया की फसल में किसी विशेष कीट व बीमारी का प्रकोप नहीं पाया जाता है परंतु स्वस्थ एवं गुणवत्तायुक्त फसल उत्पादन हेतु सुरक्षात्मक उपाय के तौर पर फसल में फूल आने व फलियाँ बनने के समय इमिडाक्लोरपिड (0.3 मिली दवा प्रति लीटर पानी) या रोगोर (1.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी) जैसी दवाओं के 100–150 घोल का प्रतिहेक्टेयरकी दर से छिड़काव करें।

## बीजोत्पादन हेतु फसल की कटाई

बीज उत्पादन में पृथक्करण दूरी एवं अवांछित पौधों का विशेष ध्यान रखना चाहिए। बीज शुद्धता बनाए रखने के लिए आधार एवं प्रमाणित बीज की पृथक्करण दूरी क्रमशः 50 एवं 25 मीटर पर्याप्त रहती है। साथ ही फसल में दो बार अवांछित पौधों को निकाल दें पहली बार फसल के फूल आने की अवस्था में तथा दूसरी बार फलियों में बीज भरने की अवस्था में पौधे तथा फलियों के गुणों के आधार पर अवांछित पौधों को निकाल दें। बीज की फसल के लिए फलियाँ 75–125 दिनों में परिपक्व हो जाती हैं और फिर फसल को अच्छी तरह से सुखाने के बाद काटा जाता है। नियमित अंतराल पर पकी फलियों की तुड़ाई करके बीज को अलग कर लिया जाता है इसके बाद उन्हें पर्याप्त रूप से सुखाकर बीमारी नाशक तथा कीट नाशक से उपचारित कर एक ठंडे एवं सूखी जगह पर संग्रहित किया जाता है। बीज की पैदावार 12 से 15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक होती है।

**मुझे देश की आजादी और भाषा की आजादी में से किसी एक को चुनना पड़े तो मैं निःसंकोच भाषा की आजादी को चुनूंगा, क्योंकी मैं फायदे में रहूंगा। देश के आजादी के बावजूद भाषा गुलाम रह सकती है, लेकिन भाषा आजाद हुई तो देश गुलाम नहीं रह सकता।**

**- गणेश शंकर विद्यार्थी**

# शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्र में बैंगन की प्रमुख बीमारियाँ एवं उनका एकीकृत प्रबंधन

**सुशील कुमार माहेश्वरी, राम्या श्री देवी, बी. आर. चौधरी, पी. पी. सिंह एवं पी. एल. सरोज**
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीछवाल, बीकानेर (राजस्थान)

हमारे भोजन में साग–सब्जियों का विशेष महत्व है, जो हमारे शरीर में पोषक तत्वों की पूर्ति करती है। भारत में बैंगन का सब्जी के रूप में विशेष स्थान है, इसलिए इसे सब्जियों का राजा भी कहा जाता है। बैंगन भारत में आलू के बाद दूसरी सबसे अधिक खपत वाली सब्जी है। बैंगन की खेती लगभग पूरे साल की जाती है। विश्व में चीन (54 प्रतिशत) के बाद भारत बैंगन की दूसरी सबसे अधिक पैदावार (27 प्रतिशत) वाला देश है। 2017–18 के दौरान भारत में बैंगन का कुल क्षेत्रफल 669 हजार हेक्टेयर और उत्पादन 12400 हजार टन है। बैंगन की तीन प्रकार की प्रजातियाँ (लंबे फल वाली, नाशपाती के आकार के फल वाली तथा गोल फल वाली) पायी जाती हैं। फल बैंगनी या हरापन लिए हुए पीले रंग का या सफेद होता है। शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्र में खेती के लिए प्रतिकूल परिस्थितियां हैं जो फसल उत्पादन की क्षमता को प्रभावित करते हैं। हालांकि, खेती में किसानों की प्रमुख चुनौतियों में से एक बीमारियों के कारण नुकसान का होना है। इसलिए शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्र में बैंगन की प्रमुख बीमारियों को पहचान कर उनका समय पर निदान होना अति आवश्यक है। बैंगन के रोगों (आर्द्र पतन रोग, फोमोप्सिस झुलसा रोग, पत्ती धब्बा रोग, उकठा रोग एवं छोटी पत्ती वाला रोग आदि) का एकीकृत प्रबंधन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है।

## 1) आर्द्र पतन रोग

### लक्षण

**यह रोग मुख्यतः** अर्ध–शुष्क क्षेत्र में पाया जाता है। यह रोग पौधशाला में उगे हुये पौधों पर लगता है जो काफी हानि पहुंचाता है। बरसात के मौसम में उच्च आर्द्रता के साथ मिट्टी में नमी और मध्यम तापमान इस बीमारी को बढ़ावा देते हैं। इस बीमारी में दो प्रकार के लक्षण पाये जाते हैं :–

**अ) अंकुरण से पूर्व वाला आर्द्र पतन रोग**– मिट्टी से अंकुरण के पहले बीज अधिक नमी के संपर्क में आने से गल जाते हैं।

**ब) अंकुरण के बाद आर्द्र पतन रोग**– जमीन के स्तर पर कॉलर ऊतकों में संक्रमण हो जाता है। संक्रमित ऊतक नरम हो जाते हैं जिससे कॉलर भाग (मिट्टी के पास वाला भाग) सड़कर मर जाते हैं।

आर्द्र पतन रोग

**कारक**– पिथियम स्पेसीज

### एकीकृत प्रबंधन :

अ) बुवाई के लिए स्वस्थ बीज का चयन करना चाहिए।

ब) बोने से पहले बीज को थीरम या केप्टान (2 ग्राम/किग्रा) से उपचार करना चाहिए।

स) नर्सरी की शीर्ष मिट्टी को बेविस्टीन (5 ग्राम/वर्ग मीटर क्षेत्र) के साथ उपचार करना चाहिए और नर्सरी को पखवाड़े अंतराल पर बेविस्टीन (2 ग्राम/लीटर पानी के साथ) से ही ड्रेंच करना चाहिए।

द) बुवाई से 30 दिन पहले पॉलीथीन शीट फैलाने से मृदा सौर्यकरण करना चाहिए।

क) मिट्टी में जैव–नियंत्रण एजेंट (ट्रायकोडर्मा विरिडी) का उपयोग (1.2 किग्रा/हेक्टेयर) करना भी एक सीमा तक नियंत्रित करता है।

## 2) फोमोप्सिस झुलसा रोग

### लक्षण

यह संक्रमित बैंगन के पत्ते और फल की एक बड़ी गंभीर बीमारी है। कवक नर्सरी में रोपण वाली फसल को संक्रमित करता है। जब पत्तियां संक्रमित होती हैं तो छोटे व गोलाकार धब्बे दिखाई देते हैं जो किनारे के साथ–साथ अनियमित काले भूरे रंग के हो जाते हैं। संक्रमित फलों पर लक्षण धुंधले धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं जो बाद में विलय हो जाते हैं तथा संक्रमित फल भी सड़ जाते हैं।

फोमोप्सिस झुलसा रोग

**कारक:** यह बीमारी फोमोप्सिस वेक्सांस नामक कवक द्वारा फैलती है।

### एकीकृत प्रबंधन

क) संक्रमित पौधों को नष्ट करके रोग को कम किया जा सकता है।

ख) बीमारी के पौधों से प्राप्त बीजों को रोपण के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए।

ग) फसल चक्र को जरूर अपनाना चाहिए। यह बीमारी को कम करने में काफी कारगर है।

घ) रोग रोधी प्रजाति जैसे– पूसा भैरव को उगाना चाहिए।

च) नर्सरी में बीज उपचार थीरम (2 ग्राम / किग्रा.) से करना चाहिए।

छ) इंडोफिल जेड –78/मेंकोजेब (0.25 प्रतिशत) का छिड़काव 10 दिन के अंतर पर करना इस बीमारी को काफी नियंत्रित करता है।

## 3) आल्टरनेरिया वाला पत्ती झुलसा रोग

### लक्षण

सर्वप्रथम पत्ती पर हल्के भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में गहरे रंग के होकर आकार में बड़े हो जाते हैं। धब्बे पत्तियों पर केन्द्रीयकृत गोल आकार में बनते हैं जिससे पत्तियाँ झुलसी हुई दिखाई देती है। गंभीर रूप से प्रभावित पत्तियां नीचे गिर जाती हैं। प्रभावित फलों पर लक्षण बड़े गहरे धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। संक्रमित फल पीले रंग के होकर समय से पहले ही गिर जाते हैं।

**कारक:** आल्टरनेरिया मिलोंजेनी

### एकीकृत प्रबंधन

क) स्वस्थ व प्रमाणित बीज ही प्रयोग करें।

ख) संक्रमित पौधों व खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए।

ग) फसल चक्र अपनायें।

घ) फसल पर इंडोफिल एम– 45 (2 ग्राम/लीटर पानी) का 7–10 दिन के अंतराल पर पर्णीय छिड़काव करें। इसके अलावा हेक्जाकोनाजोल (0.05 प्रतिशत) का भी एक बार पर्णीय छिड़काव करें।

च) मध्यम रोग रोधी प्रजाति जैसे–एम.ई.बी.एच.–10 को उगाना चाहिए।

## 4) पत्ती धब्बा रोग

### लक्षण

इस रोग के लक्षण मुख्य रूप से पत्ती पर दिखाई देते हैं। हल्के भूरे रंग के अनियमित, छोटे व गोलाकार धब्बे पुराने पत्ती पर दिखाई देते हैं। धब्बों की संख्या और आकार बढ़ जाता है। ये धब्बे एक–दूसरे के साथ मिलकर पत्ती को रोगग्रस्त कर देते हैं। गंभीर रूप से संक्रमित

पत्ती धब्बा रोग

पत्तियां पीले रंग की होकर समय से पहले गिरती हैं, जिसके परिणामस्वरूप फल उपज कम हो जाती है।

**कारक** : सरकोस्पोरा मिलोंजेनी

## एकीकृत प्रबंधन

क) खेत में साफ–सफाई रखना चाहिए।

ख) मिट्टी की गहरी जुताई करें।

ग) बेविस्टिन या क्लोरोथोनिलिल (2 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव रोग नियंत्रण में लाभदायक है।

## 5) उकठा रोग

### लक्षण

यह बीमारी छोटी उम्र के पौधों के साथ–साथ परिपक्व पौधों पर भी पायी जाती है। संक्रमित युवा पौधे इंटरनोड्स की कमी के कारण बौने दिखायी देते हैं। ऐसे पौधे अधिकतर फूल और फल नहीं देते हैं। संक्रमित पत्तियों की लैमिना पर अनियमित रूप से बिखरे हुए नेक्रोटिक पीले रंग के धब्बे दिखायी देते हैं जो बाद में पत्तियों की पूरी सतह को ढक देते हैं। प्रभावित पौधों की जड़ों को विभाजित कर देखा जाये तो एक विशेष गहरा भूरे रंग की विकृति दिखायी देती हैं। जिससे पौधों को पानी तथा पोषण नहीं मिल पाता है। अंत में पौधे सूख जाते हैं।

**कारक** : वर्टिसिलियम स्पेसीज

## एकीकृत प्रबंधन

क) खेत में साफ–सफाई रखना चाहिए।

ख) मिट्टी की गहरी जुताई करें।

ग) भिंडी, टमाटर तथा आलू के साथ फसल चक्र को नहीं लेना चाहिए।

घ) बेनलेट (2 ग्राम/लीटर पानी) से मृदा की ड्रेंचिंग और पर्णीय छिड़काव करने से इस बीमारी को काफी कम किया जा सकता है।

## 6) फल सड़न रोग

### लक्षण

यह रोग मुख्यतः अर्ध–शुष्क क्षेत्र में पाया जाता है। सबसे पहले फल पर छोटे जलयुक्त धब्बों/ घावों के रूप में लक्षण दिखाई देते हैं, जो बाद में बड़े आकार के हो जाते हैं। संक्रमित फल की त्वचा भूरी हो जाती है।

**कारकः** फाइटोप्थोरा निकोसियानी

## एकीकृत प्रबंधन

क) खेत में साफ–सफाई रखना चाहिए।

ख) मिट्टी की गहरी जुताई करें।

ग) संक्रमित/प्रभावित फलों को हटाने से रोग को काफी कम कर सकते हैं।

घ) प्रभावित पौधों को बेविस्टिन या क्लोरोथोनिलिल (2 ग्राम/लीटर पानी) से छिड़काव करना रोग नियंत्रण में बहुत उपयोगी है।

च) मध्यम रोग रोधी प्रजाति जैसे–एम.ई.बी.एच.–10 को उगाना चाहिए।

छ) 2–3 बार डाइफोलेटान (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव 10 दिनों के अंतराल पर करने से रोग को काफी कम कर सकते हैं।

## 7) मोजेक रोग

### लक्षण

बीमारी के लक्षण जैसे–इंटरनोड़ छोटे रहना, पत्तियों की मोजेक, मोटलिंग और पौधों का बौनापन हैं। संक्रमित पौधों की पत्तियां विकृत और छोटी हो जाती हैं तथा मृत ऊतकों के लक्षण दिखायी देते हैं।

**कारकः** यह एक विषाणु जनित रोग है जो एफिड्स (एपिस गोस्पी और माईजस पर्सिका) द्वारा फैलता है।

## एकीकृत प्रबंधन

क) खेत से विषाणु संक्रमित पौधों को उखाड़कर नष्ट करना चाहिए।

ख) खरपतवार नियंत्रित करें जो कि इनोकुलम के स्रोत के रूप में कार्य करते हैं।

ग) विषाणु/वायरस मुक्त बीज का उपयोग करें।

घ) बुवाई से पहले बाधा फसलों (मक्का/बाजरा) की 5–6 पंक्तियां उगाना जो वेक्टर प्रविष्टि को रोकें।

च) फसल पर 10 दिनों के अंतराल पर फोस्फोमिडॉन (5 मिलीलीटर/10 लीटर पानी में) के 2–3 पर्णीय छिड़काव द्वारा एफिड्स की संख्या को कम कर बीमारी को कम किया जा सकता है।

## 8) छोटी पत्ती वाला बैंगन का रोग (लिटिल लीफ आफ ब्रिंजल)

### लक्षण

यह बीमारी अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में पायी जाती है। इस रोग का प्रकोप बैंगन की पत्तियों पर होता है शुरु में संक्रमित पौधों की पत्तियां हल्के पीले रंग की हो जाती हैं

छोटी पत्ती वाला रोग

जो आकार में छोटी और विकृत होती हैं। रोग प्रभावित पौधों में जड़ें, शाखाएँ और पत्तियां कम हो जाती हैं जिससे पत्तियों के झुंड बन जाने से पौधे एक झाड़ीदार रूप में दिखायी देने लगते हैं। पौधे के हिस्सों को विकृत कर पौधे बाँझ हो जाते हैं। संक्रमित पौधे फूल एवं फलन नहीं करते हैं। अगर कोई फल बनता है तो परिपक्वता पर विफल रहता है।

**रोग कारकः** यह बीमारी फाइटोप्लाज्मा के कारण होती है।

### एकीकृत प्रबंधन

क) पिछले रोपण के संक्रमित/संवेदनशील पौधों के उन्मूलन से इस रोग को कम किया जा सकता है।

ख) इस रोग में रोगोर (1.5 मिलीलीटर/लीटर पानी में) अथवा मैलाथियन (2 मिलीलीटर/लीटर पानी में) का छिड़काव वेक्टर को काफी नियंत्रित करता है।

ग) रोग रोधी प्रजातियां जैसे– पूसा परपिल, क्लस्टर, मंजरी गोटा, अर्का शील व बनारस जाईंट को उगाना चाहिए ।

घ) पौधों की रोपाई से पूर्व टेटरासाइक्लीन के (1 ग्राम/10 लीटर पानी) घोल में जड़ों को डुबोकर रोपाई करना चाहिए और रोपाई के 4 से 5 हफ्ते बाद दवा का छिड़काव भी करना चाहिए।

**हिन्दी का पाट महासागर की तरह विस्तृत होना चाहिए जिसमें मिलकर और भाषाएं अपना बहुमूल्य भाग ले सकें।**

**- सरदार वल्लभ भाई पटेल**

# वर्षाकाल में करेला उगाएं

**प्रज्ञा सिंह एवं ओमपाल सिंह**
पीएचडी अध्ययेता, उद्यान शास्त्र विभाग एवं पादप कार्यिकी विभाग
जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) 482004
'सवादी लेखक का ईमेल: spragya455@gmail.com

कुष्मांड कुल की सब्जियां कुकरबिटेसी कुल के अंतर्गत आती है। कुष्मांड कुल को कद्दूवर्गीय सब्जियों के नाम से भी पुकारा जाता है। करेला भी इनमें से एक है जिसको अंग्रेजी में बिटर गार्ड के नाम से पुकारा जाता है। करेला एक बहुपयोगी सब्जी है। करेला हमारे देश में एक लोकप्रिय सब्जी है। यह औषधीय गुणों से भरपूर होता है। मधुमेह तथा गठिया के रोगियों लिए इसकी सब्जी का सेवन विशेष लाभदायक है। इसके सेवन से पेट के कीड़े मर जाते है। इसमें विटामिन–सी अच्छी मात्रा में पाया जाता है। करेला कड़वा, शीतल, पाचक, कृमिनाशक, ज्वरनाशक होता है। यह पीलिया, मधुमेह, ब्रोंकाइटिस तथा पेट के रोगों में लाभदायक हैं। कुष्मांड कुल की सब्जीयों में पुष्प मोनोशियस होते हैं अर्थात नर व मादा पुष्प एक ही बेल पर अलग–अलग आते हैं। इनके परागण की क्रिया मुख्य रूप से कीटों द्वारा होती हैं।

**जलवायु एवं भूमि**:– इसकी बेल की अच्छी बढ़वार 250–300 सेल्सियस तापमान पर होती है। इस पर पाले का प्रभाव बहुत अधिक होता है। करेले की खेती के लिए उपजाऊ दोमट मिट्टी जँहा पानी का निकास अच्छा हो, उत्तम होती है। इसकी खेती गर्मी और वर्षा ऋतु दोनों में की जाती है।

**बुवाई का समय**:– करेले की बुवाई ग्रीष्मकालीन फसल के लिये फरवरी–मार्च व वर्षाकालीन फसल के लिए जून–जुलाई में करना उचित है। पॉली हाउस में वर्ष भर में कभी भी इसकी बुवाई की जा सकती है।

**बीजोपचार एवं बुवाई**:– बीमारियों की रोकथाम के लिये बीजों को बोने से पूर्व कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम प्रति किग्रा. के हिसाब से उपचारित कर बोना चाहिये। बुवाई का समय इस बात पर निर्भर करता है कि इन सब्जियों की बुवाई नदी पेटे में की जा रही है या समतल भूमि पर। अगेती फसल लेने के लिए विभिन्न उपाय अपनाये जा सकते है।

करेले में बीजों का अंकुरण 200 सेल्सियस से कम तापमान पर ठीक प्रकार से नहीं हो पाता हैं। अतः बीजों को सीधे खेत में न बोकर प्लास्टिक की थेलियों में बोया जा सकता है। थैलियों में रखे बीजों की झारें से सिंचाई करें। वातावरण गर्म बनायें रखने के लिए रात के समय थैलिया को पौलीथीन से ढक देवे। उपयुक्त तापमान होने पर तैयार खेत में स्थानान्तरण करें।

सीधे खेत में बोने के लिए बीजों को बुवाई से पूर्व 24 घंटे पानी में भिगोवें, बाद में टाट में बांधकर 24 घंटे रखें। उपयुक्त तापक्रम पर रखने से बीजों की अंकुरण प्रक्रिया गतिशील हो जाती है। इसके बाद बीजों को खेत में बोया जा सकता है। इससे अंकुरण प्रतिशत बढ़ जाता है।

**उन्नत किस्में**:– कोयम्बटूर लौंग, अर्काहरित, पूसा विशेष, हाईब्रिड–49, पूसा दो मौसमी, कल्याणपुर बारहमासी, हिसार सलेक्शन, सी–96, वी.के.–1–प्रिया, प्राइड ऑफ गुजरात, महीको करेला, ग्रीन लोंग, पूसा प्रिया, पूसा हाईब्रीड, फूले ग्रीन, फूले उज्ज्वला, पंजाब–14, जयपुर लोकल, आदि करेला की उन्नत किस्में है।

**बीज की मात्रा एवं दूरी**:– करेला में बीज दर 4–5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर रखें। बीज बुवाई के समय कतार से कतार दूरी सवा मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी आधा

मीटर रखें। करेले की बुवाई नालियों में करते है और एक स्थान पर 2–3 बीज बोये जाते है। अंकुरण के कुछ दिन बाद 1–2 पौधों को रखकर शेष को हटा देवें।

खाद एवं उर्वरक का प्रकार एवं मात्रा

| | |
|---|---|
| गोबर की खाद | 200 से 250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर |
| नत्रजन | 80–100 किग्रा. प्रति हेक्टेयर |
| फास्फोरस | 40 किग्रा. प्रति हेक्टेयर |
| पोटाश | 40 किग्रा. प्रति हेक्टेयर |

देशी खाद, फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की 1/3 मात्रा अर्थात 30 किग्रा. नत्रजन बुवाई के समय भूमि में मिलाकर देवें तथा शेष नत्रजन की मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर टॉपड्रेसिंग (खड़ी फसल में) के रूप में प्रथम बार बुवाई के 25–30 दिन बाद एवं दूसरी बार फूल आने के समय देना चाहिये।

**सिंचाई एवं निराई–गुड़ाई:–** करेले में आरम्भ से ही नियमित सिंचाई तथा निराई–गुडाई करते रहना चाहिये। इसकी जड़े उथली होने के कारण ज्यादा गहराई तक निराई–गुडाई नहीं करनी चाहिये। फसल के पत्ते चौड़े होते है व ग्रीष्मकाल में अधिक तापमान के कारण अधिक पानी की आवश्यकता रहती है। इनकी पर्याप्त बढ़वार के लिए खेत में बराबर नमी रहनी चाहिये।

अतः गर्मी के मौसम में भूमि की किस्म एवं मौसम अनुसार 2–3 दिन से लेकर 6–7 दिन के अन्तराल पर नियमित सिंचाई करते रहना चाहिये, परन्तु वर्षाकाल में आवश्यकता नुसार ही सिंचाई करें। वैसे तो प्रथम सिंचाई बुवाई के तत्काल बाद तथा अंकुरण होने तक नियमित हल्की सिंचाई तथा फिर हर 2–3 दिन बाद सिंचाई करें।

**उपज:–** करेला में उपज 75 से 100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक होती है।

**सहारा देना:–** यह देखा गया है कि करेले में यदि बेलों को सहारा देकर ऊपर फैलने दिया जाए तो अधिक उत्पादन मिलने के साथ–साथ फलों की गुणवत्ता भी अच्छी रहती है। यह काम वर्षाकाल में फलों को सड़ने से बचाने में विशेष रूप से सहायक होता है। अतः बेलों को लकड़ी, सरकंडो या लोहे के तारों का पांडाल बनाकर फैलने देना चाहिये। छोटे क्षेत्र में या घर में इस सब्जी को लेने पर इन्हें बाउन्ड्रीवॉल, छप्पर, चारे व घास के ढेर का सहारा देना चाहिये। पौधे जब 10–15 सेमी. के हो जायें तो खेत के चारों कोनों में बांस के डन्डे गाडकर चारों तरफ नारियल की रस्सी का जाल बनाकर पंडाल बना लेना चाहिये। सहारा देने के लिए बबूल, खेजड़ी की डालियां, खपच्चियां काम में ले सकते हैं।

**वृद्धि नियामकों का छिड़काव:–** यह सिद्ध हो चुका है कि कद्दूवर्गीय सब्जियों में वृद्धि नियामकों के छिडकाव का मादा फूलों की संख्या एवं वृद्धि में योगदान रहता है। इन विभिन्न नियामकों का छिड़काव दो बार पौधों की छोटी अवस्था मे किया जाना चाहिये। वृद्धि नियामकों का प्रथम बार छिड़काव पौधों की दो पत्ती अवस्था में किया जाना चाहिये। प्रयोगों से प्राप्त परिणामों के अनुसार 50–100 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि पाई गई है। दूसरा छिड़काव पौधे की चार पत्तियों की अवस्था में करना चाहिये।

## रसायनो का छिड़काव इस प्रकार से करें–

- मेलिक हाइड्राजाइड 50 पी.पी.एम. का घोल अर्थात 2.5 ग्राम रसायन 50 लीटर पानी में।
- नेफथेलीन एसिटिक एसिड 100 पी.पी.एम. का घोल अर्थात 10 मिलिलिटर रसायन को 50 लीटर पानी में।
- इथ्रेरल 100 पी.पी.एम. का घोल अर्थात 10 मिलिलिटर रसायन को 50 लीटर पानी में।

# गोभी वर्गीय सब्जियों की जैविक खेती

**कुमारी लता (शोघ छात्रा) एवं प्रमोद कुमार यादव,**
उद्यान विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्विद्यालय, बीकानेर

गोभी वर्गीय सब्जियां जैसे की पत्तागोभी, फूलगोभी, गांठगोभी, बोकली, ब्रुसल्स स्प्राउट, आदि ब्रेसोकेसी कुल के अन्तर्गत आते हैं तथा इनका उत्पत्ति स्थाान भूमध्यसागरीय क्षेत्र है। गोभी वर्गीय सब्जियां कैरोटिनॉइड, विटामीन सी तथा ए कैल्शियम, आयरन, मेग्नीशियम तथा सिनिग्तीन एल्केयलॉड का अच्छा स्त्रोत होता है। इनके उपयोग करने से रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। रसायनिक उर्वरकों के उपयोग से उत्पादित खाद्य पदार्थ मनुष्य में कई घातक बीमारियां जैसे कि कैंसर, मेथेमोग्लबिनेमिया (रक्त में हीमोग्लबिन की असामान्य मात्रा) आदि के लिये कारण होते है। रसायनिक उर्वरकों का लम्बे समय तक उपयोग मृदा की उपजाऊ क्षमता कम करते हैं। इनके उपयोग से मृदा कठोर अनउपजाऊ तथा बंजर भी होने लगती है तथा मृदा में पाये जाने वाले लाभदायक सूक्ष्म जीव भी नष्ट हो जाते हैं। अतः यह आवश्यक है कि जैविक खेती को अधिक से अधिक अपनाया जाये।

## जैविक खेती

जैविक खेती फसल उत्पादन के साथ–साथ पशुपालन करने की विधि है, जिसके अन्तर्गत कीटनाशी, रसायनिक खाद, आनुवंशिक रुपान्तरित जीव, एन्टबियोटिक तथा वृद्धि हार्मोन का उपयोग नहीं होता है, अथवा बहुत ही कम होता है। जैविक उत्पादन एक समग्र प्रणाली है जिसे कृषि पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर विविध समुदायों की उत्पादकता और फिटनेस को अनुकूलित करने के लिये डिजायन किया गया है, जिसमें मिट्टी के जीव, पौधे, पशुधन शामिल है। जैविक उत्पादन के मुख्य लक्ष्य ऐसे उद्यमों एवं उत्पादन का विकास करना है, जो पर्यावरण के साथ टिकाऊपन और सामंजस्यपूर्ण हो।

## जैवकि खेती से लाभ

जैविक उत्पादों का मूल्य सामान्य उत्पादों की तुलना में 10–30 प्रतिशत ज्यादा मिलता है। जिससे कि किसानों की आय में वृद्धि होती है। रासायनिक खादों की तुलना में जैविक खाद सस्ते होते हैं तथा ये खेत के ही उत्पाद होते हैं। अतः खाद को खरीदने में अतिरिक्त निवेश नहीं करना पड़ता है, इससे भी आय में वृद्धि होती है। जैविक उत्पादन मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए उपयोगी होता है। इससे बीमारियों से बचाव भी होता है। जैविक खेती से मृदा की गुणवत्ता में सुधार होता है, तथा मृदा उपजाऊ बनी रहती है और लाभदायक सूक्ष्मजीवों की संख्या में भी वृद्धि होती है। जिससे की लम्बे समय तक खेतों से अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है।

### तालिका 1. जैविक खेती लिये फूलगोभी की किस्मों का चयन

| क्र.सं. | फसल | किस्में | रोग/कीट के प्रति प्रतिरोधी |
|---|---|---|---|
| 1. | पत्तोगोभी | पूसा ड्रम हैड | ब्लैक लैग प्रतिरोधी |
| | | बजर शिवर | क्लब रुट के प्रति प्रतिरोधी |
| | | बजर मार्केट, बजर बॉलहैड | पत्तागोभी मोजेइक प्रतिरोधी |
| | | ग्तीनलेण्ड हेमर, पूसा मुक्ता | काला गलन प्रतिरोधी |
| | | गोल्डन एकर, रेड रॉक, रेड पिकलिंग | पत्तागोभी तितली रोधी |
| 2. | फूलगोभी | पूसा स्नौबॉल के–2 एस, जानावाओन, इवाह | स्ले स्नरोटिनिआ गलन प्रतिरोधी |
| | | पूसा शुभ्रा | काला गलन, बाला धब्बा/कर्ड ब्लाइट प्रतिरोधी |
| 3. | ब्रोकली | गोल्डन एकर, लेट जाइण्टि | काला गलन प्रतिरोधी |
| | | सोलो हैड | काला गलन प्रतिरोधी |

## जलवायु एवं मृदा

गोभी वर्गीय सब्जियों को ठण्डे वातावरण की आवश्यकता होती है। अधिकांश गोभी वर्गीय सब्जियों को बीजांकुरण तथा वृद्धि के लिये सामान्यतः 12–180 से. तापमान की आवश्यकता होती है, परन्तु इसकी खेती उच्च ताप (लगभग 250 सें.) पर भी की जा सकती है। उपजाऊ, मध्यम से भारी, उपयुक्त जल निकास वाली मृदा गोभी वर्गीय सब्जियों की वृद्धि के लिये अच्छी रहती है। इन्हें थोड़ी अम्लीय से क्षारीय मृदा में भी उगाया जा सकता है। इनके लिये उपयुक्त पी.एच. 6.0 से 7.0 होती है, परन्तु पत्ताभगोभी 7.0 से कम पीएच. के लिये संवेदी होती है, इससे कम पीएच पर पत्तागोभी में क्लब रुट बीमारी हो जाती है।

## बीज बोने का समय तथा बीजदर

फूलगोभी की अगेती किस्मों को बोने का समय मई से जुलाई, मध्य किस्मों का जुलाई–अगस्त तथा स्नोबॉल प्रकार (पछेती) की किस्मों का सितम्बर–अक्टूबर होता है। अगेती किस्मों की बीजदर 500–700 ग्राम प्रति हेक्टेयर, मध्यम तथा पछेती की 300–500 ग्राम प्रति हेक्टेयर होती है।

पत्तोगोभी की अगेती किस्मों को बाने का उपयुक्त समय जुलाई–अगस्त तथा मध्यम और पछेती किस्मों के लिये क्रमशः सितम्बर तथा अक्टूबर–नवम्बर का समय उपयुक्त होता है। अगेती किस्मों की बीजदर 500–600 ग्राम तथा मध्यम और पछेती किस्मों की बीजदर 400 ग्राम प्रति हेक्टेयर होती है।

गांठगोभी की अगेती किस्मों के लिये अगस्त तथा पछेती किस्मों के लिये सितम्बर–अक्टूबर उपयुक्त समय होता है। अक्टूबर माह गांठगोभी की बुवाई के लिये सर्वोत्तम होता है। इसकी बीजदर 1–1.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर होती है।

ब्रोकली की बुवाई के लिये उपयुक्त समय अगस्त से अक्टूबर तथा बीजदर 400–500 ग्राम प्रति हेक्टेयर होती है।

### तालिका 2. गोभीवर्गीय सब्जियों का रोपण तथा रोपण दूरी

| सं. | फसल | किस्म प्रकार | रोपण दूरी |
|---|---|---|---|
| 1. | फूलगोभी | अगेती | 45 X 30 सेमी |
| | | मध्यम और पछेती | 60 X 45 सेमी |
| 2. | पत्तोगोभी | अगेती | 45 X 45 सेमी |
| | | मध्यम और पछेती | 60 X 45 सेमी |
| 3. | गांठगोभी | अगेती | 30 X 20 सेमी |
| | | मध्यम और पछेती | 45 X 30 सेमी |
| 4. | ब्रोकली | अगेती, मध्यम और पछेती | 60 X 45 सेमी |

## पौधशाला तैयार करना

प्रौधशाला के लिए 3 X 1 आकार की भूमि से 15 सेमी उठी हुई 10–12 क्यांरियां एक हेक्टेयर में रोपण के लिये उपयुक्त होती हैं प्रत्येक क्यारी में 10 किलो एफ.वाई. एम मृदा में मिलाया जाता है। इसके बाद 5 सेमी की दूरी पर लाईन बनाकर इनमें बीजों की बुवाई कर देते हैं। आवश्यकतानुसार प्रतिदिन सरे से सिंचाई करते है। क्यारियों को अत्यधिक धूप एवं ठण्ड से भी बचाना चाहिये। प्रत्येक वर्ष नर्सरी के लिये नयी जगह चुननी चाहिए, क्योंकि पुरानी जगह पर मृदा से होने वाली बीमारियों का खतरा बढ जाता है। क्यारी में आवश्यकतानुसार उपस्थित अतिरिक्त पौधों को उखाड़ दें। इस प्रकार 4–5 सप्ताह में पौध रोपण के लिए तैयार हो जाती है। पौध रोपण के लिये पौध लेने हेतु क्यारियों में 3–4 दिन पहले ही सिंचाई रोक देते है। तत्पतश्चात पौध क्यारियों से बाहर निकालते हैं तथा छायादार स्थान पर रखना चाहिए।

चार से पांच सप्ताह की पौध जिस पर 5–6 वास्तविक पत्तियां उपस्थित हों, रोपाई के लिये उपयुक्त होती हैं। रोपण के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिये तथा उसके बाद एक से दो दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिये ताकि पौधे पूर्ण रुप से खेत में स्थापित हो जायें। पौध रोपण उपयुक्त समय पर करना चाहिये क्योंकि देरी से रोपण करने पर पौधे की वानस्पतिक वृद्धि कम होती है, जिससे उपज तथा गुणवत्ता दोनो में कमी आती है। रोपाई के एक सप्ताह के अन्दर जो पौधे मर जाते हैं। उनके स्थान पर नयी पौध रोपित करना चाहिये।

## पोषक तत्व प्रबन्धन

मुख्यतः खेत की तैयारी के लिये खेत में 8 टन प्रति हेक्टेयर के हिसाब से एफ.वाई.एम. तथा 2–6 टन प्रति हेक्टेयर के हिसाब से कृमिखाद को दो बार (प्रथम बार पौध रोपण के समय तथा दूसरी बार 30 दिन बाद) मृदा में मिलायें। एक हजार लीटर पानी में मूंगफली खल तथा कृमिखाद सार को पंचगव्या के साथ मिलाकर पौध रोपण के 27, 35 तथा 42 दिनों बाद एक हेक्टेयर में छिड़काव करें।

इस उद्देश्य के लिये अगले दिन 0.5 किग्रा कृमिखाद को इसमें मिलाकर एक दिन और सड़ने के लिये छोड़ देना चाहिये। इसके बाद इसे छानकर पानी में 10 लीटर तक घोल बना लेना चाहिये। मूंगफली खल तथा कृमिखाद की एक हेक्टेयर में छिड़काव के लिये क्रमानुसार 100 किग्रा तथा 50 किग्रा की आवश्यकता होती है।

पंचगव्य को प्रत्येक बार जाता तैयार किया जाता है। इसके लिये 200 मिली. गौमूत्र, 200 मिली. दूध, 200 ग्राम घी, 1 रोबस्ट केले का गूदा, 500 ग्राम गाय के गोबर को मिलाकर मिश्रण बनाते हैं तथा इस मिश्रण को मलमल के कपड़े से छान लेते है। अब पानी मिलाकार मिश्रण की मात्रा 10 लीटर कर लेते है। खाद तथा पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा देने के लिये मृदा परीक्षण आवश्यक है। इनका दलहनी फसलों (मूंग/उड़द/चना) तथा हरी खाद फसलों (ढेंचा/सनई) के साथ फसल चक्रण अपनाना लाभदायक रहता है।

## सिंचाई

सिंचाई मुख्यतया मृदा के प्रकार तथा मौसम पर निर्भर करती है। गोभीवर्गीय सब्जियां उथली जड़ों युक्त होती है अतः फसल को हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है। अगेती फसल के लिये 5–7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिये तथा मध्य और पछेती फसलों के लिये 8–12 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिये। हैड, कर्ड तथा नॉब की सामान्य वृद्धि के लिये मृदा में उपयुक्त नमी होना आवश्यक है।

## खरपतवार नियंत्रण

खरपतवारों का नियंत्रण समय–समय पर निराई–गुड़ाई से करते हैं। फसल में पौध रोपण के बाद कम से कम दो बार (20 तथा 40 दिन पर) निराई गुड़ाई करनी चाहिये।

## समन्वित कीट प्रबन्धन

गोभीवर्गीय फसलों में समन्वित कीट प्रबंधन करने से उत्पादन में बढ़ोतरी की जा सकती है। गोभीवर्गीय फसलों में लगने वाले मुख्य कीट और उनका नियंत्रण इस प्रकार है :–

1. **डायमण्डब बैक मॉथ (*प्लूटिला जायलोस्टेरला*) :** इसके लिए पौध रोपण के 17 से 28 दिन के बीच में 4 प्रतिशत नीम सीड करनेल एक्सीट्रेक्ट (एनएसकेइ) का छिड़काव करना चाहिये। यह पॉथ के प्रति काफी प्रभावकारी पाया गया है। प्रत्येक 25 पंक्तियों के बाद सरसों की 2 पंक्तियां लगानी लाभप्रद होती है, क्योंकि सरसों 80–93 प्रतिशत मॉथ को आकर्षित कर लेती है।
2. **कैबेज बटरफ्लाई (*पाइस ब्रेसिकेई*) :** अण्डों तथा इल्ली/सुण्डी को यांत्रिक रुप से प्रथक करना प्रभावी होता है। 1 किग्रा/हे. बेसिलस थुरेन्जिएन्सिस का छिड़काव भी प्रभावी होता है।
3. **तम्बााकू इल्ली (*स्पो्डॉप्टेरा लिटुरा*):** इल्ली की शुरुआती अवस्था में 4 प्रतिशत एनएसकेइ का छिड़काव करना चाहिये। वानस्पितक कीटनाशी जैसे कि पाइरोथ्रिन, मीन इत्याादि का उपयोग करना चाहिये।
4. **एफिड/मोयला (*लिपाफिस इरिसिमी*) :** एफिड पौधों में पत्तियों/फूलों के रस को चूस लेते हैं तथा पत्तियों तथा वृद्धि बिन्दुओं को नष्ट कर देते है। यह पत्तियों, सिरों, पुष्पवृन्तों आदि पर अत्यधिक मात्रा में उपस्थित होता है। फूलगोभी को बचाने के लिये क्रुसीफर पौधों के अलावा दूसरे पौधे जैसे कि सूरजमुखी, टमाटर, गैंदा आदि को साथ उगाना चाहिये। यह पौधे एफिड के लिये ट्रेप क्राप की तरह कार्य करते है। बाद में इन पर एनएसकेइ के 4 प्रतिशत घोल का छिड़काव कर देना चाहिये।

## व्याधि प्रबन्धन

गोभीवर्गीय फसलों में समन्वित रोग प्रबंधन करने से उत्पादन में बढ़ोतरी की जा सकती है। गोभीवर्गीय फसलों में होने वाली मुख्य बीमारियां और उनका नियंत्रण इस प्रकार है :–

1. **आद्रगलन (*पाइथियम स्पी:., एफनीडर्मेटम स्पी., राइजोक्टोनिया सोलानी*) :** रोकथाम के लिए अच्छे जल निकास युक्त नर्सरी क्यारियां बनानी चाहिये। इसके लिये उठी हुई क्यारियां उपयुक्त होती हैं। सड़ा हुआ खाद, पंक्तियों के बीच में पर्याप्त दूरी, नवोदि्भदों में रोग कम करने में सहायक है। ट्राईकोडर्मा से बीजोपचार करना चाहिये। 10 से 15 दिनों के अन्त राल पर 0.6 प्रतिशत बोरडेक्स मिश्रण से मृदा ड्रेंच करनी चाहिये।
2. **ब्लेक रोट (*जेन्थेमोनास कम्पेस्ट्रिस पीवी कम्पेस्ट्रिस*):** जेन्थेमोनास पौधों में या पत्तियों के सिरों से या कटे फटे हिस्सो से प्रवेश करता है। सर्वप्रथम पत्तियों के सिरे पीले पड़ जाते है फिर भूरे रंग में परिवर्तित हो जाते है साथ ही शिरायें काली पड़ जाती हैं। संक्रमण बाहर से अंदर की दिशा में होता है तथा वी आकार के निशान पत्तियों के किनारे पर बन जाते हैं। संक्रमण पानी से बूंदों के साथ फैलता है। वर्षा होने पर तेजी से फैलता है। बीजों को 50 डिग्री

सें. पर 30 मिनट के लिये गर्म पानी में उपचारित करना चाहिये। 3 साल तक नॉन–हॉस्ट फसल के साथ फसल–चक्र अपनाना चाहिये। बीमारी ग्रसित पादप भागों को काटकर अलग कर देना चाहिये।

3. **अल्टरनेरिया काला धब्बा तथा डाउनीमिडयू (*अल्टरनेरिया ब्रेसिकेई और पेरेनोस्पोस पेरासिटिका*)**: आरंभ में छोटे गहरे रंग के धब्बे पत्ती की सतह पर बनते है, बाद में छल्लों के रुप में परिवर्तित हो जाते हैं। जब यह धब्बे सूख जाते हैं तब इनके मध्य में छेद हो जाता है जिसे शॉट होल के नाम से जानते है। उच्च आद्रता, ठण्डा वातावरण तथा वर्षा इन धब्बों पर पत्ती के निचली सतह पर सफेद रंग की कपासीय वृद्धि को बढ़ावा देते हैं। बीज की बुवाई से पहले 50 डिग्री सें. पर 30 मिनट के लिये गर्म पानी में उपचारित करना चाहिये। इस बीमारी के प्रकोप को कम करने के लिये पौधे से पौधे के बीच की दूरी 60 X 50 सेमी. रखनी चाहिये तथा निचली पत्तियों को हटा देना चाहिये। *ट्राइकोडर्मा* विरिडी तथा *स्येडोमोनास फ्लोरेसेन्स* की 4–5 ग्राम प्रति किग्रा मात्रा से बीजापचार करना चाहिये, तथा नर्सरी की क्यारियों का नीम खल से उपचार बीज अंकुरण को बढाता है।

4. **क्लब रुट (*प्लाज्कोडिमोफोरा ब्रेसिकेई*)** : कवक की वृद्धि होने पर यह जडों की आकृति परिवर्तित कर देती है तथा उन्हें नष्ट कर देती है। यह कवक जडों में सूजन तथा रार उत्पन्न् करती है। जिससे इन पर दूसरे सूक्ष्मजीवों का संक्रमण आसान हो जाता है। यह बीमारी अम्लीय मृदा में अधिक होती है। अतः उपचार के लिए चूना उपयुक्त रहता है जो मृदा की पीएच को 7.2 लाने में सहायक होता है।

## तुडाई तथा उपज

पत्तागोभी एवं फूलगोभी की तुड़ाई मुलायम एवं पूर्ण आकार के होने के बाद करनी चाहिये। गांठगोभी में गांठ मध्यम आकार की होने तथा मुलायम व हरी दिखाई देने पर तुडाई करनी। ब्रोकली की तुडाई कलिकाओं के खिलने से पूर्व करनी चाहिए।

फूलगोभी की अगेती किस्मों की उपज 100 से 150 क्विंटल/हे. तथा मध्यम और पछेती किस्मों की उपज 150 से 300 क्विंटल/हे. होती है। पत्तोगोभी की अगेती किस्मों की उपज 200 से 300 क्विंटल/हे. तथा मध्यम और पछेती किस्मों में 300 से 500 क्विंटल/हे. उपज होती है। गांठगोभी की अगेती फसल की उपज 125 से 175 क्विंटल/हे. तथा पछेती की 200 से 250 क्विंटल/हे. होती है। ब्रोकली की उपज 100 से 150 क्विंटल/हे. होती है।

**हमारी राष्ट्रभाषा की गंगा में देशी और विदेशी**
**सभी शब्द मिलकर एक हो जाएंगे।**
**राष्ट्रभाषा के प्रचार को मैं राष्ट्रीयता का अंग मानता हूँ।**

**- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद**
**भारत के प्रथम पूर्व राष्ट्रपति**

# वर्षा ऋतु में भिण्डी की खेती

**श्रवण कुमार यादव**
राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर

**भिण्डी (*एबेलमॉस्कस एस्कुलुटस*)** भिण्डी एक महत्वपूर्ण सब्जी है। जिसे ओकरा या लेडी फिंगर नाम से जाना जाता है। भिण्डी के फली को सब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसकी फली में काबोहाइड्रेट, प्रोटीन, केल्शियम, आयोडीन तथा अन्य खनिज लवण पाये जाते है। इसके अलावा विटामीन–ए तथा सी प्रचूर मात्रा में मिलते है। भिण्डी के पौधों की जड़ों व तनों का प्रयोग गुड़ व खाड़ को साफ करने में किया जाता है। जबकि फलों एवं रेशेदार डंठलो का उपयोग कागज व कपड़ा उद्योग में भी किया जाता है। इसकी मुख्य खेती राजस्थान, म.प्र. व छत्तीसगढ़ में की जाती है।

**जलवायु:** भिण्डी उगाने के लिए बरसात के मौसम में लम्बी अवधि का गर्म व नम जलवायु श्रेष्ठ मानी जाती है। बीज के अच्छे अंकुरण के लिए 18–25 डिग्री सेल्सियस तापमान आवश्यक होता है।

**खेती की तैयारी:–** भिण्डी की फसल के लिये दोमट मिट्टी जिसमें खाद एवं कार्बानिक तत्वों की भरपुर मात्रा हो तथा पानी का निकास अच्छा होना चाहिये। खेती के लिए खेत में 2 से 3 बार जुताई कर भूरभूरा करके और पाटा चलाकर समतल करना चाहिए।

**बुवाई का समय:–** भिण्डी की मौसमी फसल लगाकर किसान लाभ कमा सकता है। किसान वर्षा या खरीफ की खेती जुन से जुलाई तक बो सकता है।

## उपयुक्त भिण्डी की किस्में

**पुसा सावनी:–** यह एक वर्षा ऋतु में लम्बे फल वाली किस्म है।

**वर्षा उपहार:–** पीतशीरा (माजेक) विषाणु रोग प्रतिरोधी 75 दिन बाद प्रथम तुडाई 18–20 से.मी. लम्बाई पॉच धारीयॉं औसत उपज 9 से 10 टन प्रति हेक्टेयर

**पुसा मखमली:–** इसके फल नुकीले तथा हल्के रंग के होते है। ग्रीष्म व बरसात में उत्तरी भारत में अच्छी पैदावार होती है।

**पुसा ए–4:–** यह एफिड तथा जैसिड़ के प्रति सहनशील है यह पीतरोग येलो वेन मोजैक विषाणु रोधी है फल मध्यम आकार के गहरे हरे रंग के, कम लस लसे, 12 से 15 से.मी. लंबे तथा आकर्षक होते है। बौनें के 15 दिन बाद फल आना शुरू हो जाते है तथा पहली तुड़ाई 45 दिनों बाद शुरू हो जाती है।

**खाद एवं उर्वरक:–** खेत तैयार करते समय अच्छी सड़ी हुई गौबर की खाद 120 से 200 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलावे। नत्रजन 30 कि.ग्रा., 30 कि.ग्रा. फास्फोरस व 40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देवे। 30 कि.ग्रा. नत्रजन बुवाई के एक माह बाद खड़ी फसल में देवें।

**बीज:–** खरीफ (वर्षा) के मौसम में 10 से 12 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। तथा संकर किस्में के लिए 4–5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से पर्याप्त है।

**बुवाई:–** बरसात के मौसम में बुवाई हल की सहायता से 60 सेमी. कतार से कतार की बीच की दुरी तथा 20 सेमी. पौधे से पौधे के बीच की दुरी रखे तथा बीज की गहराई लगभग 4.5 सेमी. होना चाहियें।

**सिंचाई एवं निराई–गुड़ाई:–** वर्षा ऋतु में सही समय पर बरसात होती है। तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। क्यारियों में निराई, गुडाई नियमित करनी चाहिये, जिससे कोई खरपतवार नहीं पनपे।

## प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

### हरा तेला सफेद मक्खी व मोयला

ये पत्तियों एवं कोमल शाखाओं से रस चूसकर पौधों को कमजोर कर देते है। तथा हरे भाग से छिछले गडड़ो का रूप ले लेते है। और कटे हुये से हो जाते है। इससे उत्पादन व गुणवत्ता पर विपरित प्रभाव पड़ता है। और यह विषाणु जनित रोग फैलाने का काम भी करते है।

नियंत्रण कोन्फीडोर 250एसएल (2.5 मि.ली. प्रति 1 लीटर पानी की दर से) रोपाई के 25 दिन तथा आवश्यकतानुसार 15 दिन के अन्तराल पर उपयोग करें।

**फली छेदन:–** यह कीड़ा बहुत हानि पहुँचाता है। ये फली में छेद करके अन्दर घुस जाता है। तना व बीज खाकर नुकसान पहुँचाता है।

कीट से बचाव के लिए शीघ्र ही फेनवेल्रेट 20 ई.सी. या साइपरमेथिन 25 ई.सी. आधा मिली लीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

**मूलग्रन्थिः**— यह पौधों की जड़ो में गांठे बनता है। जिससे पौधा पीला पड़ जाता है। और पैदावार कम हो जाती है। इसके बचाव के लिए 25 कि. ग्रा. कार्बोफ्युरान प्रति हेक्टेयर भूमि में मिलावें।

## प्रमुख रोग व नियत्रंणः—

**चूर्णी फफूंद (पाउडरी मिल्डयू)**ः— इस रोग के आक्रमण से पत्तियों व तने पर सफेद पाउडर के जैसे धब्बे दिखाई देते है। बाद में अधिक प्रकोप होने पर पौधा पीला पड़ जाता है।

बचाव के लिए केराथेन एल सी—1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से 10 से 12 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

**जड़ गलनः**— इस रोग से पौधे की जड़ गल जाती है। बचाव के लिए टोप्सिन एम 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचार कर बुवाई करनी चाहिये।

**पीतशिरा मोजेकः**— इस रोग के आक्रमण से पौधे की पत्तिया व फल पीले पड़ जोत है। तथा पत्तियॉ चितकबरी होकर प्यालेनुमा संरचना की हो जाती है।

बचाव के लिए विषाणु रोग प्रतिरोधी किस्में (वर्षा उपहार) की बुवाई करनी चाहिये।

**तुड़ाई व उपजः**— भिण्डी की फली कच्ची अवस्था में फुल खिलने से 6—8 दिन बाद 3 दिन के अन्तराल पर तोड़ना चाहिये तथा वर्षा के मौसम में 140 से 180 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से उपज होती है।

# शुष्क क्षेत्रों में बागवानी का सतत विकास एवं उसका महत्व

**शिवराम मीना, रूपचंद बलाई एवं प्रेम प्रकाश पारीक**
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

देश में बढ़ती जनसंख्या, गरीबी, निरक्षता, अर्ध व असमान विकास, व्यापक औद्योगिकरण, कृषि रूपान्तरण, संसाधनों का विवकेहीन अन्ध–धुन्ध उपयोग आदि ऐसे महत्वपूर्ण कारक जिनके कारण प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल, जमीन, जंगलों वन्य जीवों का अत्यधिक शोषण हो रहा है परन्तु कोई स्थाई विकास नहीं हो पाया। आज भी हमारे देश में करीब 36 करोड़ जनसंख्या ऐसी है जिसको भरपूर दो वक्त का भोजन भी समय पर नसीब नहीं होता। हमारे देश में फल व सब्जियों की प्रति व्यक्ति उपयोग भी और देशों की तुलना में बहुत कम तथा मानक देय की दृष्टि में भी हमारे देश का प्रति व्यक्ति उपयोग बहुत ही नीचा है। फल व सब्जियों का उत्पादन, हमारे उत्पादन लक्ष्य से अभी कोसों दूर है। हमारे लक्ष्य को पूरा करने में शुष्क बागवानी एक वरदान सिद्ध हो सकती है। इसके स्थाई विकास और महत्व को निम्नलिखित बिन्दुओं की सहायता से समझा जा सकता है :–

1. **जैव–विविधता संरक्षण** : जैव–विविधता कृषि एवं बागवानी के स्थाई विकास का एक मुख्य साधन है। बागवानी फसलों के अधिक गुणकारी उत्पाद एवं अधिक उत्पादन में स्थाई वृद्धि का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए बागवानी से सम्बन्धित जैव–विविधता का संरक्षण व उसका न्यासंगत उपयोग करना अतिआवश्यक है। बागवानी फसलों से सम्बन्धित जितनी अधिक जैव–विविधता सुरक्षित रहेगी, उतनी ही अधिक शुष्क बागवानी का स्थाई विकास होगा। इस जैव–विविधता का उपयोग बागवानी की उन्नत फसल व उनकी प्रजातियां बनाने में किया जा सकेगा। इस प्रकार, बागवानी फसल प्रजातियों की विविधता से स्थानीय प्रजातियों के साथ पादप प्रजनन के संयुक्त प्रयासों से बागवानी की उन्नत फसलों/प्रजातियों का विकास कर, पैदावार की स्थिरता बढ़ाई जा सकेगी।

2. **सूखा प्रतिरोधी फसलें व प्रजातियां** : शुष्क क्षेत्रों के लिए सूखा व अकाल बहुत ही जाने–पहचाने शब्द है। यहां के जन–जीवन में सूखा व अकाल एक दूसरे के पूरक रहे हैं। वहां पर पानी व अन्य प्राकृतिक संसाधनों का अभाव है। ऐसी विपरित परिस्थितियों में कोई भी फसल या बागवानी की फसल उगान बहुत टेढ़ी खीर है। इन क्षेत्रों में बागवानी को सफल बनाने के लिए, सबसे पहले सुखा प्रतिरोधी बागवानी की फसलों व उनकी प्रजातियां का विकास करना अतिआवश्यक है जिससे कि वे सूखे व अकाल की स्थिति में भी सीमित पानी के साथ आसानी से उगाई जा सके। इस दिशा में काफी अनुसंधान करने तथा किसानों में आत्मविश्वास पैदा करने की विशेष आवश्यकता है।

3. **समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन** : अधिकतर शुष्क क्षेत्रों की मिट्टियां बलूई व कमजोर किस्म की होती है। इनकी उर्वरा शक्ति बहुत कमजोर होती है। तेज हवाओं के कारण इन मिट्टियों का अपरदन होता रहता है। प्राकृतिक रूप से भी इन मिट्टियों में पोषक तत्व बहुत कम होते है तथा मृदा क्षरण के कारण ये और भी कम हो जाते है। इन मिट्टियों में कार्बनिक पदार्थो की मात्रा भी नगन्य होती है। जिसके कारण इनमें पानी ग्रहन करने की क्षमता भी बहुत कम होती है। इन दशाओं में शुष्क क्षेत्रों में बागवानी का स्थाई विकास करना बड़ा ही कठीन कार्य है। शुष्क क्षेत्रों में बागवानी के स्थाई विकास के लिए वहां की मिट्टी की उर्वरा शक्ति एवं उनकी भौतिक दशा में सुधार करना होगा। इस कार्य को पूरा करने का एक मात्र उपाय है 'समन्वित पोषक तत्व प्रबन्ध' समन्वित पोषक तत्व प्रबन्ध ही एक ऐसी पद्धति है जो पर्यावरण ीय व परिस्थितिकीय कारकों को सुरक्षित रखती हुई, भूमि की उर्वरा शक्ति व फसलोत्पादन को पर्यापत मात्रा तक बढ़ा सकती है। इसमें मिट्टी के कणों के बीच पोषक तत्वों के चक्र, उर्वरकों का संतुलित प्रयोग कार्बनिक तत्वों का पुनः प्रयोग, कार्बनिक खाद व रसायनिक उर्वरकों का संयुक्त संतुलित प्रयोग, जैविक नाईट्रोजन संग्रह का दोहन और फसल प्रबन्ध प्रणानी के प्रति व्यापक दृष्टिकोण, आदि शामिल है।

प्रभावशाली और स्थाई बागवानी फसल उत्पादन के लिए उपयुक्त फसल एवं किस्म का चयन और भूमि तथा जल का उचित प्रबंध भी करना अतिआवश्यक है। प्रबंध पद्धतियों के अलावा, रसायनिक उर्वरक, खेत में तैयार खाद, कम्पोस्ट, फसलों के अवशेष, हरी खाद, हरी पत्तियों से निर्मित, खाद, राइजोबियम, नीले–'हरे शैवाल एवं ऐजोला, दलहनी फसलों द्वारा भूमि में जैविक नाईट्रोजन संग्रहण आदि समन्वित पोषक तत्व प्रबन्ध के प्रमुख घटक है।

4. **समन्वित कीट–व्याधि प्रबन्धन** : शुष्क क्षेत्रों में फसलों पर कीट व बीमारियों प्रकोप बहुत ज्यादा होता है। बागवानी की फसलों पर भी कीट व व्याधियों का आक्रमण बहुत ज्यादा होता है जो स्थाई शुष्क बागवानी विकास की एक प्रमुख समस्या है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन के विशेषज्ञों के दल (1966–72) के अनुसार समन्वित कीट प्रबंध एक ऐसी प्रणाली है जिसमें कीट/कीटाणु की प्रजातियों की संख्या में गति विज्ञान और उनसे सम्बद्ध वातावरण के संदर्भ में सभी उपयुक्त तकनीकीयों और पद्धतियों का उपयोग यथासंभव सुसंगत तरीके से किया जाता है और कीटाणुओं की संख्या इतनी कम रखी जाती है कि वे आर्थिक नुकसान की सीमा को पार नहीं कर पाये।

समन्वित कीट–व्याधि प्रबन्ध के प्रमुख घटक हैं कीट व व्याधि प्रतिरोधी फसलें व उनकी किस्में उगाना, फसलों की अगेती/पछेती रोपाई/बुवाई, खेती की ग्रीष्मकालीन जुताई, फेरोमोन फंदो का प्रयोग, फसलों के हानिकारक कीट–कीटाणुओं पर उनके परजीवियों का प्रयोग, परभक्षियों व रोगजनकों का प्रयोग, संगरोधन (क्वारेन्टाइन) कीट संग्रह करके विनाश, कीटनाशकों, कीट आकर्षकों, विकर्षकों, पुल्लिंग बन्ध्यीकरण पद्धतियां और उन्मूलन कार्यक्रमों का युक्ति संगत प्रयोग आदि। उपरोक्त विधियों/पद्धतियों का उपयोग करके, शुष्क बागवानी की फसलों में लगने वाले कीट–व्याधियों का नियन्त्रण आसानी से किया जा सकता है और शुष्क बागवानी के स्थाई विकास को सुदृढ़ किया जा सकता है।

5. **स्थाई जल प्रबंध** : आज के परिपेक्ष में 'पानी' संसार का एक सबसे मूल्यवान पदार्थ होता जा रहा है। शुद्ध पानी के घटते हुए संसाधन को लेकर भारत ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण संसार चिन्ता में है पानी जैसे मूल्यवान पदार्थ का मूल्य शुष्क क्षेत्रों में तो और भी बढ़ जाता है। शुष्क क्षेत्रों में फसल उत्पादन में सीमित और मूल्यवान पानी का सुसंगत उपयोग व न्ययोचित प्रबन्ध होना बहुत जरूरी है।

शुष्क बागवानी के स्थाई विकास के लिए शुष्क क्षेत्रों के सतही एवं भूमिगत जल संसाधनों के स्थाई उपयोग के लिए प्रभावी ढंग से जल की बचत, जल के बंटवारे में समानता, जल वितरण और उसके उपयोग में सक्षमता महत्वपूर्ण है। नदी, नालों, वर्षा, भूमि व मलजल (शहरों के गन्दे नालों का पानी) के संयोजित एवं समुचित इस्तेमाल के लिए समन्वित नीति बनानी चाहिए। शुष्क क्षेत्रों में बागवानी के विकास के लिए स्थाई जल प्रबन्ध के महत्वूर्ण घटक इस प्रकार है, 1. जल संसाधनों का न्यायसंगत उपयोग 2. सिंचाई की आधुनिक व पानी की बचत करने वाली विधि, बाल्टी सिंचाई आदि का उपयोग करके पानी की बचत रनी चाहिए 3. कम पानी चाहने वाली फसलों व प्रजातियों का चुनाव करें 4. भूमि की सतह से वाष्पीकरण द्वारा पानी को संरक्षित करने के लिए मृत या जीवित पलवारी पदार्थ का प्रयोग करें 5. सिंचाई जल की अनुमापी आधार पर आपूर्ति करे ताकी किसान उसको उपयोग मितव्ययी ढंग से करें 6. कमान क्षेत्रों में जल संरक्षण की विधियों व उपायों को अपनाएं 7. भूमीगत जल चूंकि एक दुर्लभ प्राकृतिक संसाधन है अतः निजी तौर पर लगाए जाने वाले नलकूपों के अन्तर, गहराई और निकाले जाने वाले पानी की मात्रा पर कानून बनाने की आवश्यकता है। 8. भूमिगत जल का उचित प्रबन्ध करने के लिए दूर संवेदन तकनीकीयें का इस्तेमाल 9. भूमिगत जल के दोहन और उसके समुचित पुनः प्रयोग की प्रौद्योगिकी विकसित करनी चाहिए 10. नहरों व भूमिगत जल संसाधनों के विकास और विधुतीकरण के लिए समुचित धन आंवटन करना आवश्यक है ताकी सिंचाई क्षमताओं का पूर्ण उपयोग किया जा सके 11. पर्यावरण के अनुकूल कम लागत वाले मध्यम आकार के जल ग्रहण बांध, तालाब, पोखर आदि का निर्माण करवाने चाहिए। जल प्रबन्धन के उपरोक्त कार्य शुष्क बागवानी के स्थाई विकास में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है।

6. **मृदा संरक्षरण** : शुष्क क्षेत्रों की मिट्टी बहुत कमजोर व बलुई प्रकृकति की होती है। इन क्षेत्रों में वनस्पति बहुत कम होती है। वहां पर गर्मियों में बहुत तेज गर्म हवायें चलती है जिससे मिट्टी का भारी अपरदन होता है। जिससे उपजाऊ मिट्टी एक स्थान से दूसरे स्थानों पर उड़कर चली जाती है। मिट्टी स्थिर नहीं होने के कारण उस पर फसल उगाना बड़ा ही मुश्किल है। इसलिए शुष्क क्षेत्रों में बागवानी के स्थिर विकास के लिए इस मिट्टी के अपरदन को

रोकने के उपाय करे होंगे। इन उपायों में कुछ है जैसे हवाओं की गति को कम करने के लिए वायु प्रतिरोधी पेड़ लगाये, मिट्टी को उघाड़ी न छोडे और उस पर जीवीत या मृत पदार्थो की पलवार बिछावे, भूमि पर छाने वाली फसलों को अधिक उगाये, मिट्टी को गिली रखने की कोशिश करें, जल ग्रहण बांधों का निर्माण, बागवानी के फलदार पौधों को उगाये। फलीदार व बेलदार सब्जियों व अन्य फसलों को उगाये ताकि जमीन ढकी रहे तथा भूमि में कार्बनिक पदार्थो की मात्रा बढ़े। भूमि में अधिक से अधिक कार्बनिक पदार्थ जैसे गोबर की खाद, हरी खाद, कम्पोस्ट, फसलों के बेकार पड़े अवशेष, आदि मिलावें ताकि मिट्टी उड़े भी नहीं और इसकी उर्वरा शक्ति तथा अधिग्रहण क्षमता भी बढ़ जाये। बुलूई मिट्टी में चिकनी–काली मिट्टी मिलाने से भी मिट्टी का वायु अपरदन को कम किया जा सकता है। भूमि की तैयारी करते समय बहुत ज्यादा जुताई न करें। सिंचाई करते समय पानी को खालों में खुल्ला नहीं छोड़े और अधिकतर फव्वारा व बूंद–बूंद सिंचाई विधि का प्रयोग करें। ये उपरोक्त सभी क्रियायें शुष्क बागवानी के स्थाई विकास में सहायक सिद्ध होंगी।

7. **बागवानी संग पशुपालन** : राजस्थान में, विशेषकर राजस्थान के पश्चिमी शुष्क भागों में केवल कृषि या बागवानी को ही भोजन व आय का आधार बनाना व्यावहारिक नहीं होता है, क्योंकि वहां पर सूखे व अकाल की स्थिति हमेशा ही बनी रहती है। कई बार तो दो–तीन सालों तक वर्षा की एक बूंद भी नहीं गिरती जिसके कारण कोई भी फसल या पौधा लगाना तो दूर, दूर–दराज के क्षेत्रों में पीने का पानी भी नहीं मिलता। ऐसी अवस्था में कृषि या बागवानी के साथ–साथ पशुपालन भी करना चाहिए ताकि विपरीत परिस्थितियों में भी कम से कम पशुपालन से कुछ रोजगार व आय हो सकती है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि व पशुपालन की निर्भरता समस्त भारत में महत्व रखती है परन्तु राजस्थान के सन्दर्भ में वह और भी ज्यादा प्रबल व प्रभावी मानी जाती है। कृषि व बागवानी से पशुओं को चारा मिल जाता है और बदले कृषि/बागवानी को पशुधन से गोबर की खाद, कम्पोस्ट, कृषि भार वाहक बैल, ऊंट, माणस, (भैंस) खच्चर, गद्या आदि मिल जाते है। किसान को कृषि/बागवानी उत्पादनों के साथ–साथ, पशुपालन से दूध, घी, दही, ऊन, चमड़ा, मांस आदि मिल सकता है जिससे किसान को अतिरिक्त आय और रोजगार मिल सकता है। इसलिए शुष्क क्षेत्रों में किसानों के स्थाई विकास के लिए शुष्क बागवानी के साथ–साथ पशुपालन को भी अपना चाहिए ताकी सूखे व अकाल की स्थिति में भी किसान परिवार को रोजगार मिलता रहे और कुछ आय भी होती रहे।

8. **मूल्य संवर्धन तकनीकियां** : बागवानी की फसलों के उत्पाद यथा : फल व सब्जियां ऐसे उत्पाद होते हैं जिनका लम्बे समय तक भण्डारण नहीं किया जा सकता तथा लम्बे समय तक सुरक्षित व खाने योग्य नहीं रह सकते। उनके अधिक उत्पादन और कम खपत के कारण कई बार तो यह स्थिति आ जाती है कि बागवानी के कुछ उत्पादों को तो बाजारों में कोई लेता ही नहीं और लेता भी है तो उनकी दरें/भाव इतने कम होते हैं कि किसान को उनके उत्पादन की लागत भी नहीं मिलती। फलनः किसान उनका उत्पादन ही बन्द कर देते हैं। ऐसी स्थिति में बागवानी के स्थाई विकास को बहुत बडा़ धक्का लगता है। इन समस्याओं के निदान का एक ही तरीका है 'बागवानी उत्पादों का मूल्य संवर्धन'। बागवानी के उत्पादों का मूल्य संवर्धन करके, उन्हें अधिक लम्बे समय तक भण्डारणों मे सुरक्षित रखा जा सकता है। अब आवश्यकता इस बात कि है कि शुष्क बागवानी के उत्पादों का 'मूल्य संवर्धन' करने की ऐसी तकनीकियों/विधियों का विकास और प्रसार किया जाये जो किसानों/ मूल्य संवर्धनकर्ताओं, उपभोक्ताओं, पर्यावरण व परिस्थितिकिये दृष्टि से व्यवहारिक व स्वीकार्य हो और जो उत्पादों को अधिक पौष्टिक बनायें, किसानों/उत्पादकों की आय को बढ़ावे। शुष्क बागवानी उत्पादों की ये 'मूल्य संवर्धन' की तकनीकियां/प्रौद्योगिकी निश्चय ही, शुष्क बागवानी के स्थाई विकास में मददगार सिद्ध होंगी।

9. **पौध प्रवर्धन की उन्नत तकनीक** : संस्थान ने गर्म–शुष्क कठिन वातावरण के अनुरूप सुविधाजनक, विशेषकर फलवृक्षों के पौध प्रवर्धन तथा पौधशाला प्रबन्धन की तकनीकिया विकसित की है जो किसानों तक पहुँचाई जा रही है। इनमें वानस्पतिक विधि, कलिकायन, ग्राफ्टिंग, गूटी, कलम तथा ऊतक संवर्धन विधियाँ प्रमुख है। उदाहरण के लिए बेर, आंवला, बेलपत्र, खेजड़ी, शहतूत, लसोडा आदि के पौधे तैयार करने के लिए पैच, टी या आई कलिकायन विधियों को अपनाकर उन्नत पौधे तैयार करने की सलाह दी जाती है। इस तरह खजूर में अधोभूस्तारी या ऊतक संर्वधन विधि से पौधे तैयार करने की तकनीक विकसित की जा रही है जो शुष्क क्षेत्र के किसानों के लिए खजूर उत्पादन में चमत्कारिक परिणाम देंगी।

बेलपत्र, आंवला, खेजड़ी, केर, शहतूत तथा अनार में उच्च कोटि पौधे प्राप्त करने के लिए ऊतक संवर्धन एवं हरितगृह तकनीक विकसित की जा चुकी हैं एवं भविष्य में सृजनशील किसान, सरकारी एवं निजी संस्थाएं व्यापारिक स्तर पर फलवृक्षों की कम समय व मेहनत से उन्नत किस्मों के पौधे कम समय व मेहनत में तैयार कर सकेंगे।

10. **संरक्षित बागवानी एवं हरितगृह तकनीकः** केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर एक पहला संस्थान है जिसने गर्म–शुष्क क्षेत्रो में शुष्क बागवानी को बढ़ावा देने तथा संरक्षित बागवानी से सम्बन्धित एक विशेष प्रकार के हरितग्रह स्थापित किये हैं। इन हरितगृहों को शुष्क क्षेत्रों के गरीब किसानों की आवश्यकताओं, खर्चो तथा स्थान विशेष की समस्याओं को ध्यान में रखकर बनाया जा रहा है ताकि प्रत्येक किसान छोटे स्तर पर कम लागत में अच्छा हरितगृह बनाकर विपरीत परिस्थितियों में भी बागवानी फसल उगाकर अच्छा लाभ कमा सके। साधारण वानस्पतिक विधि से जहां फलवृक्षों के पौधों को तैयार करने में 6–12 महिने लग जाते हैं वहीं हरितगृह तकनीक को अपनाकर 1–2 महिने और किसी भी मौसम में मन चाहे उन्नत किस्म के पौधे तैयार किये जा सकते हैं। विशेष प्रकार के हरितगृहों की सहायता से संरक्षित बागवानी एवं सब्जी उत्पादन की तकनीक विकसित की गयी है। इस तकनीक से विपरीत परिस्थितियों में फलवृक्षों की रक्षा की जा सकती है और बिना ऋतु के भी मन चाही सब्जियों का उत्पादन किया जा सकता हैं। संस्थान ने कम लागत एवं शून्य ऊर्जा आधारित शीतल कक्षों के प्रतिमान भी विकसित किये हैं। किसान इन्हें अपने स्थानीय परिवेश में उपलब्ध सामग्रियों के द्वारा ही बना सकता है। परन्तु किसान इन तकनीकियों के बारे में जागरूक होकर रूची लें तभी यह संभव होगा।

11. **पौधशाला प्रबन्धन की उच्च तकनीक** : संस्थान ने परिक्षण एवं अनुसंधान कार्यों के आधार पर पौधशाला प्रबन्धन एवं उसकी देख–रेख की उच्च तकनीक विकसित की है जो शुष्क क्षेत्र के किसानों के लिए एक चमत्कारिक पहलू का कार्य करती है। संस्थान उच्च तकनीक पौधशाला तकनीक पर संस्थान किसानों को समय–समय पर प्रशिक्षण देता है तथा उनका अवलोकन भी करवाता है। उच्च तकनीक पौधशालाओं में मौसम, तापक्रम, हवा, वर्षा, नमी आदि का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इन पौधशालाओं में कृत्रिम वातावरण बनाने की तकनीकिया विकसित की हैं जो पौधों पर बाह्यय वातावरण का कोई प्रभाव नहीं होता हैं और किसी भी मौसम में कोई भी पौधा तैयार किया जा सकता है। उच्च तकनीक पौधशाला प्रबन्धन के लिए स्थान एवं भूमि, बीज एवं पौधरोपण सामग्री का चुनाव, बोने की तकनीक, सिंचाई व पौधसंरक्षण तकनीक, पौध के स्थान पर बदलाव तथा जड़ तंत्र की कटाई–छंटाई की तकनीक, हवा व ऊर्जा देने की तकनीक, खाद एवं उर्वरक देने की तकनीक, कलिकायन या पैबन्ध करने, आदि की उच्च कोटि की तकनीक विकसित की है जो शुष्क क्षेत्रों में बागवानी विकास में आधारशिला का कार्य कर रही हैं। किसानों में यह तकनीकियां, धीरे–धीरे लोकप्रिय हो रही है जो शुष्क बागवानी विकास को बढ़ाने में सहायक है। शुष्क क्षेत्र के किसान उच्च तकनीक पौधशाला की इन तकनीकियों को व्यावसायिक रूप में अपनाकर अच्छा धन लाभ कमाने के साथ–साथ शुष्क क्षेत्रों को बागवानी फसलों से हरा–भरा बनाने में काफी मदद कर सकता है।

## निष्कर्ष

शुष्क बागवानी के स्थाई के विकास के लिए आनुवंशिक संसाधनों के संग्रह, संरक्षण व मूल्यांकन व प्रोत्साहन पर विशेष कार्यक्रम शुरू करने की सख्त आवश्यकता है। शुष्क बागवानी के विकास व उत्पादन क्षमता में स्थायित्व लाने का लक्ष्य पूरा करने में जल का वैज्ञानिक प्रबन्ध, विकृत भूमि का बहतर उपयोग, मृदा संरक्षण, जैव विविधता संरक्षरण, फसलों का विविधीकरण, उचित फसल/प्रजातियों का विकास व चुनाव, समन्वित पोषक तत्व प्रबन्ध, समन्वित कीट–व्याधि प्रबन्ध, उत्पाद मूल्य संवर्धन की तकनीकियों का विकास करना अति आवश्यक है। नदी, तालाब, नहर, नलकूपों व कुओं के पानी का विवेकपूर्ण उपयोग, बागवानी के साथ पशुपालन, बागवनी पर आधारित कृषि वानिकी, समाजिक वानिकी, शस्य वानिकी, विशिष्ट वानिकी आदि का विकास, शुष्क बागवानी के स्थाई विकास के लिए बहुत ही जरूरी है। संयुक्त अनुसंधान, तकनीकी हस्तानान्तरण कार्यक्रम, किसान प्रशिक्षण, महिला प्रशिक्षण, अनुसंधान कार्यक्रमों में किसानों की भागीदारी आदि शुष्क बागवानी के स्थाई विकास के लिए अति आवश्यक है।

# बारानी क्षेत्रों में वैज्ञानिक विधि से सफल बाग लगायें

[1]चेतक बिश्नोई, [2]जगन सिंह गोरा, [2]रमेश कुमार एवं [2]रूपचंद बलाई
[1]पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केंद्र, मुक्तसर, पंजाब
[2]भाकृअनुप.–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

आज के युग में किसानों की आय बढ़ाने में पारम्परिक खेती के साथ साथ आधुनिक बागवानी खेती का महत्वपूर्ण योगदान है एवं कृषि में जोखिम कम करने के लिए फसल में विविधीकरण अपनाने की आवश्यकता है। विविधीकरण के क्रम में खेती के साथ–साथ फल वृक्षों को लगाना लाभदायक माना गया है, विशेषकर बारानी क्षत्रों में जहाँ पानी की कमी और मिट्टी कम उपजाऊ होती है। फल वृक्ष गहरी जड़ों वाले होते हैं। इसके कारण विषम परिस्थितियों, जैसे–सूखा, अत्तिवृष्टि, असमय वृष्टि आदि तीनों दशाओं में भी ये कुछ न कुछ उपज देकर जोखिम कम कर देते हैं। ये फल वृक्ष कम से कम 15–25 वर्षो तक अच्छी फसल देते हैं।

इसलिए नये बाग लगाने से पहले कुछ महत्वपूर्ण बातों को ध्यान रखना बहुत जरूरी है क्योंकि नये बाग लगाने का मतलब 15–25 वर्षो की भावी योजना बनाना है।

## मृदा–जलवायु

बाग लगाने से पूर्व हमेशा पहले मिट्टी की जांच करवानी चाहिए और मिट्टी की गहराई कम से कम 1–1.5 मीटर और मृदा की संरचना समुचित होनी चाहिए। मृदा का पी–एच मान 6.5–7.5 व मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा 0.4 प्रतिशत से अधिक होनी चाहिए। उपयुक्त फल वृक्ष एवं किस्मों का चयन हमेशा तापमान, आर्द्रता, वर्षा की मात्रा इत्यादि को ध्यान में रखकर ही करनी चाहिए। हमेशा ऐसी प्रजातियों का चुनाव करें, जो तापमान, आद्रता के प्रति सहनशील हों।

## उचित स्थान का चयन एवं खेत की तैयारी

बाग लगाने का स्थान यदि नया है या उस पर जंगल–झाड़ी हैं, तो उसे कटवाकर साफ कराएं तथा मिट्टी पलट हल से गहरी जुताई कराकर, हैरो/कल्टीवेटर चलाकर मिट्टी को भुरभुरी करें तथा खेत को समतल करें। इसके साथ ही सिंचाई की व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए। फल वृक्षों को आंरभ के दो वर्षों में विशेषकर ग्रीष्म ऋतु में समुचित पानी देना आवश्यक है। जंगली जानवरों तथा मानव से बचाव के लिए सुरक्षा के तौर पर बाड़ या कंटीले तार से घेराव करना आवश्यक है। गर्मी में लू तथा सर्दी में पाले से बचाव के लिए उत्तर–पश्चिम दिशा में वायुरोधक पौधे लगाएं।

## गड्ढे की खुदाई–भराव एवं मृदा नमी संरक्षण

समान्यतया करौंदा और आम की आम्रपाली किस्म को 2 से 2.5 मीटर तथा अनार, किन्नौं, कागजी नीबू, अमरूद, बेल, संतरे को 6×6 मीटर तथा आंवला, आम, लसोड़ा, जामुन को 8×8 मीटर की दूरी पर लगाते हैं। फलों की प्रजाति के चयन के बाद उपयुक्त दूरी पर निशान बनाकर रेखांकन करना चाहिए। छोटे फल वृक्षों जैसे–करौंदे के लिए 60×60×60 सें.मी.; लंबी, चौंड़ी, एवं गहरी तथा अन्य फल वृक्षों के लिए 1×1×1 मीटर; लंबी, चौड़ी, एवं गहरी गड्ढे की खुदाई करें। ऊपरी आधी मिट्टी एक तरफ तथा शेष आधी मिट्टी दूसरी तरफ डालें। इन गड्ढों की खुदाई करने का उपयुक्त समय मई–जून है। सूर्य की तेज धूप से मृदा का सोलराइजेशन कर लेना चाहिए। जून में वर्षा आने के पूर्व इन गड्ढों को 30–50 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद तथा 15–30 मि.ली. क्लोरीपाइरीफॉस का घोल 10 लीटर पानी में मिलाकर

प्रति गड्ढे में डालें। इससे दीमक के प्रकोप से पौधों को सुरक्षित रखा जा सकता है। गड्ढे भरते समय ऊपर की आधी मिट्टी पहले डालें तथा शेष नीचे की आधी मिट्टी बाद में डालें। अर्थात् नीचे की मिट्टी ऊपर तथा ऊपर की मिट्टी नीचे हो जाए। इस प्रकार भरे हुए गड्ढे की मिट्टी भुरभुरी होने के कारण रोपित फल वृक्षों की जड़ों का बढ़ाव बहुत तेजी से होगा और फल वृक्ष शत–प्रतिशत स्थापित होगें। मृदा एवं नमी के संरक्षण के लिए बंधीकरण, पौधों के बीच–बीच में छोटे गड्ढे या मल्चिंग का प्रयोग करें। इससे वर्षा का पानी ज्यादा दिनों तक खेत में नमी बनाए रखता है। फल वृक्षों की उपलब्धता वर्षा ऋतु में बाग लगाने के पूर्व ही चयनित प्रजाति एवं किस्मों की उपलब्धता सुनिश्चित कर लें। पौधों को सरकारी, पंजीकृत या विश्वसनीय पौधशाला, राजकीय उद्यान विभाग, कृषि विश्वविद्यालय या भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की संस्थाओं की पौधशाला से खरीदना उचित रहता है। पौध खरीदारी का बिल अवश्य लें एवं सुरक्षित रखें।

## अंतः फसल का चुनाव

फल वृक्ष लगाने के 3–4 वर्षों के बाद फलन में आते हैं। उनके बीच में यदि सिंचाई के साधन हों तो सब्जियों की खेती अन्यथा सामान्य रूप से जिस फसल की खेती करना चाहें, कर सकते हैं। यदि सिंचाई के साधन उपलब्ध नहीं है तो हरा चारा प्राप्त करने के लिए घास एवं दलहनी चारा फसलों की खेती भी कर सकते हैं। इस प्रकार उपरोक्त बातों का ध्यान रखकर बाग लगाएंगे, तो निश्चित रूप से आपकी लंबे समय (15–25 वर्षीय) की योजना सफल होगी। जिससे बाग स्थापित होगा और अच्छी उपज एवं आय प्राप्त होगी।

## सही प्रजाति एवं किस्मों का चयन

बाग लगाने से पूर्व वहां की मृदा जलवायु के उपयुक्त फल वृक्षों की प्रजाति एवं किस्म का चयन करें। वर्षा आश्रित क्षेत्रों में जहां 70–90 सें.मी. वार्षिक वर्षा होती है, वहां बलुई लाल मिट्टी में जैसे–किन्नौं, बेर, अमरूद, इमली तथा काली/पड़वा मिट्टी मे आंवला, शरीफा, बेल, आम, कागजी नींबू लगाएं। इन प्रजातियों की अच्छी किस्मों के कलमी पौधे लगाएं।

## फल वृक्षों की उपयुक्त किस्में

| फल वृक्ष | उपयुक्त किस्में |
|---|---|
| बेर | थार सेविका (अगेती), थार भुबराज, गोमा कीर्ति (अगेती), गोला (अगेती), उमरान (पछेती), सेब |
| बेल | गोमा यशी, गोमा नीलकंठ, मिर्जापुरी, कागजी इटावा, कागजी गोंडा, कागजी बनारसी, नरेन्द्र बेल 5 एवं नरेन्द्र बेल 9 |
| अनार | भगवा, जालौर सीडलैस, गणेश, कंधारी |
| आम | दशहरी, लंगड़ा एवं आम्रपाली |
| करौंदा | लाल, सफेद एवं नेटाल प्लम |
| आंवला | गोमा ऐश्वर्या (अगेती एवम शुष्क सहनशील), कंचन, चकैया, नरेन्द्र आंवला 3, 7 एवं 10 । |
| जामुन | गोमा प्रियंका, नरेन्द्र जामुन 6, पारस |
| अंजीर | काली अंजीर, भूरी टर्की |
| नींबूवर्गीय | कागजी नीबू, मौसमी, किन्नौं, स्टार रूबी, ब्लड रेड, इत्यादि |

## फल वृक्षों का रोपण

वर्षा ऋतु में जब दो–तीन अच्छी वर्षा हो जाती है तो जून में भरे हुए गड्ढे धंसकर चारों ओर से दरार बना लेते हैं। इससे यह ज्ञात होता है कि गड्ढा नमीं से संतृप्त हो गया है। साथ ही जब वर्षा हो रही हो तो उसी समय

पौधा रोपित करें। जहां तक संभव हो, पौधे सायंकाल में रोपें। रोपने के तुरंन्त बाद मिट्टी को दबा दें एवं पानी अवश्य लगाएं ताकि जड़ों के चारों ओर की वायु निकल जाए। रोपण के पूर्व पिंडी की घास–फूस, और पॉलीथीन अवश्य निकाल लें। गड्ढे से पिंडी के बराबर ही मिट्टी निकालें। पौधा गड्ढे के बीचों–बीच लगाएं। मुख्य जड़ एवं शाखा के जोड़ को जमीन से 20–25 सें.मी. ऊपर रखना चाहिए। पौधा लगाने के बाद उसे सहारे के लिए लकड़ी की शाखा पर दीमकनाशी दवा लगाकर उसे पौधे के बगल में लगा दें।

## रोपण के बाद फल वृक्षों की देखरेख

फल वृक्षों के रोपण के बाद आरंभ के दो वर्ष तक अच्छी देखरेख की आवश्यकता होती है जैसे–

- वर्षा ऋतु के बाद शुरू के दो वर्ष तक समय पर पौधों को पानी अवश्य लगाएं। पानी शाम को ही लगाना अच्छा रहता है।
- प्रत्येक सिंचाई के बाद पोधे के चारों और गुड़ाई करें। पोधे के चारों ओर खरपतवार न उगने दें।
- सर्दी में पाले से तथा गर्मी में लू से बचाव के लिए पौधे को घास से चारों तरफ से हल्का–हल्का ढक कर रखें।
- रोग या कीट का प्रकोप देखें तो तुरंत कवकनाशी या कीटनाशी दवा का छिड़काव करें।
- सहारे के लिए जो लकड़ी लगाएं उस पर दीमकनाशी दवा का अवश्य लेप करें।
- यदि कोई पौधा मर जाए तो समय रहते उसकी जगह पुनः पौधा रोपित करें।
- टपक विधि से सिंचाई की व्यवस्था करें, जिससे कम पानी में पौधों की जल मांग की पूर्ति की जा सके।

# बदलते परिप्रेक्ष्य में बीजीय मसालों में खड़ी खेती की उपयोगिता

**शिव लाल, गोपाल लाल एवं सुमेर सिंह मीना**
भाकृअनुप– राष्ट्रीय बीजीय मसाला अनुसंधान केंद्र, तबीजी– 305206, अजमेर

बीजीय मसाले बहुत ही स्वास्थ्यवर्धक व लाभ देने वाली विशेष फसलें है तथा यह मुख्यतया देश के सूखे भागों में उगाई जाती हैं। बीजीय मसालों में जैसे कि धनिया, जीरा, सौफ, मेथी, अजवाइन, नाइजेला (कलोंजी), सोआ, सेलेरी, एनिसीड, करावे व् अन्य फसलें आती हैं। भारत देश लगभग 70 देशों में बीजीय मसालों व इनसे बने उत्पाद का निर्यात करता हैं तथा लगभग 45% वैश्विक मांग की पूर्ति करता हैं। बीजीय मसाले देश के कुल मसाला उत्पादन भाग के 51–79% क्षेत्रफल में उगाए जाते है, जिनसे 19.06% उत्पादन होता हैं। भारत में वर्तमान मसालों फसलों का क्षेत्रफल 1.74 मिलियन हैं. व उत्पादन 1.45 मिलियन टन है। परन्तु वैश्वीकरण व गलाकाट स्पर्धा के कारण बीजीय मसालों में अच्छी गुणवत्ता वाले उत्पाद को प्राथमिक स्थान दिया जा रहा हैं। उत्पाद गुणवत्ता को विभिन्न प्रकार के कारक प्रभावित करते हैं, परन्तु मुख्य कारण बीजीय मसलों मैं संपूर्ण वैल्यू चैन (खेत से खाने की थाली तक) का ना होना हैं। साथ ही तीव्र गति से बढ़ते हुए शहरीकरण के कारण खेती के लिए जमीन व पानी की कमी तथा आमजन के खान पान में बदलाव भी एक मुख्य कारण हैं। इसलिए सिमित संसाधनों में अधिक व उच्च गुणवत्ता वाले बीजीय मसालों के उत्पादन हेतु संसाधन सक्षम व टिकाऊ उत्पादन देने तकनीकियों की अत्यंत आवश्यकता हैं, ताकि इनसे जुड़े सभी हितधारकों का फायदा हो सके। साथ ही देश की जनसंख्या भी तीव्र गति से बढ़ रही हैं व खाने की मांग के साथ विश्व में बीजीय मसालों की मांग भी 8–10 प्रतिशत सालाना बढ़ रही है। इन सभी चुनौतियों का सामना अत्यंत जरूरी हैं। इसलिए वर्टीकल फार्मिंग/खड़ी खेती एक अच्छा विकल्प हैं। इस नयी तकनीक द्वारा अच्छी गुणवता वाली मसाला फसलों की पैदावार की जा सकती है व अधिक आय भी कमाई जा सकती हैं।

## क्यों करें बीजीय मसालों में खड़ी खेती?

बीजीय मसालें जैसे कि धनिया, सेलेरी, दिल (सोया), सौफ व मैथी के पत्तों की साल भाल, हर ऋतु में भारी मात्रा में पुरे देश में मांग देश बनी रहती हैं। धनिये के पत्ते की मांग धार्मिक पर्वो व त्योहारों के समय विशेष रूप से शहरों में और भी बढ़ जाती है। धनियाँ, सौफ, सोआ व सेलेरी के पत्तो का उपयोग सलाद में लिया जाता हैं तथा यह भरपूर पोषण भी प्रदान करता हैं। परन्तु जनसंख्या वृद्धि व शहरीकरण के कारण शहरो में खेती हेतु जमीन की अत्यंत कमी हो गयी है ज्यादातर जमीन/भूमि बड़ी बड़ी गगनचुंबी इमारते बनाने के उपयोग में ले ली गयी हैं इसलिए शहरो व इनके आस पास के क्षेत्रो में सतत व टिकाऊ फसल उत्पादन के लिए वर्टीकल फार्मिंग/खड़ी खेती से अच्छा व नया विकल्प कोई नहीं हैं।

## क्या है, खड़ी खेती या वर्टीकल फार्मिंग ?

खड़ी खेती या वर्टीकल फार्मिंग में एक बहु सतही ढांचा तैयार किया जाता है। इस ढाँचे के सबसे नीचले हिस्से में पानी से भरा टैंक रख दिया जाता हैं, टैंक के उपरी खानों में पौधों के छोटे छोटे गमले रखे जाते हैं तथा पाइप के द्वारा इन गमलों में उचित मात्रा में पानी पहुंचाया जाता हैं जिसमें पोषक तत्त्व भी मिले होते हैं जो पौधों को शीघ्र बढ़ने में मदद करते हैं तथा इसमें मिट्टी की जरुरत भी नहीं होती हैं । नयी बाजार शोध की प्रतिवेदन (ग्लोबल फोरकास्ट 2022) के अनुसार खड़ी खेती का बाजार 2022 तक लगभग 5.80 बिलियन हो जायेगा। पिछले वर्षो में पुरे विश्व में खड़ी खेती की तरफ सभी देशों का रुझान काफी बढ़ा हैं। ज्यादातर खड़ी खेती का चलन विशेष उच्च मूल्य वाली फसलों में जैसे की फूलो की कृत, हरी पत्तेदार व हर्बल फसल, बेरी फलो में तथा दवाईयाँ के काम में आने वाले पौधों में बढ़ा हैं। परन्तु अभी तक बीजीय मसालों की खड़ी खेती व्यवसायिक खेती करने के लिए संपूर्ण जानकारी का अभाव हैं इसलिए इन फसलों को खड़ी खेती में उगाने की अपार संभावनायें व चुनौतिया हैं जिसको हमें अभी लाभदायक तरीके से भुनाना हैं।

बीजीय मसाले पूरी दुनिया के लोगों के खाने का अभिन्न अंग हैं। यह फसलें उच्च मूल्य निम्न आयतन स्वभाव की हैं इसलिए खड़ी खेती के लिए सर्वाधिक

उपयुक्त हैं। कम गहरा जड़ तंत्र होना, शाकीय स्वभाव, सरल व वार्षिक जीवन चक्र/फसल चक्र, रोगों व कीटों का अपेक्षाकृत कम लगना तथा गंध तेल व ओलीयोरेसीन की प्रचुर मात्रा पायी जाती है, जो कि विश्व बाजार में काफी महंगी व अत्यंत माँग पर होती हैं। पूरे साल मांग व बेमौसमी उत्पादन काफी लाभदायक होता है। यह फसलें आसानी से फसल तंत्र व मिश्रित खेती में भी लगाई जा सकती हैं।

## खड़ी खेती काफी फायदेमंद हैं और इसके फायदे इस प्रकार हैं :–

1 घरों, बहुमंजिला इमारतों में तथा और कही भी खाली पड़ी जगहों का सर्वोत्तम उपयोग।

2 बीजीय मसालें जैसे कि मेथी, दील (सोआ), धनिया व सेलरी के पत्तों का मांगपूर्ती हेतु सालभर उत्पादन।

3 सौंफ व सोया के पत्तों का देश के कुछ हिस्सों में सलाद के रूप में प्रचलन होने से इन फसलो को लगाना काफी फायदेमंद होता है।

4 उत्पाद खाने के लिए सुरक्षित होता हैं क्योंकि कीटनाशकों व अन्य रसायनों का काफी कम मात्रा में उपयोग।

5 खड़ी खेती से अच्छी गुणवत्ता व स्थानीय स्तर पर उत्पादित फसलों को ग्राहक द्वारा अधिक मांग करना।

6 कम परिवहन खर्च क्योंकि खड़ी खेती में उत्पादन व बाजार काफी नजदीक होते हैं।

7 देसी खेती की तुलना में पानी का कुशल उपयोग (70 प्रतिशत कम पानी का उपयोग होता है) ।

8 वायु प्रदुषण भी काफी कम होता है, क्योंकि इसमें बड़ी मशीने जैसे कि ट्रेक्टर व अन्य मशीनों का इस्तेमाल नहीं होता है इसलिए खड़ी खेती पर्यावरण हितेषी भी है।

9 सतत शहरी विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि खड़ी खेती में समग्र दृष्टिकोण व विभिन्न तकनीकियों का मिश्रण होता हैं।

## खड़ी खेती को व्यवसायिक रूप से करने की विधियाँ

खड़ी खेती को हाइड्रोप्रोनिक्स, एरोप्रोनिक्स व ग्रोलाइट्स तकनीकियोंकी सहायता से व्यावसायिक रूप में किया जा सकता हैं। हाइड्रोप्रोनिक्स एक ऐसी प्रणाली हैं जहां पौधों को प्राकृतिक मिट्टी के अलावा विकास मीडिया में उगाया जाता हैं। सभी पोषक तत्व सिंचाई के पानी में मिला दिया जाता है और पौधों को नियमित आधार पर आपूर्ति की जाती हैं। इसी प्रकार एरोपोनिक्स तकनीक के माध्यम से बिना मिट्टी व संचय माध्यम से वायु कुहासे के वातावरण में पैदा किये जाते हैं। इस प्रक्रिया में पौधों की जड़े प्रकाश रहित सम्पूर्ण अंधकार में बंद बक्से में बढ़ती हैं और यहाँ जड़ों को पोषक तत्व कुहासे के रूप में प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार ग्रो लाइट्स का उपयोग कम सूर्य की रौशनी पहुचनी वाली जगहों पर किया जा सकता हैं।

## वर्तमान में खड़ी खेती से सम्बंधित चुनौतियाँ

1. बीजीय मसालों की खेती सामान्यतः देश के शुष्क व अर्ध शुष्क भागों में सीमांत व छोटे किसानों द्वारा की जाती है जो आर्थिक दृष्टि से काफी कमजोर होते हैं। इसलिए इस प्रकार की खेती शुरू करने से पहले संबंधित तकनीकों का मानकीकरण अत्यंत आवश्यक हैं अन्यथा भारी नुकसान की आशंका रहती है ।
2. वर्तमान में खड़ी खेती के लिए सीमित उपयुक्त फसलों का होना (जैसे की पत्तेदार सब्जियाँ या स्ट्रबेरीज)
3. उपयुक्त फसलों में जैसे की बीजीय मसालों में खड़ी खेती उपयुक्त प्रजातियों का आभाव होना बीजीय मसाला फसलों में सम्पूर्ण उत्पादन तकनीकियों का आभाव होना।
4. वित्तीय साध्यता का आकलन करना अत्यंत आवश्यक हैं। विस्तृत लागत व लाभ के बारे में बारीकी से विश्लेषण करना जरूरी हैं ताकि सामान्य खेती की तुलना में खड़ी खेती के फायदों को बढ़ावा दिया जा सके।
5. खड़ी खेती करने हेतु जीवश्म ईधन व कार्बन उत्सर्जन सम्बंधित विश्लेषण भी करना होगा, क्योंकि खड़े खेतों में उर्जा की अधिक आवश्यकता होगी, जो की हमारे वातावरण पर नकारात्मक असर डाल सकती है।
6. खड़ी खेती करने के लिए सीमित ज्ञान व कौशल का होना।
7. सामान्य खेती की तुलना में खड़ी खेती में विशेष व विभिन्न तकनीकियों का एक साथ उपयोग होना।
8. कीटों व रोगों का प्रबंन्धन क्योंकि नियंत्रित वातावरण में उगाये पोधों की कार्यिकीव जैविकी एकदम अलग होगी और इनमें कीटों व रोगों के ज्यादा लगने की संभावना होगी तथा जटिल वातावरण के कारण इस प्रकार के वातावरण में इनका प्रबंधन करना भी बहुत ही कठिन होगा।
9. उत्तम व लाभदायक खड़ी खेती करने हेतु संपूर्ण कार्यकलापों (पैकेज ऑफ प्रैक्टिस) का अभाव।
10. खड़ी खेती के लिए जागरूकता व उत्साह जाग्रत करना।

## खड़ी खेती करने हेतु प्रमुख शोध के विषय

क. जलवायु परिवर्तन को मद्देनजर रखते हुए नई प्रजातियों का प्रजनन द्वारा (मुख्य लक्षणों जैसे कि बौनेपन, गुणवत्ता, अजैविक तनाव) विकास करना जो की खड़ी खेती के लिए उपयुक्त हों।

ख. वर्तमान में बीजीय मसालों में लगभग भारत में 7000 जन्नद्रव्य है इन जननद्रव्यों को खड़ी खेती की उपयुक्तता के लिए जाँच करना ताकि बीजीय मसाला फसलों में उपयुक्त प्रजातियों का खड़ी खेती हेतु अनुमोदन किया जा सके।

ग. बीजीय मसालों (धनिया, मैथी, सोवा, सेलरी व सौफ) को खड़ी खेती में उगने के लिए उपयुक्त वातावरण का मानकीकरण करना ताकि यह खेती किसानों के लिए लाभदायक साबित हो सके।

घ. संपूर्ण मसाला बीजीय फसलों के लिए उत्पादन तकनीकियों का मानकीकरण।

च. सिंचाई व पोषक तत्वों की मात्रा व उपयुक्त अवस्था से सम्बंधित विशेष शोध।

छ. उत्पादन की गुणवत्ता को बढ़ाना व् गुणवत्ता से सम्बंधित श्रेणियों का मानकीकरण करना।

ज. समग्र कीट व रोग प्रबंधन का विकास व मानकीकरण।

# मेहंदी की खेती: कम और अनिश्चित वर्षा क्षेत्रों में आय का एक अच्छा स्रोत

**दीपक कुमार गुप्ता, ए. के. शुक्ल, कीर्थिका ए., एम बी नूर मुहम्मद एवं बी. एल. जाँगिड**
भाकृअनुप.–केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, पाली–मारवाड़ 306401

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ लगभग 70 प्रतिशत आबादी अपने जीवन यापन के लिए कृषि पर निर्भर है। परंतु कृषि से होने वाली उत्पादन एवं लाभ मुख्यतः वर्षा पर आधारित है। पश्चिमी राजस्थान की गरम एवं शुष्क जलवायु में, वर्षा आधारित खरीफ फसलें जैसे–बाजरा, ज्वार, तिल, मूंग एवं ग्वार इत्यादि प्रायः मानसून की अनिश्चितता से असफल हो जाती है। वर्तमान में, जलवायु परिवर्तन भी विश्वपटल पर एक बड़ी चुनौति बन कर उभर रही है। जिसका प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। इन परिस्थितियों में मेंहदी की खेती एक बहुत ही अच्छा विकल्प हो सकता है। मेहँदी एक बहुवर्षिय झाड़ीदार फसल है। पतियों में 'लासोन' नामक रंजक यौगिक उपस्थिती के कारण मेहँदी प्राकृतिक रंग का एक प्रमुख श्रोत है। इसलिए इसकी खेती व्यवसायिक रूप से मुख्यतः पत्तियों के उत्पादन लिये की जाती है जो बालों एवं शरीर को रंगने के लिये उपयोग किया जाता है। इसके फूलों से निचोड़े गये तेल का उपयोग इत्र उद्योग में 'मेंहदी के ओटो' के स्रोत के रूप में किया जाता है। सूखा सहने की क्षमता एवं गहरे जड़ तंत्र के कारण, मानसून खराब होने के वावजूद, मेंहदी की खेती किसानों कों कुछ निश्चित आय दे जाती है। एक बार स्थापित हो जाने पर मेहँदी के पौधो से 30 वर्षों से ज्यादा तक उत्पादन लिया जा सकता है। किसानों द्वारा इसकी खेती ज्यादातर बिना उर्वरक/खाद प्रयोग एवं न्यूनतम प्रबंधन के साथ वर्षा आधारित फसल के रूप में की जाती है। मेंहदी एक बहुवर्षीय झाड़ी होने के कारण लघु चक्री वानिकी रोपण के रूप में एक अच्छा विकल्प देती है। इसके साथ ही यह अपने पर्ण समूह/अवशेषों से न केवल मृदा आवरण को निरंतर बनाये रखती है बल्कि सीमान्त शुष्क क्षेत्रों में स्वच्छ पर्यावरण निर्माण में भी सहयोग करती है। मेंहदी आधारित कृषिवानिकी पद्धति एक अच्छा सूखारोधी कौशल हो सकता है जो कि किसानों को जलवायु परिवर्तन के प्रभाव का प्रतिरोध करने में भी मदद कर सकती है। भारत के मेहँदी उत्पादन क्षेत्रों में, मेहँदी के पतियों के पाउडर बनाने तथा पैकिंग करने के लिए कई कारखाने हैं जो श्रमिकों के लिए रोजगार भी प्रदान करते हैं। भारत से अन्य देशों मे बड़े स्तर पर मेहँदी का निर्यात किया जाता है जिससे भारत को आर्थिक लाभ भी होता है।

पाली जिले के सोजत तहसील मे मेहँदी की फसल

## उपयुक्त जलवायु एवं भारत के उत्पादक क्षेत्र

वैसे तो मेंहदी विभिन्न तरह की जलवायु में उगाई जा सकती है। लेकिन इसका पौधा शुष्क से उष्णकटिबंधीय और सामान्य गर्म जलवायु में अच्छी वृद्धि करता है। इसे संयत वर्षा लगभग 400 मि.मी. एवं वर्षा ऋतु में सक्रिय वृद्धि अवधि के दौरान लगभग 30–40° सेल्सियस तापमान की, तथा अच्छी गुणवत्ता की पत्तियों की पैदावार के लिये गर्म, शुष्क एवं खुले मौसम की आवश्यकता होती है। मेहँदी के पौधे लगभग भारत के सभी क्षेत्रों मे पाये जाते है परंतु इसकी व्यवसायिक खेती मुख्यतः राजस्थान के अर्धशुष्क क्षेत्रों में की जाती है। यहाँ लगभग 41 हजार हेक्टयर भूमि पर मेहँदी की खेती की जा रही है। जिसमें से अकेले पाली जिले में लगभग 95 प्रतिशत (39,400 हे.) क्षेत्र आता है। पाली जिले की सोजत, मारवाड़ जंक्शन एवं रायपुर तहसीलों में मेंहदी उत्पादन के प्रमुख केंद्र है और यहां पर सर्वोत्तम गुणवत्ता की विश्व प्रसिद्ध 'सोजत की मेंहदी' का उत्पादन होता है। गुणवत्तापूर्ण पत्तियों की पैदावार में जलवायु का प्रबल योगदान होता है। वर्षा का वितरण बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि फसल की ठीक से पकाई

एवं पत्तियों में उच्च रंजक अभिव्यक्ति के लिये मध्यवर्तीय सूखे प्रकाशीय दिनों के साथ शीत रात्रियों की आवश्यकता होती है। फसल की कटाई (सितम्बर–अक्टूबर) अवस्था या कटाई के तुरंत बाद वर्षा उत्पाद को खराब कर देती है और बाजार में भाव कम मिलते है।

## किस्म एवं बीज का चयन

अभी तक आधिकारिक रूप से मेहँदी की कोई भी उन्नत किस्म विकसित नहीं की गयी है। परंतु केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, पाली पर उन्नत किस्म विकसित करने के लिए अनुसंधान किया जा रहा है। इस केंद्र पर, पाली जिला के विभिन्न भागों से मेहँदी के विभिन्न प्रकार के पौधो को एकत्रित कर संरक्षित किया गया है एवं उस पर अनुसंधान किया जा रहा है। काजरी में अधिक पैदावार देने वाली एस 8, एस 22, खेड़ब्रह्म व धन्धुका किस्मों का चयन किया गया है। उन्नत किस्म के अभाव में किसान को चौड़ी पत्ती वाली देशी किस्म का चयन करना चाहिए जिनकी टहनियां पतली व सीधी ऊपर की ओर खड़ी होती है। मुरालिया, छोटी पत्ती वाली व झाड़ीनुमा फैलने वाले पौधे नहीं लगायें। इनकी कटाई कांटे व मोटी टहनियों के कारण ज्यादा कठिन होती है तथा पत्ती:तना अनुपात कम होने से पैदावार कम होती है। उन्नत किस्म के पौध को तैयार करने के लिएए स्वस्थ, चौड़ी पत्ती वाले व अधिक पैदावार देने वाले एक समान पौधों से पके हुये बीज एकत्रित करना चाहिए। फसल कटाई से पूर्व चयनित पौधे से परिपक्व डोडे (फल) तोड़ कर धूप में सुखायें और बाद में कूटकर बीज़ निकाल लें। छलनी से मोटे बीज़ अलग करके प्लास्टिक की थैलियों में भण्डारण करें। जल्दी फूल व अधिक बीज पैदा करने वाले पौधे नहीं चुनें।

## मृदा का चयन एवं खेत की तैयारी

नमी धारण की क्षमता अधिक होने के कारण, बलुई दोमट व गहरी मिट्टी वाले खेत मेहँदी के खेती के लिए अच्छे होते है। सामान्यतया 7.5 से 8.5 क्षारांक (पी.एच.) की मिट्टी उपयुक्त रहती है। खेत की तैयारी वर्षा ऋतु से पहले कर लेनी चाहिए। वर्षा ऋतु से पहले खेत की मिट्टी पलटने वाले हल से 15–20 सेमी. तक गहरी जुताई करने के बाद एक गहरी जुताई व दो हैरोइंग करनी चाहिएं। इससे वर्षा जल का संचय खेत में होता है। खेत से खरपतवार व अन्य फसलों के ठूंठ को पूरी तरह से निकाल देना चाहिए। इससे खेतों मे दीमक एवं हानिकारक कीट का प्रकोप कम होता है। मिट्टी और नमी को संरक्षित करने के लिए, पहली वर्षा के साथ खेत में 45 या 60 सेमी. की दूरी पर 30 सेमी. चौड़ी व 15–20 सेमी. गहरी कूंड ढलान की विपरीत दिशा में भी बनाया जा सकता है।

## पौध तयार करना एवं पौध रोपण

खेत मे मेहँदी को सीधा बीज द्वारा या पौधशाला में पौध तैयार कर रोपण विधि से लगाया जा सकता है। परंतु, व्यावसायिक खेती के लिए पौध रोपण विधि का उपयोग सर्वाधिक किया जाता है। किसान स्वयं पौधशाला तैयार कर सकते है या किसी निजी पौधशाला से खरीद सकते है। पाली के सोजत तहसील में बहुत सारी निजी पौधशाला मेहँदी के पौध तैयार करती हैं, जिसे जुलाई महीने में खरीदा जा सकता। मार्च माह के प्रारम्भ जब अधिकतम तामपान 25–30० सेन्टीग्रेड के बीच होता है। मेहँदी के पौध तयार करने के लिए सबसे उपयुक्त समय होता है। इसके लिए,10 मीटर लम्बी व 1.5 मीटर चौड़ी आकार की 8–10 क्यारियां तैयार करके मिट्टी मे गोबर का खाद मिला दें। बहुत कठोर और चिकना होने के कारण, मेहंदी के बीज को बिना उपचार किए बोने से अंकुरण कम होता है। अच्छा और जल्दी अंकुरण पाने के लिए, बोने से पहले जूट के बोरे में बीज को एक से दो दिन तक पानी से भिगोकर रखें व पानी को समय समय पर बदलते रहें। केवल भिगोयें नहीं, बहते पानी में बीज का धोयें भी। बहते पानी में विषैले (अंकुरण कम करने वाले) तत्व बह कर नष्ट हो जाते हैं। केवल एक बार भिगोकर नहीं रखें। एक बार भिगोने से कवक के संक्रमण से बीज की अंकुरण क्षमता प्रभावित होती है अतः पानी बदलते रहें। नमक के 3 प्रतिशत घोल में 24 घण्टे तक भिगोने से अंकुरण 5 दिन में हो जाता है। नमक की सांद्रता 3 प्रतिशत से अधिक न हो। नमक की सांद्रता अधिक होने से बीज का अंकुरण दुष्प्रभावित होता है। इसके बाद बीज का कार्बेन्दजिम 2.5 ग्राम प्रति किलों से उपचार किया जन चाहिए। एक हेक्टेयर खेत के लिए 5–6 किग्रा बीज महीन बालू रेत में मिलाकर इन क्यारियों में सामान रूप से बोयें। समय समय पर खरपतवार निकालतें रहें व सप्ताह में 2 से 3 बार आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। पानी की कमी न होने दें। पानी की कमी से पौधे मर सकते हैं।

## खाद एवं उर्वरक

यदि मिट्टी का पी एच मान 8.5 या अधिक है तो मिट्टी में 2.5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से जिप्सम को मिट्टी मे मिलना चाहिए। जिप्सम नहीं देने से सोडियम तत्व की अधिकता से नये पौधे मर मरने की संभावना होता हैं अतः जिप्सम का प्रयोग अवश्य करें। जिप्सम को पौधों

की रोपाई के समय नहीं डालना चाहिए। वर्षा से पहले जिप्सम को मिट्टी मे डाल कर कूंड़ों मे मिट्टी में अच्छे से मिला देना चाहिए ताकि पहली वर्षा में जिप्सम मिट्टी में मिल जाए। रोपाई से पहले अन्तिम जुताई के समय 5 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद देने से 8.10 प्रतिशत अधिक उपज होती है। प्रथम वर्ष में 40 किग्रा फॉस्फोरस एवं 40 किग्रा नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करे। मेंहदी के पुराने खेतों में नत्रजन व फॉस्फोरस की मात्रा 60 एवं 40 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से दें। आधी नत्रजन पहली वर्षा के समय व शेष दो बार एक–एक महीने के अन्तराल से दें। नत्रजन सूखी भूमि या कम नमी में न डालें। इससे नत्रजन वाष्पीकरण प्रक्रिया से नष्ट हो जाता है। उर्वरक पत्तियों पर व पौधों से दूर नहीं डालें। पत्तियां जल सकती है व दूर डालने से पौधों को पोषक तत्व न मिल कर पास में मौजूद अन्य पौधों को मिलेगा।

## खरपतवार नियंत्रण और निराई गुड़ाई

मेहंदी रोपाई के बाद जब पौध के स्थापित होने के बाद कुदाल या खुरपी का उपयोग कर खेतों से खर–पतवार निकाल देना चाहिए। अट्राजीन 1 किग्रा (सक्रिय तत्व) 600 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करने से खरपतवारों का नियंत्रण होता है। खरपतवार बड़े हो जाने पर पूरी तरह नहीं मरते। मेहंदी के पुराने खेतों में पहली वर्षा के तत्काल पश्चात अट्राजीन 1 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। फिर ट्रैक्टर चालित हल से पंक्तियों (पंक्ति से पंक्ति 60 सेमी.) के बीच गहरी जुताई करें। ट्रैक्टर चालित कूंड बनाने वाली फाल से 45 दिन की फसल होने तक दो जुताई करें ताकि मृदा में जल संग्रहण हो। पंक्ति से पंक्ति 60 सेमी. व जुताई द्वारा 30 सेमी. दूरी पर बोई फसल से 20 से 25 प्रतिशत अधिक उपज होती है। 30 सेमी. की दूरी में बैल द्वारा या ट्रैक्टर द्वारा गुड़ाई नहीं करें। पौधा उखड़ने व टहनियों के टूटने की संभावना रहती है। जबकि 60 सेमी दूर पंक्तियों के बीच यंत्र चालित निराई–गुड़ाई आसानी से होती है।

## कीट एवं व्याधि नियंत्रण

मेहँदी के खेतों मे मुख्यतः पत्ती धबा रोग, जड़ गलन रोग, दीमक, पत्ती भक्षक लट एवं रस चूसक कड़ों का प्रकोप होता है। बारानी खेती में दीमक से बचाव के लिए क्लोरोपाइरीफॉस का अवश्य प्रयोग करें। क्लोरोपाइरीफॉस की निर्धारित मात्रा को पानी में घोल कर पौधों के आस–पास मिट्टी में अच्छी तरह छिड़काव करें। खरपतवार खड़ा नहीं रहने देवें व घास इत्यादि के ठूंठ न रहने दें। इनमें दीमक व अन्य कीट पनपते हैं। अरण्डी की अर्धकुंडलक (सेमीलूपर) लट कीट के नियंत्रण के लिये 2 मिली लीटर क्यूनालफॉस को एक लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। आस–पास कपास, अरण्डी के खेत न हों क्योंकि इनमें यह कीट पनपता है। छिड़काव में विलम्ब न करें। विलम्ब से कीट अधिक बढ़ेगें। तुरन्त छिड़काव करें व दूसरा छिड़काव 10–15 दिन बाद करें। मेंहदी की जैविक खेती करने वाले अरण्डी के सेमीलूपर के नियंत्रण के लिये प्रकाशपाश का उपयोग कर सकते है, नीम की नीम्बोली के 4 प्रतिशत अर्क का लट की शुरुआती अवस्था में छिड़काव करें, पक्षियों के बैठने के लिये प्रति हेक्टेर 25 डण्डे खेत में लगायें, शुरुआती अवस्था में लट को हाथ से पकड़कर भी नष्ट किया जा सकता है।

## कटाई एवं भण्डारण

पत्तियां जब पूर्ण परिपक्व हों और नीचे वाले पत्तियां झड़ने लगे इससे पहले ही फसल काटना शुरू कर देना चाहिएं। आम तौर पर फसल कटाई सितम्बर के आखिरी सप्ताह या अक्टूबर के पहले सप्ताह में की जाती हैं। पत्तियों के पूर्णतया सूखने की प्रतीक्षा नहीं करें। इससे सूखी पत्तियां झड़ कर नष्ट हो जाएंगी। फसल की कटाई नई फसलों में भूमि की सतह से लगभग 4–5 सेमी. ऊपर एवं पुरानी फसलों में 8–10 सेमी. ऊपर करनी चाहिए। कच्ची पत्तियों वाली मेंहदी न काटें इनका बाजार में मूल्य कम होता है। कटी फसल को खेत में नहीं छोड़ें। कटी फसल को शीघ्रातिशीघ्र मढ़ाई क्षेत्र में एकत्रित करें। यदि वर्षा हो गयी तो मेंहदी के पते लाल पड़ जाते है एवं उनका बाजार मूल्य नगण्य हो जाता है। कटाई के बाद जहां तक हो सके कटी फसल को छाया व हल्की धूप में सूखाएं। हर दूसरे दिन कम से कम दो बार पौधों को पलटते रहें। मढाई डण्डों से पीट कर करें। मढाई का स्थान साफ–सुथरा व हो सके तो पक्का होना चाहिये। काटने के तीन से चार दिन के बाद जब पत्तियां अच्छी तरह से सूख जाये तो डण्डों से पीटकर पत्तियां अलग

मेहँदी के पौधों से पत्तियों को निकालने की प्रक्रिया

कर लें। टहनियां, बीज/डोडे एवं मिट्टी पत्तियों के साथ न रहनें दें। इससे मेंहदी पत्ती की गुणवत्ता कम हो जाती है और बाजार मूल्य कम मिलता है। कटाई, मढ़ाई के बाद मेहंदी पत्तियों का भण्डारा जूट की बोरियों में करें व उन्हें भण्डार गृह में एक–दूसरे के ऊपर इस तरह रखें कि हवा का आवागमन उचित रहें और नमी से सुरक्षित रहे।

## उपज व आर्थिक लाभ

रोपाई के प्रथम वर्ष से ही पतियों का उत्पादन ली जा सकता है । प्रथम वर्ष मे उपज क्षमता का केवल 5–10 प्रतिशत ही उत्पादन प्राप्त हो पता है। लगभग 3 से 4 वर्षो के बाद, अधिकतम उपज क्षमता प्राप्त होने लगता है। उत्पादन, वर्षा पर आधारित होती है और समान्य वर्षा होने पर अधिक उत्पादन मिलता है। सामान्यतया किसान के यहां एक हेक्टेयर मे मेहंदी की 600 से 1000 किलोग्राम सूखी पत्ती पैदा होती है। उन्नत कृषि विधियां अपनाकर 1500 से 2000 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर उपज ली जा सकती है। प्रचलित विधि में मजदूरी का खर्च अधिक होता हैं। बैल या ट्रैक्टर चालित हल से (45 से.मी. या 60 से. मी.) पंक्तियों में अन्तःकर्षण द्वारा मजदूरी व्यय में कमी की जा सकती है। उन्नत कृषि विधियां अपनाने से शुद्ध लाभ 15000–20000 रुपये प्रति हेक्टेयर तक किया जा सकता हैं। पतियों को तना शाखाएँ से झाड़ने के बाद, बचा हुआ तना का भी उपयोग ईंट भट्टा मे ईंट को पकाने के लिए किया जा रहा है।

**पिबन्ति नद्यः स्वयम् एवं न अम्भः स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।**
**न अदन्ति स्वयम् खलु वारिवाहा परोपकाराय सतां विभूतयः।।**

**अर्थात्**

**नदी कभी अपना पानी नहीं पीती। पेड़ अपना फल नहीं खाता है। बादल उन फसलों का उपयोग नहीं करते जिन पर वे बरसते हैं। अच्छे लोग हमेशा अपनी शक्ति का प्रयोग दूसरों की मदद करने के लिए करते हैं।**

# जल की रक्षा - कल की सुरक्षा

**कनक लता**
प्रधान कृषि विज्ञान केन्द्र–पंचमहल

"रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।
पानी गए न उबरे मोती मानुस चून"।।

सच कहा है रहिम ने पानी के बिना सब सून है जल संचय आज की सर्वोपरि आवश्यकता है। जल सुरक्षा के वगैर न जन सुरक्षा की उम्मीद की जा सकती है न ही अन्न सुरक्षा की, बावजूद इस सत्य के क्या यह सत्य नहीं है कि, पिछले कुछ दशकों से हम भारतीय इस तरह व्यवहार करने लगे है कि, मानों पानी कभी खत्म न होने वाली सम्पदा हो ? हमने पानी का उपभोग बढ़ा लिया है, पानी को संजोने की जहमत उठाने के बजाय, हमने ऐसी मशीनों का उपयोग उचित मान लिया है, जो कि कम से कम समय में अधिक से अधिक पानी निकाल सके।

राष्ट्रीय विकास में जल की महत्ता को देखते हुए अब हमें जल संरक्षण को अपनी सर्वोच्च प्राथमिकताओं में रखकर पूरे देश में जन जागरण चलाने की आवश्यकता है। जल संरक्षण के कुछ परंपरागत उपाय तो बहुत सरल और कारगर रहे हैं जिन्हें हम आधुनिकता की अंधी दौड़ में भूल बैठे हैं। पहले गाँवों, कस्बों और नगरों की सीमा पर या उस क्षेत्र के किसी नीची सतह पर तालाब अवश्य बनाए जाते थे, जिसमें वर्षा ऋतु में स्वतः ही जल संचय हो जाया करता था कहीं–कहीं गांवों शहरों का विसर्जित जल भी उन तलाबों में जाता था जिसे तालाब में रहने वाली मछलियाँ, मेंढक, कछुए आदि साफ करते रहते थे। परंतु अब तो यह विसर्जित जल साबुन, सैम्पू, डिटर्जेंट, कीटनाशक आदि के प्रभाव से इतने दूषित हो जाता है कि, इन जलीय प्राणी का उस पानी में जीवित रहना असंभव हो जाता है। इसके अलावा स्वार्थी मनुष्यों ने तालाबों को पाट कर भवन निर्माण कर लिए एवं वर्षा जल संचयन के साधन को अत्यधिक क्षति पहुँचायी है।

तालाबों के ह्रास के साथ–साथ वनों का विनाश भी द्रुतगति से हो रहा है। जंगलों की कटाई से दुहरी क्षति हो रही है। पहला तो जंगलों में वृक्षों के माध्यम से अपार जल संपदा का संचयन उनके भूमिगत फैले जड़ों के कारण होता था उसमें बेहद कमी आयी है, दूसरी तरफ घने जंगल बादलों को आकर्षित करते थे जिससे खूब वर्षा होती थी उसमें कमी आयी है। शहरी–करण औद्योगिकरण, सड़क निर्माण आदि के कारण जंगलों और वृक्षों के अंधाधुंध कटाई से भूमिगत् जल में लगातार कमी हो रही है। आवश्यकता है काटे गए वन और वृक्ष की क्षति पूर्ति के लिए नए वन और यथा संभव वृक्षारोपण किए जाएं ताकि भूमिगत् जलापूर्ति निरंतर चलती रहे।

जल संरक्षण के लिए सिर्फ सरकार को ही प्रयास नहीं करना है बल्कि प्रत्येक नागरिक को सजग और प्रयत्नशील होना पड़ेगा। बच्चों और महिलाओं में जागरुकता लानी होगी। स्नान करते समय झरना यानि शावर या बाथ टब के बजाय बाल्टी में पानी भरकर नहाने से अपेक्षाकृत कम जल खर्च होता है। ब्रश करते समय या दाढ़ी बनाते समय यदि नल बंद रखें, बर्तन धोते समय भी बाल्टी या टब का प्रयोग करने एवं बर्तन धोए गए पानी को गृहवाटिका आदि में प्रयोग जल संचयन के छोटे पर कारगर उपाय हैं। इन उपायों से जल की बहुत बड़ी क्षति रोकी जा सकती है। शौचालय में लगी फ्लश की टंकी में प्लास्टिक की बोतल में रेत भरकर रख देने से प्रत्येक फ्लश के समय 'एक लीटर' जल बचाने का कारगर उपाय उत्तराखंड जल संस्थान ने बताया है। इसे हर घर में अपनाया जा सकता है। वर्षा ऋतु के समय प्रत्येक घर में छत पर के पानी को पक्के टंकियों में जमा करने की व्यवस्था जल व्यवस्थापन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

घरों, मुहल्लों, सार्वजनिक पार्कों, स्कूलों, अस्पतालों, दुकानों आदि के नल टूटे, ढीले या खुले छोड़ दिए जाते हैं जिससे अनजाने में ही प्रतिदिन हजारों लीटर जल बेकार हो जाता है। इस बर्बादी को रोकने के लिए लोगों को जल संचयन के प्रति जागरुक करना होगा। इसके अलावा नलों की चोरी एवं तोड़–फोड़ को दण्डात्मक अपराध घोषित किया जाना चाहिए ताकि लोग दण्ड के भय से नलों को क्षतिग्रस्त न करें। आस–पास बहने वाली नदियों की नियमित सफाई की जानी चाहिए। नगरों–महानगरों से निकलने वाला गंदा पानी नदियों को प्रदूषित करता है। आज सैकड़ों नदियों नगर वासियों के गंदगी को ढोते–ढोते बदबूदार नाले में बदल चुकीं। गंगा–यमुना

जैसी सदानीरा पवित्र नदियाँ भी भयंकर रुप से प्रदुषित हो चुकी हैं। हलाकि नमामि गंगे परियोजना नर्मदा पूजन, यमुना स्वच्छता जैसी परियोजनाओं के माध्यम से इन प्रदूषणों से मुक्ति की राह तलाशी जा रही है परंतु ये सभी प्रयास तभी संभव होंगे जब जन साधारण में इन परियोजनाओं के अंतर्गत किए जाने वाले क्रिया कलापों में सहयोग की भावना होगी।

विज्ञान की मदद से आज समुद्र के खारे पानी को पीने योग्य बनाया जा रहा है। गुजरात में द्वारिका आदि नगरों के प्रत्येक घर में घरेलू कार्यो के लिए खारे जल के प्रयोग से शुद्ध जल का संरक्षण किया जा रहा है ताकि अधिक से अधिक लोगों को पीने का शुद्ध पानी मिल सके। भारत में विश्व की 16 प्रतिशत आबादी रहती है जबकि इसके पास विश्व की 2 प्रतिशत भूमि तथा 4 प्रतिशत पानी के स्रोत हैं। भारत में 83 प्रतिशत पानी का प्रयोग कृषि के लिए होता है। हमारे देश में औसतन कुल 100 घंटे बरसात होती है। इन्ही 100 घंटो में होने वाली वर्षा के पानी का संचयन, कुशल प्रयोग एवं सुप्रबंधन द्वारा ही संभव है। देश के अधिकांश क्षेत्र में भूजल का स्तर नीचे जा रहा है वहीं कुछ भाग जल भराव से ग्रसित है। भूजल का स्तर आमतौर पर 20–60 से.मी. प्रति वर्ष नीचे जा रहा है। नलकूपों की गहराई मानव–जीवन के लिए संकट बनता जा रहा है, बोर एवं सबमर्शिबल पम्प इस समस्या को बढ़ाने में आग में घी की तरह है। बोर एवं पम्प लगातार भूमि से पानी खींचने का कार्य करती है। पुनर्जलभरण की प्रक्रिया इसमें शामिल नहीं है।

कृषि में जल का उचित व्यवस्थापन हेतु भूमि समतलीकरण एक प्रमुख प्रक्रिया है। प्रत्येक किसान किसी न किसी यंत्र से भूमि समतलीकरण तो करता है लेकिन आम यंत्रो में समतलीकरण की क्षमता ट्रैक्टर चालक की निपुणता पर निर्भर होती है, जिसके कारण अधिकांशतः समतलीकरण प्रभावी नहीं हो पाता है। लेजर लेवलर द्वारा भूमि समतलीकरण एक नयी तकनीक है, जिसमें ट्रैक्टर चालक की भूमिका नगण्य होती है। एक अध्ययन के दौरान देखा गया है कि, लेबर द्वारा समतल किए गए खेतों में धान की फसल में 8 से 10 एवं गेहूँ के खेतों में 10 से 20 प्रतिशत तक पानी की बचत की जा सकती है। गेहूँ के फसल में पानी की बचत के साथ–साथ 10 से 15 प्रतिशत तक उत्पादन में भी वृद्धि होती है। इसलिए यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि, लेयर समतली करण जल संचयन एवं उत्पादन दोनों में वृद्धि करता है।

धान, गेहूँ की लाभ प्रदता दिनों दिन कम होती जा रही है क्योंकि इन फसलों को उगाने में खर्च काफी आता है परंतु आय कम होती है एवं इनके कृषि प्रक्रिया में जल की अत्यधिक आवश्यकता होती है अतः किसानों को सब्जियों तथा फलों की खेती की तरफ ध्यान देना चाहिए, क्योंकि इन फसलों में ड्रीप द्वारा बूंद–बूंद अर्थात् टपक सिंचाई से अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है। मिट्टी की बनावट के अनुसार पानी की मात्रा 2 से 20 लीटर प्रति घंटा तक रखी जा सकती है। बूँन्द–बूँन्द सिंचाई से 40 से 50 प्रतिशत पानी का बचाव किया जा सकता है। वहीं पौधों को दिए जाने वाले पानी का 80 प्रतिशत उपयोग हो पाता है। उत्पादन में 20 से 25 प्रतिशत तक की वृद्धि की जा सकती है। छोटे स्तर पर घड़े या बोतलों के सहारे बूँद–बूँद सिंचाई की जा सकती है। टपक सिंचाई का एक लाभ यह भी है कि, शुष्क अथवा अर्धशुष्क इलाकों में पाए जाने वाले भूमिगत खारे पानी का उपयोग किया जा सकता है। टपक सिंचाई के माध्यम से मल–जल का भी उपयोग आसानी से किया जा सकता है क्योंकि इस पद्धति से किसानों को मल–जल छूने या कोई अन्य स्पर्श की आवश्यकता नहीं होती है।

जहाँ बूँद गिरे वहीं उसे समेट लेना आज की आवश्यकता बन गयी है अतः "खेत का पानी खेत में" "गाँव का पानी गाँव में" नारे को सार्थक करने के लिए पुराने तलाबों की खुदाई एवं नवीनीकरण द्वारा गाँव के व्यर्थ जाने वाले पानी को संचित किया जा सकता है। ऐसी प्रक्रिया भू–जल स्तर को उपर उठाने में सहायक सिद्ध हो सकती है। गिरते हुए भू–जल स्तर को सुधारने के लिए वर्षा अथवा नहर से मिलने वाले जल को भूमि के अंदर (समाहित) होने की व्यवस्था करनी पड़ेगी।

जिन क्षेत्रों में भूमिगत् जल या सिंचाई की अन्य सुविधा की कमी हो वहाँ कम सिंचाई में होने वाली फसल लगाना उचित है जैसे बाजरी, रागी, दलहनी तिलहनी फसल इत्यादि, धान की खेती में श्री विधि अपनाकर जल खर्च में कटौती की जा सकती है। पलवार यानि मल्चिंग से भी खेतों की नमी संरक्षित की जा सकती है। मल्चिंग के लिए काली पॉलीथीन सीट, खरपतवार, अनाज की भूसी आदि का प्रयोग किया जा सकता है। इससे कम जल खर्च से अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। आस–पास में बहने वाली नदी, नालाओं पर जगह–जगह अवरोधक निर्माण कर जल संचयन किया जा सकता है। जल अवरोधक (चेक डैम) के निर्माण से जल की गति

धीमी होती है और कई स्थान पर जल जमाव होता है जिससे जल आस–पास की भूमि में समाहित (रिचार्ज) होता है।

आदरणीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने कहा है ''पर ड्राप मोर क्रोप'' यानि पानी के हरेक बूँद को बचाना और कृषि में उचित उपयोग ही इस उक्ति को सार्थक बना सकता है। किसान भाई बहनों को एक सलाह दी जाती है कि, खेतों में मेड़ की जगह नालियों का निर्माण करें जिससे उन नालियों में जल जमाव से जल का पुनर्भरण हो सके। मेड़ों पर घास लगाएं ताकि मेड़ मजबूत रहें एवं वर्षा जल को खेतों में रोक सके, इससे जहाँ खेतों में जल पुनर्भरण होता है वहीं उपजाऊ मिट्टी बहकर नहीं जाती है। खेतों में ढलान की उल्टी दिशा में जुताई करनी चाहिए इससे जुताई से बनने वाली गहराईयों में जल ठहरता है और खेतों में नमी बनी रहती है।

इस प्रकार देश के हरेक नागरिक की प्रथम जिम्मेवारी है कि, वह जल व्यवस्थापन में अपना सहयोग करे।

**जल है तो कल है, कल का संबल जल है।**

# कृषि का वर्तमान स्वरुप, नैसर्गिक खेती की आवश्यकता एवं जैविक खाद बनाने की देशी विधियां

**आर.के. झाड़े[1], ए.के. वर्मा[2], पी.एल. अम्बुलकर[1], डी.सी. श्रीवास्तव[1], एस.डी. सावरकर[1] एवं सुरेंद्र पन्नासे[1]**
[1]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञानं केंद्र, छिंदवाड़ा, मध्यप्रदेश–480003
[2]भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान–334006

आज के इस परिवेश में जब सभी तरफ रसायनों का अंधाधुंध प्रयोग हो रहा है, सभी को उत्पादन बढ़ाने की ललक लगी हुयी है। उत्पादन बढ़ाने के लिए अनुमानित मात्रा से अधिक मात्रा में रसायनों का प्रयोग किया जा रहा है, परन्तु रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग से उत्पादन को बढ़ाने की होड़ में हमने भूमि की उर्वरा शक्ति की ओर ध्यान ही नहीं दिया, लगातार अधिक मात्रा में रसायनों के प्रयोग से हमारी भूमि शक्तिहीन हो चुकी है। आज हमने कीटनाशकों का भी अंधाधुंध प्रयोग अपने खेतों में किया है, जिसके परिणामस्वरूप भूमि के साथ साथ फसल उत्पाद में भी रसायनों का स्तर बढ़ गया है, कीटनाशकों के प्रयोग की निर्धारित मात्रा को बढाकर उपयोग करने से हमने हानिकारक कीटों की प्रतिरोधक क्षमता का विकास किया है। इसीलिए आज के इस दौर में उत्पाद तो भरपूर है लेकिन उक्त उत्पाद में गुणवत्ता का स्तर नहीं के बराबर बचा हुआ है, आज हमारे द्वारा उत्पादित अनाज, फल, सब्जियां आदि विषाक्तता के चरम स्तर को छूने की कगार पर आ पहुंची है। कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से हमने कृषि हेतु लाभकारी जीवों की जनसँख्या में कमी कर दी है, मित्र कीटों, भौरों और मधुमक्खियों की प्रजातियॉ जो परागण की सीधी प्रक्रिया कर हमको उत्पाद प्रदान करने में 70 प्रतिशत से ज्यादा की भूमिका निभाती है, जिसे हम प्रमुख परागणकर्ता (मेजर पॉलीनेटर) की संज्ञा देते है, या तो पलायन कर गयी है या खत्म होने की कगार पर है, जो की कृषक जगत में बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण घटना है। वैज्ञानिकों के अनुसन्धान के आधार पर यदि मधुमक्खियों की प्रजातियों का इस पृथ्वी से विलुप्तीकरण हो गया तो मनुष्य का जीवन अधिकतम चार वर्ष ही रहेगा।

रसायनों के अधिकतम प्रयोग के परिणाम हमें कृषक जगत में तो प्रत्यक्ष रूप से दिखाई दे ही रहे है, साथ ही मनुष्य जीवन में भी इसका कुप्रभाव पिछले दो दशकों से वृहद् रुप धारण कर चुका है। पुराने समय में हम नदियों और तालाबों का स्वच्छ जल पीकर भी स्वस्थ रहते थे लेकिन आज मिनरल वाटर ग्रहण करके भी बीमार पड़ रहे है। पहले हम ढेले वाला नमक और कोल्हू वाला तेल उपयोग करके भी हष्ट–पुष्ट रहते थे लेकिन आज आयोडीन युक्त नमक और डबल रिफाईन्ड तेल का प्रयोग हमें रोगों से ग्रसित कर रहा है। ऐसा क्या हो गया है की पहले के समय में सिर्फ नाड़ी की जांच से हमारी बीमारियों का पता लग जाता था लेकिन आज चिकित्सा विज्ञान की इतनी तरक्की होने से भी हमारी बीमारी का आसानी से पता नहीं लगता और हम कैंसर जैसी भयावह बीमारी की चपेट में आ रहे है, इस ओर चिंतन करने की आवश्यकता है।

भारत में हरित क्रांति का अवतरण होने से उन्नत किस्मों और रसायनों का उपयोग कर खाद्यान उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई है, लेकिन मृदा स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा है। कृषि उत्पादों के लगातार घटते हुए गुणवत्ता के स्तर को देखते हुए, आवश्यकता है की उत्पादन के साथ साथ उत्पाद के गुणधर्मों की तरफ भी ध्यान दिया जाये। विश्व व्यापार संगठन के अनुसार व्यापार का वैश्वीकरण होने से भारत को कृषि बाजार की प्रतियोगिता में आने के लिए और भी बेहतर प्रयास करना होगा। इस प्रकार भविष्य में उत्पाद मात्रा की अपेक्षा उत्पाद गुणवत्ता का विशेष महत्व होगा। आज आधुनिक कृषि की विभिन्न चिंताए एवं समस्याओं ने अनेक नयी अवधारणाओं को जन्म दिया है। जैसे जैविक खेती, प्राकृतिक खेती, नैसर्गिक खेती, जैविक–सक्रिय कृषि एवं परिस्थिति कृषि आदि। इन सभी कृषि क्रियाओं का तात्पर्य फिर से पारिस्थितिकीय सामंजस्य को पुनर्स्थापित करने से है, जिस प्रकृति को छोड़ कर विपरीत कृषि कार्य किये उसी प्रकृति की ओर पुनर्गमन करने से है। अतः कृषि और उद्यानिकी के क्षेत्र में फिर से नैसर्गिकता, प्राकृतिकता, गुणवत्ता और टिकाऊपन के साथ मृदा के स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए एक वैकल्पिक कृषि क्रिया को अपनाने की आवश्यकता अनुभव हो रही है, जिस हेतु सिर्फ जैविक खेती ही एक मात्र विकल्प है।

## जैविक खेती

जैविक खेती प्राकृतिक तरीके से खेती का एक उदाहरण है, जिसमें उर्वरकों या कीटनाशकों के रूप में किसी भी रासायनिक पदार्थों का उपयोग नहीं किया जाता। जैविक खेती केवल जैविक अपशिष्ट, खेतों के अपशिष्ट, पशु अपशिष्ट, देशी व कार्बनिक खाद आदि जैसे प्राकृतिक खादों का उपयोग करके की जाती है। यह मूल रूप से मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने के साथ उसे अच्छा और उपजाऊ बनाने में भी मदद करती है। जैविक खेती में फसल चक्र, मिश्रित फसल और जैविक कीट नियंत्रण आदि जैसे कुछ प्रक्रियाओं का पालन किया जाता है। यह एक ऐसी पद्धति है, जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशियों के स्थान पर जीवांश खाद, कंपोस्ट, गोबर की खाद, हरी खाद, जीवाणु कल्चर, जैविक खाद व बायो एजेंट जैसे जैव कीटनाशक आदि का उपयोग किया जाता है जिससे न केवल भूमि की उर्वरा शक्ति लम्बे समय तक बनी रहती है, बल्कि पर्यावरण भी प्रदूषित नहीं होता तथा कृषि लागत घटने व उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ने से कृषक को अधिक लाभ भी मिलता है। जैविक खेती वह सदाबहार कृषि पद्धति है, जो पर्यावरण की शुद्धता, जल व वायु की शुद्धता, भूमि का प्राकृतिक स्वरूप बनाने वाली, जल धारण क्षमता बढ़ाने वाली, रसायनों का उपयोग आवश्यकता अनुसार कम से कम करते हुए कृषक को कम लागत से दीर्घकालीन स्थिर व अच्छी गुणवत्ता वाली पारम्परिक पद्धति है।

## उद्देश्य

इस प्रकार की खेती करने का मुख्य उद्देश्य यह है कि रसायनों व उर्वरकों का उपयोग न हो तथा इसके स्थान पर जैविक उत्पाद का उपयोग अधिक से अधिक हो। जैविक खेती का प्रारूप निम्नलिखित प्रमुख क्रियाओं के क्रियान्वित करने से प्राप्त किया जा सकता है।

1. कार्बनिक खादों का उपयोग।
2. जैव उर्वरकों का प्रयोग।
3. फसल अवशेषों का उचित उपयोग।
4. जैविक तरीकों द्वारा कीट व रोग नियंत्रण।
5. फसल चक्र में दलहनी फसलों को अपनाना।
6. मृदा संरक्षण क्रियाएं अपनाना।

## कम्पोस्ट

कम्पोस्ट एक प्रकार की खाद है जो जैविक पदार्थों के अपघटन एवं पुनःचक्रण से प्राप्त की जाती है। यह जैविक कृषि का मुख्य घटक है। कम्पोस्ट बनाने का सबसे सरल विधि है – जैव पदार्थों (जैसे पत्तियाँ, घांस–फूस व खाद्य अपशिष्ट आदि) का ढेर बनाकर कुछ समय तक प्रतीक्षा करना ताकि इसका विघटन हो जाय। विघटन में कुछ सप्ताह या महीने लग सकते हैं। उसके बाद वह ह्यूमस में बदल जाता है। उचित हवा संचार सुनिश्चित करने हेतु नियमित रूप से मिश्रण को पलटना और पानी के उपयोग द्वारा नमी बनाये रखना विघटन प्रक्रिया में सहायक होते हैं। कम्पोस्ट खाद फसल व पौधों के पोषक तत्वों में उच्च जैविक उर्वरता संचार करता है, मिट्टी की भौतिक दशा में सुधार करता है, खेत में अपशिष्ट प्रभाव को कम करता है और रोगजनकियों को खत्म करता है।

## कम्पोस्ट खाद तैयार करने की विधि

कम्पोस्ट के लिए गड्ढा खोदें, जो तीन फुट लंबा व तीन फुट चौड़ा होना चाहिए। गड्ढे में पहले चारों तरफ पानी का छिड़काव कर उसे नम कर लें और उसमें पत्ते, पौधे, रसोई व घर का अन्य गलने योग्य कचरा 30 से. मी. उंचाई तक भर दें। फसल अवशेष, पशु और घरेलू कार्बनिक अपशिष्ट को गड्ढे में डाल दिया जाता है, इस पर एक तह गोबर की बिछा दें। उसको उचित नमी के साथ 4 से 5 महीने तक विघटित होने के लिए छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार फसल में उपयोग के लिए खाद तैयार है। अपशिष्ट पदार्थो को छाया के नीचे उपरोक्त तरीके से विघटित होने के लिए छोड़ दिया जाता है। दोनों तरीकों से खाद का उत्पादन होता है, लेकिन इस प्रक्रिया में आप देखेगे की खाद में पोषक तत्वों की गुणवत्ता कम है। हालाँकि प्रयोजनपूर्ण तरीकों से उच्च गुणवत्ता वाले खाद का निर्माण करने के लिए नियोजित किया जा सकता है। जो किसानों को महंगा रासायनिक उर्वरक का उपयोग किए बिना फसल की पैदावार में वृद्धि कर सकती है। इस प्रकार की खाद को समृद्ध खाद कहा जाता है।

## कम्पोस्ट खाद कैसे कार्य करता है

कम्पोस्ट खाद प्रभावी तब होता है, जब आप ऐसी परिस्थिति बनाते है, जो सूक्ष्म जीवों के नाम पर मिट्टी में छोटे–छोटे जीवों के विकास का समर्थन करते हैं। ये बैक्टेरिया और कवक हैं, इनको केवल एक सूक्ष्मदर्शी का उपयोग कर के ही देखा जा सकता है। यह सूक्ष्म जीव पौधे और पशु अपशिष्ट पदार्थो के विघटन के लिए आवश्यक है। वे पौधे और पशु के कचरे के टूटने के दौरान गर्मी का उत्पादन करते है। कुछ दिनों के बाद, तैयार कम्पोस्ट ढेर गर्म हो जाएगा और जब उसको खोला जाएगा तो भाप भी दिखाई दे सकती है। कचरे के इस

रूप में विघटित होने पर वे ऐसे पदार्थो में पोषक तत्वों को छोड़ते है, जिनका उपयोग फसल और पौधों में किया जा सकता है।

## पंचगव्य–पौधों में अमृत की तरह काम करने वाला खाद

पंचगव्य एक अत्यधिक प्रभावी जैविक खाद या प्राकृतिक सामग्री से बनी हुई जैविक विकास उत्तेजक औषधि है, जो पौधे के विकास को बढ़ाने के साथ ही मिट्टी के उपयोगी जीवाणुओं की रक्षा करता है, और उनकी प्रतिरक्षा क्षमता को बढ़ाता है। पंचगव्य का अर्थ है गाय से प्राप्त पाँच पदार्थों का घोल अर्थात गोमूत्र, गोबर, दूध, दही और घी के मिश्रण से बनाये जाने वाले पदार्थ को पंचगव्य कहते हैं। प्राचीन समय में इसका उपयोग खेती की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के साथ पौधों में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए किया जाता था।

## विशेषताएं

पंचगव्य की विशेषताओं में –भूमि में सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि, भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि, फसल उत्पादन एवं उसकी गुणवत्ता में वृद्धि, भूमि में हवा व नमी को बनाये रखना, फसल में रोग व कीट का प्रभाव कम करना, स्थानीय संसाधनों पर आधारित, सरल एवं सस्ती तकनीक पर आधारित, आदि प्रमुख हैं।

## पंचगव्य बनाने की विधि

प्रथम दिन 2.5 किग्रा. गोबर व 1.5 लीटर गोमूत्र में 250 ग्राम देशी घी अच्छी तरह मिलाकर मटके में डाल दें व ढक्कन अच्छी तरह से बंद कर दें। अगले तीन दिन तक इसे रोज हाथ से हिलायें। अब चौथे दिन सारी सामग्री को आपस में मिलाकर मटके में डाल दें व फिर से ढक्कन बंद कर दें। अगले दिन इसे लकड़ी से हिलाने की प्रक्रिया शुरू करें और सात दिनों तक प्रतिदिन दोहराएं। इसके बाद जब इसका खमीर बन जाय और खुशबू आने लगे तो समझ लें कि पंचगव्य तैयार है। इसके विपरीत अगर खटास भरी बदबू आए तो हिलाने की प्रक्रिया एक सप्ताह और बढ़ा दें। इस तरह पंचगव्य तैयार होता है। दस ली. पानी में 250 ग्रा. पंचगव्य मिलाकर किसी भी फसल में किसी भी समय उपयोग कर सकते हैं। इसे खाद, बीमारियों से रोकथाम, कीटनाशक तथा वृद्धिकारक उत्प्रेरक के रूप में उपयोग कर सकते हैं। इसे एक बार बना कर 6 माह तक उपयोग कर सकते हैं। इसको बनाने की लागत रु. 70/– प्रति लीटर आती है।

## पंचगव्य की प्रयोग विधि

पंचगव्य का प्रयोग आप गेहूँ, मक्का, बाजरा, धान, मूंग, उड़द, कपास, सरसों, मिर्च, टमाटर, बैंगन, प्याज, मूली, गाजर, आलू, हल्दी, अदरक, लहसुन, हरी सब्जियाँ, फूल पौधे, औषधीय पौधे आदि तथा अन्य सभी प्रकार के फल पेड़ों एवं फसलों में महीने में दो बार कर सकते हैं। पंचगव्य को बीज उपचार द्वारा, जड़ उपचार द्वारा, फल पेड़–पौधों और फसल पर छिड़काव करके, सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग किया जा सकता है।

## जैविक खाद के लाभ

जैविक खाद के उपयोग से पैदावार अधिक होती है साथ ही भूमि के उपजाऊ शक्ति भी कम नही होती। इससे सूक्ष्म तत्वों की कमी पूरी होती है जो फसलों के लिए अति आवश्यक है। इसके उपयोग से मिट्टी की संरचना में सुधार होता है जिससे उसकी उपजाऊ शक्ति बढ़ती है। जैविक खाद से मिट्टी में लाभदायक सूक्ष्म जीवों की संख्या बढ़ती है जो फसलों को उपयोगी तत्व उपलब्ध करवाते हैं। जैविक खाद के उपयोग से जल व वायु प्रदूषण नहीं होता है। सामान्य जीवन के लिए भी लाभकारी है।

**हिन्दी देश की गंगा है।**
**देश को भाषायी दृष्टि से जोड़ने के लिए हिन्दी ही एक मजबूत कड़ी है।**

**-श्रीमती इन्दिरा गांधी**

# जैव-उर्वरकों के उपयोग का कृषि में महत्व

**आर. सी. साँवल[1], दयानन्द[2], कु. रेखा रैगर[3], सी., एल. मीना[4]**
वरिष्ठ अनुसंधान अध्येयता (मृदा विज्ञान)[1], कृषि विज्ञान केन्द्र, आबूसर[2], स्नातकोतर छात्रा[3],
स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि, विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी[4], केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

आधुनिक कृषि उत्पादन तकनीकी में रसायनिक उर्वरकों के साथ साथ कीटनाशक व खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग में भी अत्यधिक वृद्धि हुई है, परन्तु रसायनिक उर्वरकों के असन्तुलित प्रयोग से फसल उत्पादकता में ठहराव एवं मृदा उर्वरता में निश्चित रूप से गिरावट आयी है। रसायनिक उर्वरकों का उचित उपयोग करके प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। ये भी प्रमाण है कि रसायनिक उर्वरकों के अधिक प्रयोग से भूमि की सतह पर पोषक तत्वों का असन्तुलन हो गया है और भूजल मे भी इनकी मात्रा काफी बढ़ गयी है, जिससे स्वास्थय संकट उत्पनन होने का खतरा भी बढ़ गया है।

हमें पर्यावरण सुरक्षा व मृदा उत्पादकता को ध्यान में रखते हुए कृषि में रसायनों के प्रयोग को कम करके पर्यावरण मित्र खेती पर बल देना चाहिए। अतः मृदा उत्पादकता के उच्च स्तर को बनाये रखने के लिए अकार्बनिक एवं कार्बनिक उर्वरकों का समुचित प्रयोग करने के साथ साथ **''जैव–उर्वरकों''** का प्रयोग अत्यन्त आवश्यक व लाभदायक हो गया है।

**जैव उर्वरक / जीवाणु खाद क्या है ?** जैव उर्वरक सूक्ष्म जीवियों के बने होते हैं जो मृदा उर्वरता और पादप पोषण को बढाते हैं। सूक्ष्म जीवों में मुख्य रूप से जीवाणु, कवक, नील हरित शैवाल इत्यादी हैं। ये जीव पौधों के साथ सहजीवी या असहजीवी रूप में रहकर वायुमण्डलीय नत्रजन को मृदा में स्थिर करने और जमीन में मौजूद अघुलनशील पोषक तत्वों को घुलनशील बनाकर पौधो के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाने का काम करते हैं।

कृषि क्षेत्र में जैव कल्चर को सामान्य वायु मण्डलीय सूक्ष्म जीवाणओं या सैलुलोज को विघटित करने वाले सूक्ष्म जीवों की जीवित कोशिकाओं द्वारा तैयार किया जाता है।

**जैव उर्वरकों के प्रकारः**– जैव उर्वरक कम खर्चीले व सस्ते हैं एंव मुख्य रूप से उपयोग में लिए जाने वाले जैव उर्वरको में राजोबियम कल्चर, एजोटो बेक्टर, पी.एस. बी. कल्चर, नील हरित शैवाल, एजोला इत्यादी हैं।

1. **राजोबियम कल्चरः**– सभी दलहनी फसलों के लिए यह बहुत लाभप्रद जीवाणु हैं जो दलहनी फसलों की जड़ो में मूलरोमों के जरिए प्रवेश कर जाते हैं और जड़ों पर ग्रंथियो (गांठो) बना लेते हैं। इन ग्रंथियो में मौजुद लैगहीमोंग्लोबिन नामक लाल रंग का द्रव्य वायुमण्डल की स्वतंत्र नाइट्रोजन को अमोनिया में बदलकर नत्रजन का मृदा में स्थिरीकरण करते है। इन ग्रंथियों में मौजूद राइजोबियम जीवाणु वायुमण्डल की स्वतंत्र नाइट्रोजन को यौगिकीकृत कर पौधों को नाइट्रोजन उपलब्ध कराते हैं। इसलिए इन फसलों को नाइट्रोजन की अधिक मात्रा में आवश्यकता नही पड़ती है।

यदि दलहनी फसलों को राजोबियम कल्चर से अपचारित करते है तो सूक्ष्म जीवाणु 50–100 किलो वायुमण्डलीय नत्रजन को मृदा में स्थिर करते है। जिससे 10 से 60 प्रतिशत तक उपज में वृद्धि हो जाती है तथा मृदा की भौतिक दशा में भी सुधार होता है।

2. **एजोटोबेक्टर कल्वरः**– एजोटोबेक्टर सभी अनाज वाली फसलों के लिए बहुत लाभप्रद जीवाणु हैं। इस जैव उर्वरक में उपस्थित जीवाणु पौधों के साथ असहजीवी रूप में रहकर वायुमण्डलीय नत्रजन को मृदा में स्थिर करने और पौधों के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाने का काम करते हैं। जिनको गेंहू, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का, सरसों तथा सब्जीवाली फसलों में काम में लेते है। एजोटोबेक्टर कल्चर के प्रयोग से गेंहू में 30 प्रतिशत, टमाटर में 29 प्रतिशत, चावल में 23 प्रतिशत तथा बैंगन में 62 प्रतिशत तक उपज बढ़ी है।

3. **फास्फेट विलेयक जैव उर्वरक (पी.एस.बी. कल्चर)**:– पौधों की उचित वृद्धि हेतु नत्रजन के साथ फास्फोरस भी सबसे आवश्यक पोषक तत्व है। इस पोषक तत्व की आपूर्ति सुपर फास्फेट या डी.ए.पी. उर्वरक से करते हैं। जिसका मात्र 20–25 प्रतिशत भाग ही घुलनशील अवस्था में पौधो को उपलब्ध हो पाता है। शेष

75 से 80 प्रतिशत भाग भूमि में अघुलनशील अवस्था में फास्फोरस योगिकों के रूप में स्थिर हो जाता है जिसे पौधे ग्रहण नही कर पाते है। फास्फेट विलेयक जीवाणु मृदा में मौजुद अघुलनशील फास्फेट को घुलनशील अवस्था में बदलकर पौधों को उपलब्ध करा देते हैं। ताकि खेत में उगाई जाने वाली फसल इस फास्फोरस का उपयोग कर सके।

**4. नीले हरे शैवाल जैव उर्वरकः**— नीले हरे शैवाल उच्च नाइट्रोजन बन्ध क्षमता वाले निम्न श्रेणी के पौधे होते हैं जो ज्यादातर नम तथा अल्प क्षारीय क्षैत्रों में पाये जाते हैं। इन शैवालों की लगभग 100 प्रजातियां वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करती है। धान व केला की खेती के लिए यह बहुत उपयुक्त है।

**5. एजोला जैव उर्वरकः**— यह एक जल में तैरने वाला जल फर्न है जो नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करता है। भारत में एजोला पिनेटा नामक प्रजाति ही आमतौर पर पायी जाती है जिसे धान की फसलों में उगाया जाता है। इसमें 3.4 प्रतिशत नाइट्रोजन एंव कई कार्बनिक पदार्थ होते है जो भूमि की उर्वरक शक्ति को बढ़ाते है। एजोला को धान की पौध लगाने से पहले हरी खाद के रूप में खेत में डाला जाता है और मिट्टी में दबा दिया जाता है। परिक्षणों से सिद्ध हो चुका है कि 10 टन ताजे एजोला प्रति हेक्टेयर को भूमि में मिलाने से 25—30 कि. ग्रा. नाइट्रोजन की बचत होती है।

**जैव उर्वरकों की प्रयोग विधिः**— निम्नविधियों द्वारा जैव उर्वरक प्रयोग में लाए जाते हैः—

(1) बीजोपचार विधि :— दलहनी तथा तिलहनी फसलों तथा आलू, लोकी, भिण्डी, करेला, तौरई, लहसुन व टिण्डी जैसी सब्जियों में बीजोपचार द्वारा जैव उर्वरको का प्रयोग किया जाता है।

(2) भूमि में छिड़ककर :— इस विधि में जैव उर्वरकों के पैकेटों को 25 कि.ग्रा. गोबर सड़ी हुई खाद और 25 किग्रा नम मिट्टी के साथ मिलाकर पौध रापण से पहले छिड़ककर मिला देते है।

(3) जड़ों को जैव उर्वरकों के घोल में डुबोकर :— टमाटर, बैंगन, प्याज, मिर्च जैसी शाकीय फसलों जिनकी नर्सरी में पहले पौध तैयार की जाती है। जीवाणुखाद के एक पैकेट को एक लीटर पानी में घोलकर नर्सरी से उखाड़े गये पौधो को 2—3 मिनट तक डुबोकर रोपाई की जाती है।

## सावधानियाँ

1. जैव उर्वरकों को खरीदते समय पैकेट पर लिखी अन्तिम तारीख अवश्य देखे।
2. प्रत्येक दलहनी फसल में एक विशेष प्रजाति का कल्चर ही प्रयोग करें। अन्य फसल का कल्चर प्रयोग करने पर जड़ों में गांठे नहीं बनेगी और कल्चर का लाभ फसल को नही होगा।
3. पैकेटो को बोवाई के पूर्व ही खोलना चाहिए एवं बीज उपचार करने के बाद तुरन्त बो देना चाहिए या छायादार स्थान पर रखकर कुछ देर बाद बो देवें।
4. यदि बीजों को कीटनाशक एवं फंफूदनाशक रसायनों से उपचारित किया जाना हो तो पहले फंफूदनाशक फिर कीटनाशक और अन्त में राइजोबीयम कल्चर के क्रम में ही उपचारित करना चाहिए।

अतः जैव उर्वरकों के प्रयोग से दलहनी व खाद्यान फसलों से अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए बीजों को उचित कल्चर से उपचारित करके ही बुवाई करें। जैव उर्वरकों के नियमित प्रयोग से खेत की उर्वरा शक्ति के साथ—साथ प्रदूषण और मिट्टी अपरदन की समस्याओं से छुटकारा तो मिलेगा ही, साथ ही साथ कृषि पैदावार भी बढ़ेगी।

# बूंद-बूंद सिंचाई साधनों की देखरेख एवं रखरखाव

**कोमल शेखावत[1] अनिल कुमार[1] स्वर्णलता कुमावत[1] शीतल यादव[2]**
अनुसंधान अध्येता[1], आनुवंशिकी एव पादप प्रजनन विभाग, अनुसंधान अध्येता[2], मृदा विज्ञान
कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
komalshekhawat2506@gmail-com

कृषि एवं सामाजिक जीवन में जल की बचत करना आज के युग की पहली प्राथमिकता है। कृषि में जल बचत के लिए बूंद–बूंद सिंचाई तकनीक को अपनाया जा रहा है। इस तकनीक की खोज इजराईल में हुई तथा अब इसका प्रयोग पूरी दुनिया में हो रहा है। इस तकनीक के उपयोग से 70 प्रतिशत से भी अधिक पानी की बचत की जा सकती है। ड्रिपर से पानी 4 लिटर प्रीति घंटा की दर से निकलता है। बूंद–बूंद सिंचाई विधि एक तकनीक पर आधारित है जिसमें आड़े व तिरछे पाईप एवं अन्य उपकरणों की सहायता ली जाती है। इन उपकरणों की देखरेख और इनके रख–रखाव पर नियमित ध्यान देने की आवश्यकता होती है अन्यथा यह उपकरण खराब हो सकते हैं और इससे फसल पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है।

फसल को बूंद–बूंद विधि से पानी देने से पूर्व निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक होता है।

1 पौधों को पानी देने के लिए बूंद–बूंद सिंचाई उपकरण शुरू करने से पूर्व बैक वॉश करना चाहिए।

2 फिल्टर के ड्रेन वाल्व को खोलकर जाली में अटका हुआ कचरा निकाल देना चाहिए।

3 वैसे की स्ट्रेनर (जाली) को बाहर निकाल कर हाथो से साफ कर देना चाहिए।

4 सब ड्रिपर्स सही तरीके से चालू है अथवा नही यह पहले से ही देख लेना चाहिए।

5 सब स्थानों पर पानी मिल रहा है, सही मात्रा में है अथवा नहीं के साथ एवं रिसाव संबंधी निरीक्षण पर भी ध्यान देना अति आवश्यक है।

## सेंड फिल्टर

प्रत्येक सप्ताह सेंड फिल्टर का ढक्कन खोलकर उसमें जमा सफेद रेत को हल्के हाथों से धो कर साफ कर देना देना चाहिए और बैक वॉश कर देना चाहिए। यह कार्य करते समय फिल्टर एलाइमेंट को धक्का नहीं लगने देना चाहिए अन्यथा रेत सीधी स्क्रीन फिल्टर में जा सकती है। फिल्टर में 3 से 4 प्रतिशत रेत रखनी आवश्यक है। यह रेत विशिष्ट तरीके से निर्धारित आकार में तैयार की गई होती है।

सेंड फिल्टर

## स्क्रीन फिल्टर

रोजाना ड्रिप सिस्टम चालू करने से पहले फिल्टर में से जाती पानी की धार को हल्के हाथ से साफ करना चाहिए। प्रत्येक 15 दिनों में स्क्रीन फिल्टर का ढक्कन खोलकर अंदर के फिल्टर एलीमेंट साफ करना जरूरी है। सैंड फिल्टर से नही छनने वाला बारीक कचरा स्क्रीन फिल्टर की जाली में अटक जाता है और धीरे–धीरे इस कचरे के जमा होने से जाली पर एक परत बन जाती है। इस परत के बनने से जाली के कार्य में रुकावट आती है, इसलिए जाली को पानी के प्रवाह द्वारा अच्छी तरह से साफ करना चाहिए। इस कार्य के लिए तार के ब्रश का उपयोग नहीं करना चाहिए।

स्क्रीन फिल्टर

## सबमेन फलश वाल्व

मुख्य व उप मुख्य पाइप लाईन के आखरी सिरे पर फलश वाल्व लगाया जाता है। प्रत्येक सप्ताह फलश वाल्व खोलकर उसमें से 15–20 मिनट तक पानी को चलाया जाता है, इस कार्य से सबमेन का कचरा, मिट्टी के कण बाहर निकले जाते हैं।

सबमेन फलश वॉल्व

## लेटरल की सफाई

प्रत्येक 15 दिनों के बाद लेटरल के सिरे पर लगी हुई एंड केप खोलकर उसमें से 15 –20 मिनट तक पानी को चला देना चाहिए। इस कार्य से लेटरल का कचरा, मिट्टी के कण और पानी की जमी हुयी सफेद पर्त बाहर निकल जाती है। इससे ड्रिपर साफ और बूंद–बूंद सिंचाई प्रणाली सुव्यवस्थित रहती है।

## दोष व निराकरण

निम्नांकित तालिका में बूंद–बूंद सिंचाई प्रणाली में प्रायः होने वाले दोष, कारण और उनके निराकरण के बारे में जानकारी दी गई है।

| क्र.सं. | दोष | कारण | उपाय / निराकरण |
|---|---|---|---|
| 1. | सबमेन में टेकअप के पास लिकेज रहना। | टेकअप मे लगी हुई लेटरल मे तनाव और आने जाने के कारण धक्का लगना इससे टेमअप हिलता है। | टेकअप के पास लेटरल को ढीला रखना चाहिए। आदमी व जानवर के पैरो में लेटरल न अटके इसलिए लेटरल पर मिट्टी डाल देनी चाहिए। |
| 2. | जोईनर के पास लिकेज रहना। | जोईनर ठीक तरह से न बैठने के कारण। | जोईनर को ठीक तरह से पूरा फिट करें। |
| 3. | लेटरल का लीक होना। | निराई करते समय धक्का लगने से लेटरल का फटना अथवा चूहों या किसी जानवर का काटना। | खेत में काम सावधानी से करना चाहिए। कटी हुई लेटरल को ठीक तरह से काटकर जोईनर लगाना चाहिए। |
| 4. | मेनलाईन, सबमेन लेटरल इनमे पानी का खार जमा होना। | यह पानी में खार की मात्रा ज्यादा होने से और ड्रिप सिस्टम को फ्लश ना करने से होता है। | ड्रिप सिस्टम को फ्लश और रसायनिक अम्ल क्लोरीन प्रक्रिया द्वारा साफ करते हैं। |
| 5. | ड्रिपर से कम अथवा ज्यादा पानी निकलना या ड्रिपर बंद होना। | ड्रिप सिस्टम को फ्लश ना करना, पाईप लाईन टेकअप लिकेज रहने से मिट्टी के बारीक कण अंदर जाने से ड्रिपर बंद होते है। | ड्रिप सिस्टम को ज्यादा प्रेशर से फ्लश करना चाहिए। उपकरणों के अधिक प्रयाग मार्गदर्शिकानुसार ड्रिप सिस्टम की देखरेख व रखरखाव के बारे में कार्य करना चाहिए। |
| 6. | ऑन लाइन सिस्टम में ड्रिपर के नीचे पानी निकलना। | छिद्र ठीक तरह से न होना या ड्रिपर बार बार बाहर निकलने से छिद्र का आकार बड़ा होना। | ड्रिपर जगह पर ही साफ कर देना चाहिए और जो छेद बड़ा है उसे हॉल प्लग को बंद करके बाजू में छेद करके ड्रिपर को बैठते हैं। |
| 7. | प्रेशर गेज का कम या ज्यादा प्रेशर दिखाना। | मेनलाईन पर बायपास की व्यवस्था न होना ड्रिप सिस्टम को 1.25 के.जी. से कम प्रेशर से चलाना। | फिल्टर के पहले आसपास की व्यवस्था कर लेनी चाहिये। ड्रिप सिस्टम 1.25 के. जी. प्रेशर से चलना चाहिए। |
| 8. | एयर रिलीज वाल्व लीक होना। | ओरिंग खराब होगा या जगह से हिलना। | ओरिंग खराब होने पर तुरंत बदल देना चाहिए। ओरिंग जगह पर सही बैठाना चाहिये। |
| 9. | स्क्रीन फिल्टर में रेत या कचरा सेंड फिल्टर से आना। | सेंड फिल्टर का मशरूम जगह से हिलना या सफेद रेत का भराव कम होना। | मशरूम को जगह पर व्यवस्थित बैठना चाहिये। सेंड फिल्टर में सफेद रेत का भराव कायम रखना चाहिये। |

# मृदा परीक्षण क्यों व कैसे करें

**बसु देवी यादव[1], कैलाश चन्द यादव[2], शीतल यादव[1]**
विद्यावाचस्पति छात्र, मृदा विज्ञान विभाग[1]
[1]विद्यावाचस्पति छात्र, मृदा विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)
[2]वरिष्ठ अनुसन्धान अध्येता, आरकेवीवाई परियोजना, राजस्थान कृषि अनुसन्धान संस्थान, दुर्गापुरा (जयपुर)

मृदा की उत्पादन क्षमता उसकी उर्वरा शक्ति पर निर्भर करती है। पौधे अपने विकास एवं बढ़वार के लिए आवश्यक पोषक तत्व मृदा से प्राप्त करते हैं। पौधों को इन तत्वों की आवश्यकता फसल की किस्म तथा उससे प्राप्त की जाने वाली उपज के स्तर पर निर्भर करती है। उपज प्राप्ति का लक्ष्य जितना बड़ा होगा इन तत्वों की उतनी ही अधिक मात्रा की आवश्यकता है। मृदा में इन तत्वों की मात्रा सही अनुपात में होने पर ही अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। मृदा की उर्वदा शक्ति के प्रबंधन के लिए उपलब्ध पोषक तत्वों के प्रकार एवं मात्रा की जानकारी होना चाहिए। फसल विशेष के लिए उपलब्ध तत्वों की आवश्यक मात्रा का प्रबंध इस तरह से होना चाहिए कि मृदा की उर्वरा शक्ति का ह्रास न हो, साथ ही पौधों को सन्तुलित पोषण प्राप्त हो और उर्वरकों के असंतुलित प्रयोग से मृदा, पौधों एवं पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभावों को कम किया जा सके। इसी प्रकार सघन खेती में अधिक उपज देने वाली संकर किस्मों के लिए अधिक सिंचाई एवं उर्वरकों की आवश्यकता होने के कारण भूमि में उपलब्ध तत्वों की कमी हो जाती है। इसलिए मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों का पता लगाकर दीर्घकालीन परिणामों को ध्यान में रखते हुए मृदा के स्वास्थ्य तथा गुणों में सुधार करना वर्तमान समय की प्रमुख आवश्यकता हो गई है।

पश्चिमी राजस्थान में मृदा संसाधन का अत्यधिक दोहन भी मृदा की उर्वरा शक्ति व गुणात्मक क्षमता में ह्रास के रूप में प्रकट हो रहा है। पश्चिमी राजस्थान में पाई जाने वाली मृदाओं में जैविक कार्बन की मात्रा बहुत कम पाई जाती है इसके साथ ही लवणीयता एवं क्षारीयता की समस्या भी उत्पादन में कमी के प्रमुख कारक हैं। जब तक हमें मृदा की समस्याओं एवं उसमें उपलब्ध जैविक कार्बन एवं पोषक तत्वों के बारे में उचित जानकारी नहीं हो तब तक उसका उचित प्रबंधन नहीं किया जा सकता है।

## मृदा परीक्षण क्यों करें ?

1. मृदा की उर्वरा शक्ति के साथ ही मृदा में पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक उपलब्ध पोषक तत्वों की जानकारी ज्ञात करने के लिए।
2. मृदा गुणों के आधार पर अधिकतम उत्पादन के लिए उर्वरक एवं खाद की फसल विशेष के लिए उपयुक्त तथा लाभकारी मात्रा निर्धारित करने के लिए।
3. समस्याग्रस्त मृदा एवं उसके उपचार के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए।
4. दीर्घकालीन भूमि उपयोग पश्चात् मृदा के स्वास्थ्य में सुधार करने के लिए।
5. मृदा की उर्वरा क्षमता के आधार पर कृषि उत्पादन एवं अन्य उपयोगी योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए।

## मिट्टी का नमूना लेने का उद्देश्य

मिट्टी का नमूना लेने से पहले आपको यह जान लेना चाहिए कि आप किस उद्देश्य से मिट्टी का नमूना ले रहे हैं।

1. उर्वरा शक्ति या फसल के लिए उर्वरक की मात्रा की संस्तुति के लिए 0–15 से.मी. सतह से नमूना लें।
2. बाग या पेड़ लगाने के लिए भूमि से 2 मीटर की गहराई तक प्रोफाइल खोदकर मृदा सर्वेक्षण विशेषज्ञों की सलाह से मृदा परीक्षण हेतु विभिन्न संस्तरों के नमूने लें।
3. उसर भूमि के सुधार के लिए या तो मृदा सर्वेक्षण विशेषज्ञ की सहायता लें या ओगर की मदद से कम से कम 50–60 सेमी. तक 15–20 सेमी. के अंतराल से अलग–अलग संस्तरों से लगभग एक किलो का नमूना एकत्र करें।

## मृदा परीक्षण के लिए नमूना कब लें ?

यदि सघन कृषि की जा रही हो तो मृदा का नमूना फसल चक्र के पूरा होने पर प्रति वर्ष लेना चाहिए। अन्यथा दो से तीन वर्ष में एक बार मृदा परीक्षण करवाना पर्याप्त होता है। अप्रैल–मई व सितम्बर–अक्टूबर मृदा नमूने एकत्रित करने का उपयुक्त समय माना गया है। इसके अलावा पिछली फसल की कटाई के ठीक बाद या अगली फसल की बुवाई से पहले भी खेत में मृदा का नमूना ले सकते हैं।

## पहले मिट्टी परीक्षण के दूसरा परीक्षण कब?

- कम से कम 3 या 5 साल के अन्तराल पर अपनी भूमि की मृदा का परीक्षण एक बार अवश्य करवा लें। एक पूरी फसल–चक्र के बाद मृदा का परीक्षण हो जाना अच्छा है। हल्की या अलाभदायक भूमि की मृदा का परीक्षण आवश्यकता होता है।
- वर्ष में जब भी भूमि की स्थिति नमूने लेने योग्य हो, नमूने अवश्य एकत्रित कर लेना चाहिये। यह जरूरी नहीं कि मृदा का परीक्षण केवल फसल बोने के समय करवाया जाये।

## मृदा का नमूना कैसे लें ?

मृदा परीक्षण के लिए नमूना इस प्रकार लेना चाहिए कि वह उस क्षेत्र या खेत का प्रतिनिधित्व करे, इसके लिए कम से कम 500 ग्राम तक का नमूना अवश्य लेना चाहिए। नमूना लेने में सहायक मुख्यबिन्दु निम्नानुसार है –

### 1. मृदा नमूना लेने हेतू आवश्यक सामग्री

मिट्टी खोदने के औजार जैसे गैती, फावड़ा, खुरपी, मिट्टी का अधिक गहराई का नमूना लेने हेतू ओगर, नमूना एकत्र करने एवं मिलाने के लिए बाल्टी या तगारी, नमूना सुखाने के लिए कपड़ा या पुराना अखबार, नमूना रखने के लिए प्लास्टिक या कपड़े की थैली, बांधने के लिए सुतली, टेग एवं पेंसिल।

### 2. नमूना लेने हेतु स्थान का चुनाव

नमूना लेने से पूर्व खेत की ढाल, मिट्टी के रंग, गठन एवं फसल प्रबंधन आदि की जानकारी होनी चाहिए। खेत को मिट्टी के रंग, प्रकार, प्राकृतिक ढलान तथा गहराई के आधार पर विभिन्न टुकड़ों में विभाजित कर प्रत्येक क्षेत्र का अलग से नमूना लें।

### 3. नमूना लेने की विधि

1. खेत को एक समान क्षेत्र या पूर्व में बोई गई फसल के अनुसार विशिष्ट भूमि के आधार पर बांट कर अलग–अलग नमूना लेवें। मिट्टी की ऊपरी सतह से कार्बनिक पदार्थों जैसे टहनियाँ, सूखी पत्तियाँ, डंठल एवं घास आदि को हटाकर खेत के क्षेत्र के अनुसार 8–10 स्थानों का नमूना लेने हेतु चुनाव करें।
2. चयनित स्थानों पर 15–20 सेमी. की गहराई तक तथा बहुवर्षीय घास–फसलों के लिए 7–10 सेमी. गहराई तक का अंग्रजी के 'वी' आकार का गड्ढा बनायें फिर इसकी दीवार के साथ पूरी गहराई तक मिट्टी की एक इंच मोटी एक समान परत काट कर साफ बाल्टी या तगारी में एकत्रित कर लें। इसी प्रकार अन्य चयनित स्थानों से नमूने लेवें। विभिन्न स्थानों से एकित्रत मिट्टी को किसी साफ कपड़े या पुराने अखबार या छाया में डालकर सुखा लें।
3. सुखाने के बाद नमूनों के ढेलों को फोड़कर बारीक बनाकर खरपतवार, पौधों की जड़ें, कंकड़–पत्थर आदि को निकालकर फेंक दें। बची हुई मिट्टी को चार भागों में विभजित कर लें। इन चार भागों से चतुर्फल पद्धति द्वारा दो हिस्से रखें एवं दो अलग कर लें। उपरोक्त प्रक्रिया तब तक दोहराएं जब तक मिट्टी का नमूना आधा किग्रा. न रह जावें। मिट्टी को किसी साफ प्लास्टिक या कपड़े की थैली में भरकर उसमें इस मिट्टी के नमूने की पहचान के लिए एक सूचना पत्र रख देना चाहिए।
4. मृदा के नमूने को प्रयोगशाला भेजना

मिट्टी के नमूने के साथ भेजे जाने वाले सूचना पत्रक की दो प्रतियाँ तैयार करके एक प्रति थैले के अंदर रख कर तथा दूसरी थैली का मुंह बांधने के समय उसके साथ बांध देनी चाहिए। सूचना पत्र पर निम्नलिखित जानकारी देनी चाहिए।

(अ) कृषक का नाम

(ब) गांव का नाम

(स) पंचायत समिति/जिले का नाम

(द) नमूने की गहराई

(य) सिंचित/असिंचित बोई जाने वाली फसल का नाम

(ल) पिछली बोई गई फसल

(व) समस्याग्रस्त खेत हो तो भूमि सुधार हेतू किए गए प्रयास एवं अन्य कोई जानकारी हो तो लिखें। इस कपड़े की थैली या प्लास्टिक की थैली को ठीक तरीके से बांधकर निकटतम मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में स्वयं, डाक पार्सल द्वारा या कृषि प्रसार कार्यकर्ता के माध्यम से भेज देना चाहिए।

## मिट्टी का नमूना लेने में प्रमुख सावधानियाँ

1. सिंचाई की नाली, मेंड, पेड़ के नीचे से या खाद के ढेर के आसपास नमूने नहीं लेने चाहिए।
2. ज्यादा पोषक तत्व ग्रहण करने वाली फसलों वाले क्षेत्र से और जहां से अनाज की फसल ली गई हो, डंठल, ठूंठ वगैरह खेत में ही छोड़ दिए गए हों, वहां से लिए गए नमूनों को अलग रखना चाहिए।
3. खेत में जहां पर ज्यादा समय तक पानी भरा रहता है वहां से नमूना नहीं लेना चाहिए।
4. इकट्ठा किए गए नमूनों को न तो उर्वरकों की बोरियों के पास रखना चाहिए और न ही उर्वरकों की खाली बोरियों का उपयोग नमूने वाली मिट्टी को सुखाने के लिए करना चाहिए।
5. जलीय क्षरण या वायु क्षरण के कारण जिस क्षेत्र की ऊपरी मिट्टी की परत बह गई हो तो उसके नमूने अलग से लेने चाहिए।
6. यदि नमूना लेने वाला क्षेत्र बड़ा है तो नमूनों की संख्या उसी के अनुरूप बढ़ा देनी चाहिए।

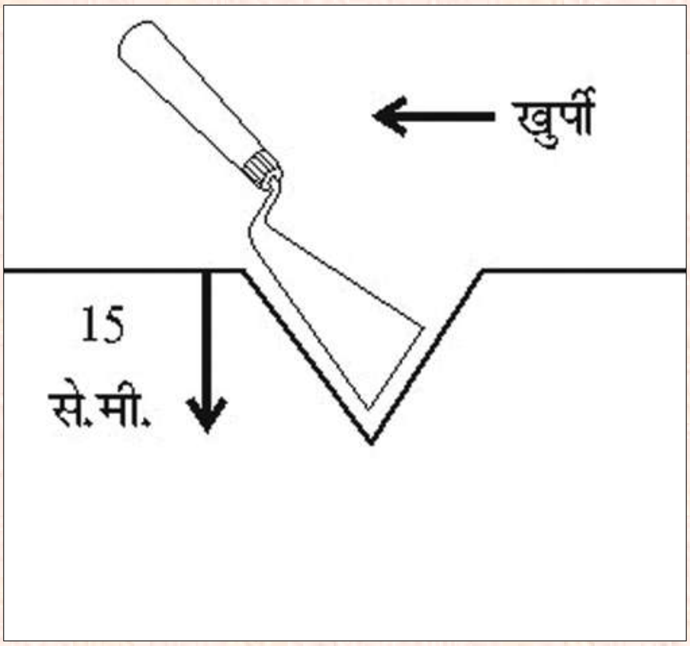


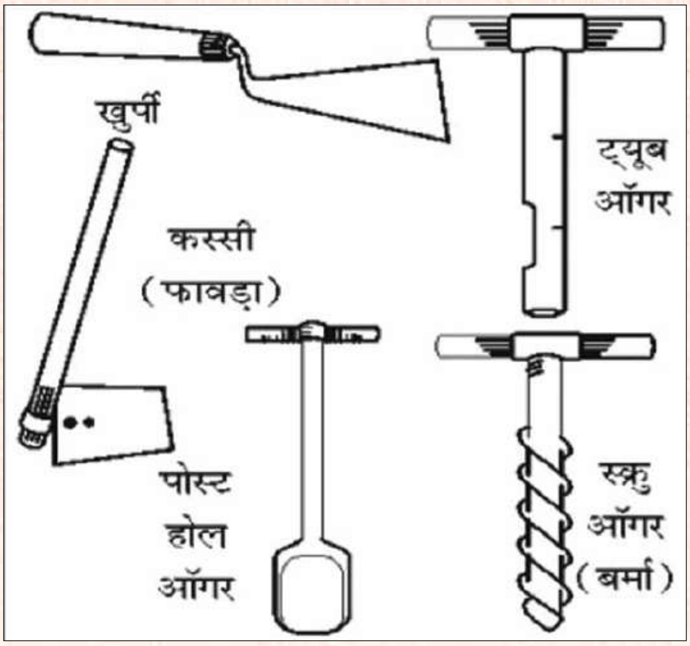


नमूना एकत्र करने के औजार

# कम्पोस्ट खाद कैसे बनाये

**सी. एल. मीणा[1], आर. सी. सॉंवल[2], दयानन्द[3], कु. रेखा रैगर[4]**
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी[1], केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर
वरिष्ठ अनुसंधान अध्येयता[2] (मृदा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र[3], आबूसर, स्नातकोतर छात्रा, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

कम्पोस्ट खाद को संश्लेषित गोबर की खाद, कृत्रिम खाद अथवा कूडा–करकट की खाद भी कहते है। कम्पोस्ट बनाना एक जैविक प्रकिया है जिसमें सूक्ष्म जीवों द्वारा कार्बनिक पदार्थो को सडाकर उनका कार्बन –नाइटोजन अनुपात घटाया जाता है। घर का कूडा–करकट, कचरा, मनुष्यों का मल और पशुओं का गोबर आदि के बैक्टिरिया व फफूंद द्वारा विशेष परिस्थितियों में विच्छेदन होने से यह बनती है। अच्छी तरह सडी हुई गहरे रंग की खाद को कम्पोस्ट कहते है। गोबर की खाद की तुलना में कम्पोस्ट पदार्थ और प्रमुख पोषक तत्वों की अधिक मात्रा के कारण मृदा उर्वरता बढ़ाने और उर्वरक बनाये रखने में अधिक मूल्यवान होती है।

कम्पोस्ट खाद में मुख्य रूप से प्रधान एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की प्रचुरता रहती है।

कम्पोस्ट खाद में उपस्थित पोषक तत्व प्रतिशत की मात्रा

| कम्पोस्ट के प्रकार | मात्रा प्रतिशत | | |
|---|---|---|---|
| | नत्रजन | फास्फोरस | पोटाश |
| शहरी | 1.4 | 1.0 | 1.4 |
| ग्रामीण | 0.8 | 0.3 | 0.7 |
| जंगली पतियों या धान के बुरादे या जल कुंभी | 0.75 से 1.65 | 0.5 | 2.75 |
| वर्मी कम्पोस्ट या बायो कम्पोस्ट | 2 से 3 | 1.5 से 2 | 1.5 से 2 |

## कम्पोस्ट खाद से लाभः

कम्पोस्ट खाद से मिलने वाले लाभ निम्न प्रकार से गिनाये जा सकते हैंः–

1. इनके प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती हैं।
2. भारी कठोर भूमि को नरम करती है जिससे भूमि में अधिक समय तक नमी बनी रहती है।
3. कम्पोस्ट खाद भूमि के तापक्रम को दोहरा संतुलित रखती है गर्मी में भूमि को ठण्ड़ी तथा सर्दी में गरम रखती है।
4. यह पौधों को हरा रखती है तथा पौधों के पूर्ण विकास में सहायक होती है।
5. काली भूमि में कम्पोस्ट के निरंतर प्रयोग से मृदा कण अलग करने की शक्ति प्रदान करती है।
6. हल्की दोमट मिट्टी में पानी अधिक समय तक ग्रहण करने की शक्ति प्रदान करती है।
7. इसके प्रयोग से भूमि की संरचना में सुधार होता है।
8. बाग बगीचों में फूल, पौधों तथा हरी दूब के विकास के लिए यह खाद विशेष लाभकारी है।
9. भूमि के कटाव को रोकने में भी कम्पोस्ट खाद सहायता प्रदान करती है।
10. असंतुलित रासायनिक खादों के प्रयोग से खराब हुई भूमि को भी यह सुधारती है।
11. कम्पोस्ट खाद वाली फसलों में खरपतवार कम होते है।
12. इसके प्रयोग से भूमि के सूक्ष्म तत्वों की मात्रा एवं कार्य क्षमता बढती है।
13. इसके प्रयोग से रासायनिक उर्वरक कम डालना पडता है जिससे किसान को आर्थिक लाभ होता है।
14. क्षारीय व लवणीय भूमि को भी सुधारती है।
15. दलहनी फसलों की जड़ों में पाये जाने वाले बैक्टीरिया की कियाशीलता बढती है तथा उनका विकास अधिक होता है।

## कम्पोस्ट खाद कैसे बनाये ?

कम्पोस्ट बनाने के लिये हमें जिन वस्तुओं की जरूरत होती है उन्हें पहले इकट्ठा करना होता है जैसेंः–

1. घास–फूस, वृक्षों के पते, खरपतवार, फसलों की कडबी व भूसा या पुआल, फसलों के अवशेष जैसे मूगंफली के छलके, कपास के डण्ठल, गन्ने की

पतियां आदि।

2. पशुओं का मल–मूत्र व बिछावन।
3. गौशालाओं की मिट्टी जो मूत्र से सनी हो साधारणतया खाद बनाने के लिये जहां 2 से 6 पशु हों वहां 15 फीट लम्बा, 6 फीट चौडा व 3 फीट गहरा गड्ढा तैयार करना चाहिये। गड्ढे का यह आकार पशुओं की संख्या के अनुसार बढाया जा सकता है। गड्ढा बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि गड्ढे की दीवारें ऊपर से बाहर की ओर फैली हों अर्थात पैंदे से उपरी हिस्सा लगभग 6 इंच निकला हो तथा पैंदे की ओर 6 इंच का ढ़ाल रहे। गड्ढों में रोजाना कूडा कचरा, गोबर आदि डालते रहें और थोडा उसे दबाते है। इसमें नमी का होना भी जरूरी है। अगर नमी नहीं होगी तो जो सडन–गलन की प्रक्रिया है, जिसे फरमेंटेशन कहते है, वो नही हो पायेगी या बहुत ही कम होगी। इससे खाद बनाने की प्रक्रिया में देरी होगी तथा उच्च कोटि की खाद नहीं बन पायेगी। इसके लिये पानी छिड़कते रहना चाहिये। पानी की मात्रा ज्यादा भी न हो। इन गड्ढों को जमीन की सतह से गुम्बजाकार में 1 फीट ऊचाई तक भरकर उसके उपर 2–3 इंच मोटी मिट्टी की परत डालकर अच्छी तरह से गोबर व चिकनी मिट्टी से लीप दें।

इन गड्ढों में अगर सुपरफास्फेट डाला जाये तो खाद में पौषक तत्वों की मात्रा बढ़ जायेगी तथा खाद समय पर बन जायेगी। इसके लिये कचरे गोबर की तहों में करीब 18 किलो सुपर फास्फेट प्रति टन के हिसाब से डालें। इसके साथ–साथ थोडा अमोनियम नाइटेट तहों में डाल सकें तो बहुत अच्छा रहेगा।

## खाद का प्रयोग कैसे करें ?

कम्पोस्ट खाद को खेतों में छिटक कर डालना चाहिये। खेत में खाद का समान वितरण करके मिट्टी में मिला देना चाहिये। यदि खाद की मात्रा कम है तो खडी फसल की कतारों के सहारे भी खाद को लाइनों में डाल सकते हैं। साधारणतया कम्पोस्ट खाद फसल बोने या पौधे लगााने से पहिले डालना लाभप्रद रहता है। फसल बुवाई से पूर्व जब हम खेत की तैयारी करते है उस समय कम्पोस्ट खाद डालना ही लाभदायक रहता है।

# किसानों की आय बढ़ोतरी में स्मार्टफोन का योगदान

**अनिता मीणा**
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

विकासशील देशो मे लोगों की आय का मुख्य स्रोत कृषि है। आजकल सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में कृषि को बढ़ावा मिल रहा है एवम कृषि के विकास में स्मार्टफोन और इसके अनुप्रयोग प्रभावी रूप से काम कर रहे है। स्मार्टफोन और इनके एप्लिकेशन महान नवाचारों के साथ किसानों को तनाव को कम करने, अच्छी कृषि पद्धतियों, मौसम, गुणवत्ता इनपुट, बाजारों की प्रवृत्ति आदि पर प्रासंगिक जानकारी प्राप्त करने में मदद करने के लिए उप्योगी है। सोशल मीडिया, वेब साइटों और अन्य अनुप्रयोगों के माध्यम से किसान अपने स्मार्टफोन का उपयोग करके अपने कौशल में सुधार कर सकते हैं एवम अनुभव साझा कर सकते हैं और अपने उत्पादों को ऑनलाइन बेच सकते हैं।

भारत की 70 प्रतिशत जनसख्या ग्रामीण परिवेश मे निवास करती है तथा कुल ग्रामीण जनसख्या की लगभग आधी आबादी कृषि कार्यों से आजीविका अजिर्त करती है इनमें से लगभग आधे कृषक पहले से ही मोबाइल फोन का उपयोग सचांर सेवाओ के लिए कर रहे हैं। भारतीय कृषि बाजार को प्रतिस्पधार्त्मक बनाने में मोबाइल फोन रूपी ये आधुनिक तकनीक पूर्ण सामर्थ्य रखती है। ग्रामीण मानयोजित सेवाएँ जितनी अधिक प्रतिस्पधार्त्मक होगी कृषि उतनी ही अधिक लाभदायक सिद्ध होगी। इसके लिए स्मार्टफोन का अधिकाधिक उपयोग करके दूर–दराज के गाँवों तक ज्ञान–विज्ञान, महत्त्वपूर्ण सरकारी निर्णय, लागत मूल्य, बाजार भाव, की जानकारी इत्यादि सूचनाएँ बिना विलम्ब के स्मार्टफोन के माध्यम से उपलब्ध कराई जा सकती हैं। यह समय की मांग है कि कैसे किसानों की अनिवार्य जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषि विज्ञान का प्रचार–प्रसार आधुनिक संसाधनों की सहायता से समयानुसार किया जाए। हम सब जानते हैं कि एक मोबाइल या स्मार्ट फोन खास आयु वर्ग के उपयोगकर्ताओं की सभी प्रकार की जरूरतों के लिए एक आवश्यक यंत्र है एवं भारत में मोबाइल प्रौद्योगिकी आम जनता के लिए बाहर तक पहुँचने का एक आधुनिक संचार बनता जा रहा है। इसलिए कृषक समुदाय के लिए एसएमएस, श्रव्य–दृश्य एवं वीडियो आधारित सेवाओं के माध्यम से स्मार्टफोन आधारित सेवाओं को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। स्मार्टफोन प्रौद्योगिकी कृषि उत्पादकता बढाने के लिए और देश की खादय् सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न आयामों में प्रयोग की जा सकती हैं। निणर्य लेने, कृषि प्रबंधन, कृषि उत्पादन, भू–स्थानिक अनुप्रयोगों मौसम पूवार्नुमान, विस्तार एवं वित्तीय सेवाएं और कृषि पूर्णरूप से मौसम प्रतिरोधी नहीं हो सकती। लेकिन निश्चित रूप से वेब आधारित सूचना या एसएमएस के माध्यम से मौसम की भविष्यवाणी कृषकों को उनके मोबाइल फोन पर उपलब्ध करवा कर एहतियाती उपाय अपनाने से प्रतिकूल मौसम का प्रभाव कम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कृषकों के हित में लिए गए महत्त्वपूर्ण निर्णय, आगतों की उपलब्धता, उनका मूल्य इत्यादि से भी किसानों को अवगत कराया जा सकता है। क्षेत्र विशेष के लिए अनुमोदित फसल, उनकी उन्नत प्रजातियाँ, बीज की उपलबधता, बुआई का समय, खाद एवं उर्वरक की मात्रा, फसल सुरक्षा के उपाय तथा उनके विपणन की सुविधा के विषय में समय समय पर स्मार्टफोन (एसएमएस एवं सीधे फोन संवाद) से किसानों को पूर्ण जानकारी मुहैया करवाई जा सकती है।

## मोबाइल–ऐप के उपयोग के पक्ष में किसानों का रुझान

विकासशील देशों में इन तकनीकों को और अधिक अनुकूल बनाने के लिए मोबाइल फोन और ऐप के उपयोग में वृद्धि हुई है। एक अध्ययन के अनुसार, दुनिया के 78 प्रतिशत परिवारों के पास वर्ष 2011 में एक मोबाइल फोन था, जिसमें कि वर्ष 2000 में 20 प्रतिशत की भारी वृद्धि थी। आज, मोबाइल ऐप और सेवाओं को दुनिया के विभिन्न हिस्सों में अलग अलग डिजाइन के साथ रिलीज किया जा रहा है। यूएसडीए की कृषि अनुसंधान सेवा (एआरएस) ने हाल ही में ''नॉन लेंडइन्फों'' 'और' ''लेंडकवर'' 'के रूप में जाने जाने वाले दो मोबाइल फोन ऐप्स को जारी किया है । ये एप गूगल प्ले स्टोर से डाउनलोड करने के लिए उपलब्ध हैं और वर्तमान में केवल एंड्रॉइड फोन पर उपयोग के लिए हैं। ये ऐप दुनिया भर के कृषि उत्पादकों को जोड़ते हैं और उन्हें भविष्य की पीढ़ियों के लिए अपने संसाधनों की रक्षा करते हुए अपनी भूमि की उत्पादकता

को अधिकतम करने के तरीकों पर साझा ज्ञान प्रदान करते हैं। इस तरह का साझा ज्ञान अधिक महत्वपूर्ण होता जा रहा है क्योंकि कृषि उत्पादकों को बढ़ती आबादी के भोजन, फाइबर और ईंधन की जरूरतों को पूरा करना है।

## मोबाइल ऐप और तकनीक किसानों की मदद कैसे करते हैं

किसानों को कृषि संबंधी जानकारी देना जैसे –क्लाउड कंप्यूटिंग, एकीकृत आईटी सिस्टम, ऑनलाइन शिक्षा और मोबाइल फोन के प्रसार की मदद से आसान बना दिया गया है। इस तरह की कनेक्टिविटी और सूचना प्रवाह का एक लाभ यह है कि यह किसानों को बेहतर भूमि प्रबंधन निर्णय लेने में मदद करता है। उदाहरण के लिए, यह रोपण और फसल के मौसम की बेहतर योजना के लिए मौसम की जानकारी के साथ मिलकर मिट्टी की स्थिति की निगरानी कर सकता है। इसी तरह, भौगोलिक सूचना प्रणाली का उपयोग कीटों और पशु रोगों पर पूर्व सूचनात्मक जानकारी प्रदान करने के लिए किया जा सकता है ताकि किसान जोखिम के स्तर के अनुसार प्रतिक्रिया कर सकें। खाद, बीज, और पानी के उपयोग का अनुकूलन मोबाइल और क्लाउड कंप्यूटिंग प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके भी किया जा सकता है। इससे किसानों को खपत कम करते हुए पैसे बचाने में मदद मिलती है

## मोबाइल ऐप और तकनीक के प्रमुख लाभ

### 1. बिचोलियों से मोल–भाव अधिक प्रभावी ढंग से होगा

बाजार की स्थिति का ज्ञान नहीं होने की दशा में किसान अपने उत्पादों को कम दाम पर बेचने के लिए बाध्य हो जाते हैं। मोबाइल प्रौद्योगिकी का बाजार की मांग और इस तरह के उच्च मूल्यों के बारे में जानकारी उपलब्ध करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। मोबाइल, बिचौलियों द्वारा शोषण और धोखाधड़ी की संभावना कम करके किसान, प्रदायक और खरीददार के बीच एक सीधा संवाद स्थापित करने का कार्य भी करता है। किसान भी मोबाइल आधारित सेवाओं को ऋण, सरकारी योजनाओं, फसल बीमा पोलिसियों की जानकारी हासिल करने के लिए उपयोग कर सकते हैं।

### 2. विभिन्न आगतों की उपयोग दक्षता बढ़ेगी

मोबाइल फोन को खेत मशीनीकरण सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। जैसे कि पानी के पंप और डीजल इंजनों को मोबाइल आधारित रिमोट कंट्रोल सिस्टम से नियंत्रित करके पानी की उपयोग दक्षता में सुधार लाया जा सकता है। साथ ही साथ यह तकनीक बेहतर सिंचाई का समय निर्धारण और समय की बचत करने में भी मदद करेगा। नैनो–गणेश तकनीकी ऐसी प्रणाली का एक उदाहरण है। बिजली की उपलब्धता अनुपलब्धता के स्थिति में नैनो–गणेश के माध्यम से किसान दूर–दराज रहकर भी सिंचाई का नियंत्रण कर सकते हैं। विस्तार सेवाओं को अपने मोबाइल फोन पर स्थानीय भाषा में किसानों को दिया जा सकता है। किसान किसी भी समय और संसाधनों को बर्बाद किये बगैर किसी भी जरूरत के लिए  कर सकते हैं।

### 3. लाभकारी फसलों के चुनाव से अधिक आय

यह सर्वविदित है कि मोबाइल फोन ग्रामीण जनता के बीच लगातार अपनी अधिक से अधिक पहुँच बना रहा है साथ ही साथ सूचनाएं पहुँचाने में एवं कृषकों द्वारा उनका उपयोग भी समय के साथ बढ़ रहा है। इसलिए भविष्य में मोबाइल फोन एवं संबंधित तकनीक का प्रयोग और अधिक प्रभावी हो जायेगा एवं छोटे किसान भी इसका फायदा उठा पाएंगें, जिससे कृषि को और अधिक फायदेमंद बनाने के अवसर किसानों को प्राप्त होंगे।

## भारतीय किसानों के लिए अब तक तैयार किए गए सर्वश्रेष्ठ 5 एंड्रॉइड ऐप

प्रस्तुत कृषि ऐप भारतीय किसानों और कृषि समुदाय के लिए बहुत उपयोगी हैं जो कृषि की नवीनतम तकनीक के साथ अद्यतित रहते हैं। यह ऐप भारतीय किसानों को सहायता प्रदान करते हैं और ग्रामीण लोगों और ग्रामीण विकास एवं सरकार के बीच अंतर को भरने में मदद करते हैं। ये कृषि के लिए उपयोग किए जाने वाले भारतीय किसानों के लिए एंड्रॉइड ऐप हैं जो नवीनतम बाजार दर, मौसम की भविष्यवाणी, सरकार की नीतियां और किसानों के लिए योजनाएं, नवीनतम प्रौद्योगिकी वीडियो, कृषि से संबंधित समाचार आदि प्रदान करते हैं। किसान सीधे कृषि विशेषज्ञों से प्रश्न पूछ सकते हैं । इन ऐप्स को अपनी क्वेरी को तुरंत हल करने के लिए भी वे नई तकनीक, सफल किसानों, मशीनरी आदि से संबंधित अपने वीडियो देख सकते हैं।

### 1. एग्री ऐप

एग्री ऐप किसानों द्वारा सबसे ज्यादा पसंद किए जाने वाले ऐप में से एक है। इसकी रेटिंग 5.3 में से 5 है। यह ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर किसान, खेती इनपुट /आउटपुट, सरकारी सेवा लाने वाला एक ऑनलाइन

फार्मिंग मार्केटप्लेस है। यह किसानों के लिए लिखित रूप में बातचीत (चैट) का विकल्प भी प्रदान करता है। किसान इस ऐप का उपयोग करके आसानी से कृषि के विशेषज्ञ के साथ चैट कर सकते हैं। यह मोबाइल एप्लिकेशन कृषि कार्य के विविध वीडियो प्रदान करता है। लगभग 0.1 मिलियन उपयोगकर्ताओं ने इस कृषि ऐप को डाउनलोड किया।

**2. इफ्को किसान ऐप**

इफ्को किसान ऐप किसान के लिए लगभग कृषि ऐप में से सबसे अच्छा ऐप है। यह उपयोग करने के लिए एक आसान इंटरफेस के साथ स्मृति के मामले में एक छोटा एंड्रॉइड ऐप है। यह एंड्रॉइड एप्लिकेशन नवीनतम कृषि सलाह, नवीनतम मंडी कीमतों और खेती के विभिन्न सुझावों के बारे में जानकारी प्रदान करता है। यह मौसम की भविष्यवाणी की जानकारी भी प्रदान करता है। यह 10 भारतीय भाषाओं में किसानों को कृषि अलर्ट भी प्रदान करता है। किसान इस ऐप का उपयोग करके आसानी से कृषि विशेषज्ञों की मदद ले सकते हैं। इस ऐप को लगभग 50 हजार यूजर्स ने डाउनलोड किया।

**3. एग्री मीडिया वीडियो ऐप**

एग्री मीडिया वीडियो ऐप वीडियो श्रेणी में किसानों के लिए सबसे लोकप्रिय मोबाइल ऐप में से एक है। इसकी रेटिंग 5 में से 4.8 है। यह एक ऑनलाइन मार्केटप्लेस है जो किसानों, कृषि इनपुट /आउटपुट, फार्मिंग रिटेल और पूर्ति सेवा को ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर लाता है। यह किसानों को संक्रमित फसलों की अपलोड छवियों के विकल्प के साथ कृषि से संबंधित अपनी समस्या को हल करने के लिए चैट सेवा भी प्रदान करता है। किसान आसानी से कृषि विशेषज्ञ से बातचीत कर सकते हैं और अपनी समस्याओं पर चर्चा कर सकते हैं। यह स्मार्टफोन एप्लिकेशन कृषि अभ्यास, नई प्रौद्योगिकियों, सफल किसानों, ग्रामीण विकास, कृषि से संबंधित विभिन्न वीडियो भी प्रदान करता है।

**4. फार्मबी – आरएमएल किसान**

यह कृषि एंड्रॉइड ऐप की सूची में अद्भुत है, जिसकी रेटिंग 4.3 में से 5 है। यह आसान उपयोगकर्ता इंटरफेस के साथ मेमोरी के मामले में एक छोटा ऐप है। यह 10 विभिन्न भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है। यह उपजाऊ कृषि सामग्री और फसल जीवन चक्र के हर चरण में जानकारी प्रदान करता है। एक किसान 450 फसल किस्मों, 1300 बाजारों, 3500 मौसम स्थानों में से चुन सकता है। यह उपयोगकर्ता के स्थान के आधार पर मंडी मूल्य और मौसम का पूर्वानुमान भी प्रदान करता है। इस ऐप को लगभग 0.5 मिलियन यूजर्स ने डाउनलोड किया है।

**5. किसान योजना**

किसान योजना एक और लोकप्रिय एंड्रॉइड कृषि ऐप है जो मुफ्त में उपलब्ध है। यह किसान को सभी सरकारी योजनाओं के बारे में जानकारी प्रदान करता है। यह ग्रामीण लोगों और सरकार के बीच सूचना के अंतर को कम करता है। यह विभिन्न राज्यों की योजनाओं को भी प्रदान करता है। यह मोबाइल एप्लिकेशन राज्य सरकार के कार्यालय तक पहुंचने के लिए किसान का समय और यात्रा व्यय भी बचाता है। इस ऐप को लगभग 50 हजार यूजर्स ने डाउनलोड किया है।

वर्तमान में भाकृअनुप के विभिन्न संस्थानों ने बहुत सारे कृषि से संबंधित एप बनाये हैं, जो कि सभी प्रकर की फसलों, फल व सब्जियों, पशुपालन, मत्स्यपालन, आदि से सम्बन्धित है और किसानो के लिए अत्यंत लाभकारी हैं।

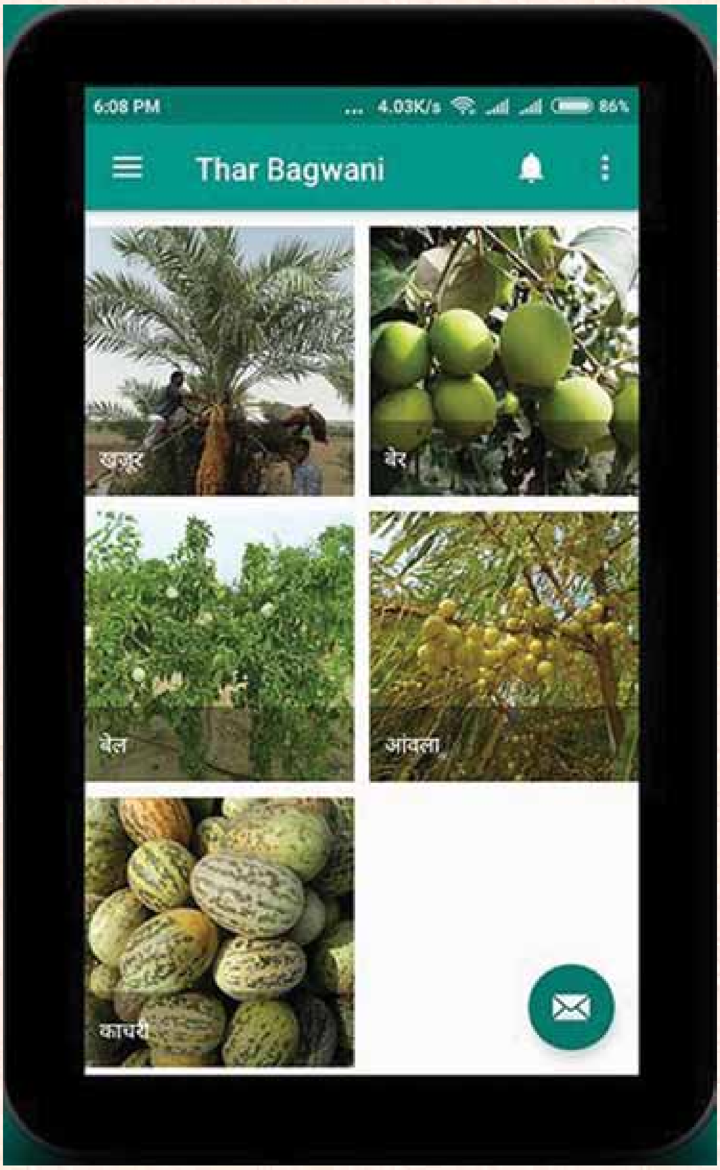
6:08 PM
4.03K/s
86%
Thar Bagwani
खजूर
बेर
बेल
आंवला
काचरी

# परिषद् गीत

जय-जय कृषि परिषद् भारत की,
सुखदप्रतीक हरित भारत की ।

कृषिधन पशुधन मानव जीवन,
दुग्ध मत्स्य फल यंत्र सुवर्धन।

वैज्ञानिक विधि नव तकनीकी,
पारिस्थितिकी का संरक्षण।

सस्य श्यामला छवि भारत की,
जय-जय कृषि परिषद् भारत की।

हिम प्रदेश से सागर तट तक,
मरु धरती से पूर्वोत्तर तक।

हर पथ पर है मित्र कृषक की,
शिक्षा शोध प्रसार सकल तक।

आशा स्वावलम्बित भारत की,
जय-जय कृषि परिषद् भारत की।
जय-जय कृषि परिषद् भारत की।

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर–334006 (राजस्थान)